पाठ्यग्रन्थ तथा आलोच्य ग्रन्थों के निर्माण किये जाने के सम्बन्ध में वैद्य महानुभावों की एक समिति की ओर से अभी तक कोई संतोष जनक कार्य की सूचना प्राप्त नहीं हुई।

परीक्षाओं की सुव्यवस्था करने के लिये परीक्षाओं के समय पर तत्तत्स्थानीय प्रतिष्ठित वैद्य नियुक्त किये गये तथा कहीं कहीं कार्यालय की ओर से भी अधिकारी वर्ग जांच के लिये भेजे गये।

सन् १६४६ वर्षीय परीक्षा आयुर्वेदाचार्य में ३३६ छात्र प्रविष्ट हुए जिन में से ६८ प्रथम खण्ड में ७० द्वितीय खण्ड में उत्तीर्ण हुए तथा १८ परिशिष्ट में रहे हैं।

आयुर्वेद विशारद परीक्षा में ५६६ छात्र प्रविष्ट हुए हैं जिनमें से १४३ प्रथम खण्ड में ६६ द्वितीय खण्ड में उत्तीर्ण हुए तथा ३३ परिशिष्ट में रहे हैं।

आयुर्वेद भिषक् परीक्षा में ६५३ छात्र प्रविष्ट हुए जिनमें से १६७ प्रथम खण्ड में १३६ द्वितीय खण्ड में उत्तीर्ण हुए तथा ३१ परिशिष्टमें रहेहैं

सन् १६५० वर्षीय परीक्षाओं के लिए आचार्य परीक्षा में ३३८ छात्र विशारद परीक्षा में ६४३, वैद्य विशारद परीक्षा में ११४ तथा भिषक् परीक्षा में ७६३ छात्र प्रविष्ट हो रहे हैं।

श्री उपेन्द्रनाथ दास
भूतपूर्व विद्यापीठ मन्त्री,
नि० भा० आ० विद्यापीठ, देहली।
१५-६-५१

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन

सैंतीसवां वार्षिक अधिवेशन-दिल्ली

तथा

तत्कालीन अन्य आयोजनों का

विवरण

१९, २०, २१ फरवरी १९५०

स्वागत समिति द्वारा प्रकाशित

आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी

अध्यक्ष—महासम्मेलन

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन
दिल्ली-अधिवेशन का कार्य-विवरण
निवेदन

"शतायुर्वै पुरुषः"-"जीवेम शरदः शतम्" सरीखी वैदिक ऋचाओं की सत्यता प्रमाणित करने के लिये ही चार वेदों के समान पांचवें वेद आयुर्वेद का भी प्रादुर्भाव हुआ है। मानव की आत्मिक किंवा आध्यात्मिक उन्नति के लिये भी जब यह अनुभव किया गया कि "नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः" अथवा "शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम्", तब मनके साथ तन की साधना के लिये आयुर्वेद विज्ञान का विकास होना स्वाभाविक था। रोग का आक्रमण होने पर उसका प्रतिरोध करने की अपेक्षा रोग का आक्रमण न हो, नीरोग रह कर मानव "अदीनाः स्याम शरदः शतम्" की महान आकांक्षा के साथ अपनी आयु का उपभोग करे,-यह आयुर्वेद विज्ञान का मूल लक्ष्य है। जैसे वेद के अध्ययन-अध्यापन का महान कार्य उस ब्राह्मण को सौंपा गया है, जिसके लिये धन-धान्य तो क्या, मान-सम्मान की इच्छा करना भी विष समान माना गया है, वैसे ही उसी ब्राह्मण को आयुर्वेद के संवर्धन और संरक्षण के दायित्व का भार भी सौंपा गया था। मानव समाज की आत्मिक, मानसिक एवं शारीरिक उन्नति एवं विकास के लिये ब्राह्मण-वर्ग ही जिम्मेवार था। निःस्वार्थभाव से मानव सेवा में अपने को निरत रखने की पुरातनतम आयुर्वेद-परम्परा को आज भी गांव-गांव में उन लोगों ने ही जीवित रखा हुआ है, जिनको भारतीय विज्ञान की अनुपम देन आयुर्वेद को भी सर्वथा विपरीत, अत्यन्त विषम और नितान्त असहाय स्थितियों में सुरक्षित रखने का श्रेय प्राप्त है। भारतीय कला और विज्ञान ही नहीं, किन्तु भारतीय विद्वत्ता तथा प्रतिभा को भी राज्य का जो आश्रय सदैव रहा है, उसकी एक झांकी राजा भोज और महाराज विक्रम के बाद मुगल काल के बादशाहों के शासन में भी यदा-कदा मिलती रही है। जिस ब्राह्मण को सांसारिक वासनाओं से सर्वथा रहित, स्वेच्छा से साधना-रूप में स्वीकार किये गये त्याग-तप के आदर्श को सामने रख कर आयुर्वेद की भी सेवा का दायित्व सौंपा गया था, उसके लिये राज्य की सहायता किंवा

आश्रय नितान्त रूप से आवश्यक था। वर्तमान युग में इस राज्याश्रय के नितांत अभाव में भी देश के सम्पन्न लोगों ने यत्र-तत्र-सर्वत्र धर्मार्थ औषधालयों का जाल फैला कर आयुर्वेद को जो प्रश्रय दिया है, वह समुद्र की तुलना में जल की बूंद होते हुये भी सराहनीय है। अंग्रेजी राज्य के डेढ़-दो सौ वर्षों में चूंकि भारतीय संस्कृति तथा भारतीय विज्ञान को विधिवत् नष्ट-भ्रष्ट करने का पूरा प्रयत्न किया गया, इसीलिये आयुर्वेद के लिये भी यह काल घोर अनिष्टकारी था। वैसे तो मुसलमानी-काल में भी राज्य से आयुर्वेद को कोई विशेष प्रोत्साहन मिलने के प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं फिर भी उसकी प्रगति और उन्नति में ऐसी कोई बाधा भी डाली गई दीख नहीं पड़ती। उस काल में आयुर्वेद चिकित्सा तथा व्याख्या के अनुपम ग्रन्थ अवश्य लिखे गये थे। आयुर्वेद के लिये राज्य की दृष्टि में वह उपेक्षा काल हो सकता है, किन्तु यह अंग्रेजी काल तो उसके लिये विनाश का ही काल था। मानो, आयुर्वेद विज्ञान के गले पर भी नंगी छुरी रख दी गई थी।

नई चेतना

इस प्रकार सैकड़ों-सहस्रों वर्षों की घोर उपेक्षा एवं महाविनाश के काल में भी जीवित रह जाने वाले आयुर्वेद विज्ञान के लिये स्वदेश के भाग्याकाश में स्वतन्त्रता के दिव्य प्रभात का प्रगट होना नयी आशा, नयी स्फूर्ति, नयी चेतना और नये जीवन का संचार करने वाला था। आयुर्वेद जगत में सहसा ही इससे नया चैतन्य उत्पन्न होगया। राजकोट में पैदा हुई दुई वड़ौदा में स्वतः ही मिट गई और राजधानी की इस नगरी में संगम का-सा अलौकिक दृश्य उपस्थित होगया। छोटी-बड़ी सब धारायें आकर महासागर में समा गईं और इस महासम्मेलन को आयुर्वेद महासागर का-सा अकल्पित स्वरूप प्राप्त होगया। सब विवाद स्वतः ही मिट गये। महासम्मेलन के लिये प्रेषित किये गये निमन्त्रण का स्वागत आयुर्वेद जगत में नये सन्देश के रूप में किया गया। उसका महान आयोजन नयी भावना और नयी कल्पना को मूर्त रूप देने के रूप में हुआ। उसमें दिये गये भाषणों में प्रगट किये गये विचार नवजीवन के प्रतीक माने गये। उसमें स्वीकृत किये गये प्रस्ताव नवीन संकल्प के सूचक समझे गये। निराशा, असन्तोष तथा मतभेद की छाया तक कहीं शेष न रह गयी। देश के कोने कोने से उत्साह की जो लहरें महासम्मेलन की ओर प्रवाहित हुई थीं, वे दिव्य संदेश तथा अद्भुत स्फूर्ति ले कर यहां से लौटीं और फिर सारे

आयुर्वेद-जगत में नयी चेतना का संचार करने के लिये व्याप्त गई। ऐसा होना सर्वथा स्वाभाविक था।

सहस्रों वर्षों की दासता से छुटकारा पाकर स्वतन्त्र भूमि, स्वतन्त्र आकाश और स्वतन्त्र वायु में विचरण करने का अवसर मिलना उसके लिये कितना बड़ा अहोभाग्य है, जिसका सांस पराधीनता के विषैले वातावरण में घुटा जा रहा था। आयुर्वेद के लिये भी देश की पराधीनता की लम्बी घड़ियां इसी प्रकार की थीं। अपने प्राणों पर खेल जाने वाली पन्ना धाई की तरह जिन आयुर्वेद-उपासकों ने आयुर्वेदरूपी राणा के जीवन की रक्षा की थी, उन्हें इस विषैले वातावरण से छुटकारा मिलने पर प्रसन्नता होनी स्वाभाविक थी। इसीलिये स्वतन्त्र भारत की राजधानी में महासम्मेलन के आयोजन के विचार को सभी ओर सराहा गया और बड़ौदा में हमारा विनीत निमन्त्रण अत्यन्त हर्ष एवं उत्साह के साथ स्वीकार किया गया। निस्सन्देह, इसमें हमारी कुछ स्वार्थ दृष्टि भी थी। वह यह कि देश के स्वतन्त्र होने के बाद से दिल्ली की नगरी को न केवल राजधानी बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, किन्तु यह एक ऐसा केन्द्र भी बन गया है, जहां देश के उत्कर्ष की छोटी बड़ी समस्त योजनायें बनाई जाती हैं और जिसकी ओर सारे देश की आशाभरी दृष्टि लगी रहती है। देश के न केवल राजनेताओं या राजनीतिज्ञों, किन्तु सभी क्षेत्रों में अगुआ बन कर काम करने वालों का भी यह केन्द्र है। ऐसे केन्द्र स्थान में निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन का किया जाना तब और भी अधिक आवश्यक था, जब यह अनुभव किया जा रहा था कि हमारी राष्ट्रीय सरकार भी आयुर्वेद के प्रति उस अज्ञान, भ्रान्ति, उपेक्षा तथा पक्षपात से ऊपर उठने में अपने को असमर्थ अनुभव कर रही थी, जिसका मायाजाल अंग्रेजी राज्य के दिनों में पूरी दृढ़ता से फैला दिया गया था। इस मायाजाल को छिन्न-भिन्न करने के लिये और अपनी राष्ट्रीय सरकार का पश्चिमी चिकित्सा-पद्धति के व्यामोह से उद्धार करने के लिये भी महासम्मेलन का आयोजन राजधानी में किया जाना अत्यन्त आवश्यक था। ऐसे सब विचारों से बड़ौदा में दिया गया हमारा निमन्त्रण एक मत से स्वीकार किया गया।

आयोजन की तैयारी

निमन्त्रण देना जितना सुगम था, महासम्मेलन का आयोजन करना उतना ही कठिन था। उसके लिये अनुकूलता पैदा करने में भी अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। यद्यपि इन्द्रप्रस्थीय आयुर्वेद सभा का संगठन बहुत पुराना है, उसको एक जीवित तथा जागृत संस्था कहा जा सकता है, दिल्ली तथा नई दिल्ली में सुप्रतिष्ठित वैद्य महानुभावों की संख्या भी कुछ कम

नहीं है, आयुर्वेद की शिक्षा-दीक्षा देने वाली दो पुरानी संस्थायें भी यहां यशस्वी कार्य कर रही हैं और धनी मानी सज्जनों में भी आयुर्वेद के पर्याप्त प्रेमी हैं, फिर भी महासम्मेलन के लिये अनुकूल वातावरण उतनी सुगमता से बन नहीं सका।

स्थानीय आयुर्वेदिक संस्थायें

इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की स्थापना हुये पचास वर्ष हो गये हैं। आयुर्वेद विज्ञान के लिये कार्य करने वाली इतनी पुरानी संस्थायें आयुर्वेद जगत में अधिक नहीं हैं। भारत सरकार द्वारा इसकी यथावत् रजिस्ट्री हो चुकी है। किसी प्रामाणिक संस्था के स्नातक वैद्य ही इसके सदस्य बन सकते हैं। इसीलिये इसके सभी सदस्य सुशिक्षित आयुर्वेद विशेषज्ञ वैद्य हैं। इस समय इसके सभासदों की संख्या १५० है। आयुर्वेद सम्बन्धी विषयों की चर्चा और मीमांसा इसके अधिवेशनों में प्रायः होती रहती है। इसीलिये यह एक सजग, सजीव और क्रियाशील संस्था है, जो निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन की प्रान्तीय शाखा सभा के रूप में राजधानी में आयुर्वेद के संरक्षण एवं संवर्धन का कार्य पूरी तत्परता के साथ कर रही है।

श्री बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय सम्भवतः समस्त भारत के आयुर्वेद विद्यालयों में प्राचीनतम संस्था है, जिसकी स्थापना सन् १८६४ में लाला बनवारीलाल जी कोतवाल की स्मृति में की गई थी। इसके संचालन के लिये एक ट्रस्ट बना दिया गया है। इसके वर्तमान प्रधानाध्यापक वैद्यराज पंडित मनोहरलालजी अखिल भारतीय प्रतिष्ठा के प्रमुख वैद्य हैं, जिनका स्थानीय वैद्यों में भी अपना विशिष्ट स्थान है। लाला ब्रिजमोहनलालजी कोतवाल इस विद्यालय को महाविद्यालय के रूप में परिणत हुआ देखना चाहते हैं। इस विषय में निखिल भारतवर्षीय विद्यापीठ के अधिकारियों के साथ विद्यालय के अधिकारी परामर्श कर रहे हैं। इस विद्यालय को लगभग एक हजार सुयोग्य वैद्य तैयार करने का श्रेय है, जो देश के कोने कोने में फैले हुये हैं। पिछले ही वर्षों में विद्यालय के स्नातकों ने अपने आचार्य वैद्यराज मनोहरलालजी का अभिनन्दन किया था और उनको एक अभिनन्दन ग्रन्थ भी भेंट किया था। कोतवाल परिवार के आयुर्वेद-प्रेम का परिचायक यह आयुर्वेद औषधालय भी है, जिसका निर्माण इस परिवार ने नई दिल्ली में किया है। हजारों रोगी उससे लाभ उठाते हैं।

आयुर्वेदिक यूनानी तिब्बिया कालेज भी दिल्ली की एक प्रसिद्ध शानदार संस्था है, जिसकी स्थापना आज से लगभग तीस वर्ष पहिले स्वर्गीय हकीम

अजमल खां साहब ने की थी। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इसका शिलान्यास किया था और उनके बलिदान के बाद इसके नाम के साथ उनका नाम भी जोड़ दिया गया है। हकीम साहब का दिल्ली में कभी अप्रतिम प्रभाव था। इसी कारण सभी ने इसके लिये खुले हाथों दान दिया। फिर भी इसमें अधिकतर रुपया हिन्दुओं का ही लगा है। शिक्षा के साथ साथ छात्रालय की भी इसमें व्यवस्था है। इस समय २५० विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। आयुर्वेद और यूनानी की उच्च शिक्षा के लिये इसकी स्थापना की गई थी। इसकी निजी सम्पत्ति पचास लाख रुपये की है। इसका प्रबन्ध सन्तोषजनक न होने से भारत सरकार इसको अपने हाथों में लेने का विचार कर रही है। इस प्रकार आयुर्वेद की दृष्टि से प्रमुख इस नगरी में भी महा-सम्मेलन के लिये अनुकूलता पैदा करने के लिये विशेष प्रयत्न करना पड़ा।

सफल अधिवेशन

श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा का असाधारण अधिवेशन जून मास में किया जा कर महासम्मेलन का राजधानी के उपयुक्त आयोजन करने के लिये यद्यपि एक उपसमिति बना दी गई थी, किन्तु स्वागत-समिति का संगठन अक्तूबर मास के पहिले सप्ताह में ही किया जा सका और तभी से स्थानीय समाचार-पत्रों में भी अधिवेशन की साधारण-सी चर्चा शुरू हुई। वस्तुतः महासम्मेलन के इस महत्त्वपूर्ण अधिवेशन की सारी तैयारी डेढ़ मास में ही की गई। एक बार तो बीच में इतनी निराशा-सी छा गई कि उपसमिति के संयोजक महोदय ने अपने कार्य से त्यागपत्र तक दे दिया। परन्तु निराशा के ये सारे बादल सहसा ही छिन्न-भिन्न होगये और कार्य इतने उत्साह एवं तीव्र गति से हुआ कि उसकी किसी को कल्पना तक नहीं थी। स्वागत समिति का जो भी कदम उठता था, वह निश्चित सफलता की ओर अग्रसर होने में सहायक होता था। अन्त में जो सफलता प्राप्त हुई, उस पर सभी गद्‌गद् हो गये। दिल्ली वालों के लिये यह सफलता उनकी भावना के अनुरूप होते हुये भी उनकी कल्पना से कहीं अधिक थी। बाहर से पधारने वाले महानुभाव भी इतनी बड़ी कल्पना लेकर नहीं पधारे थे। राजधानी और उसके वैद्यों, दोनों की ही लाज भगवान ने रख ली। दिल्ली वालों के लिये महासम्मेलन की सफलता स्फूर्ति का स्रोत सिद्ध हुई और बाहर वालों के लिये उसमें एक अमर सन्देश निहित था। कुल मिलाकर उसे आयुर्वेद को पुनर्जीवन देने के लिये किया गया दृढ़ संकल्प कहा जा सकता है। दूसरे दिन का वह दृश्य तो कभी भी भुलाया नहीं जा सकता, जो आयुर्वेद विश्व-

विद्यालय की स्थापना के सभापति द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव के स्वीकार किये जाने के अवसर पर दीख पड़ा। उपस्थित वैद्यों ने अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार छोटी-बड़ी धनराशियां दान देने की घोषणा करते हुये उस प्रस्ताव का जब सक्रिय समर्थन करना शुरू किया, तब तो ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे कि विश्वविद्यालय की स्थापना करने के लिये आपस में होड़ ही लग गई हो। पांच-पांच, दस-दस रुपये से लेकर सैकड़ों-हजारों की घोषणा की गई। ४० हजार रुपये की घोषणा श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा दिल्ली की ओर से की गई। कुल ८२ हजार का चन्दा तत्काल मण्डप में ही लिख लिया गया। अन्य प्रस्ताव भी उत्साहवर्धक और भविष्य के लिये स्पष्ट कार्यक्रम के द्योतक थे। सर्वसत्तासम्पन्न गणतन्त्र राज्य की स्थापना पर हर्ष प्रगट करते हुये राष्ट्रपति देशरत्न डाक्टर राजेन्द्रप्रसादजी से यह आशा प्रगट की गई कि वे आयुर्वेद की उस षडयन्त्र से रक्षा कर उसको राष्ट्रीय-चिकित्सा के पद पर प्रतिष्ठित करेंगे, जो उसको नष्ट करने के लिये रचा जा रहा है। आयुर्वेद की सर्वजनसुलभ राष्ट्रव्यापी चिकित्सा पद्धति को पुनर्जीवन देने के लिये सरकार से अनुरोध किया गया और उसके सम्मुख पंचसूत्री योजना भी स्पष्ट रूप में उपस्थित की गई। अनुसन्धान-कार्य, ग्रन्थ-निर्माण तथा विद्वत्परिषद् की योजना की ओर भी सुनिश्चित कदम बढ़ाया गया। आयुर्वेद-विरोधी षडयन्त्र को स्वदेशाभिमान-शून्य बताते हुये उसका तीव्र विरोध किया गया। आयुर्वेद को लोकप्रिय बनाने के लिये वैद्यों का आह्वान किया गया। निकृष्ट और पोषण-तत्वरहित खाद्यसामग्री के कारण राष्ट्र के स्वास्थ्य का जो ह्रास हो रहा है, उसके लिये चिन्ता प्रगट की गई और सरकार के सम्मुख क्रियात्मक सुझाव उपस्थित किये गये। नकली एवं बनावटी वस्तुओं पर रोक लगाने की ओर भी सरकार का ध्यान खींचा गया। दिल्ली की महान संस्था आयुर्वेदिक यूनानी तिब्बिया कालेज की सुव्यवस्था में सरकार का हाथ बटाने के लिये एक उपसमिति की योजना की गई। आयुर्वेद के प्रकाशन कार्य को बढ़ाने के लिये निजी मुद्रणालय की स्थापना के लिये भी एक उपसमिति बनाई गई। सभा-समितियों तथा सम्मेलनों के चुनाव प्रायः दलबन्दी का अखाड़ा बन जाया करते हैं; किन्तु इस अधिवेशन में यह अत्यन्त विवादास्पद कार्य भी एक प्रस्ताव द्वारा सभापति को सौंप दिया गया।

किसी भी सभा, समिति किंवा सम्मेलन की सफलता की कसौटी उसके प्रस्ताव ही कहे जा सकते हैं। इस कसौटी पर महासम्मेलन कितना पूरा उतरता है,—यह ऊपर दिये गये विवरण से स्वतः ही प्रगट है। वैद्यों को अपने कर्तव्य का भान कराकर उस सरकार के सामने भी स्पष्ट कार्यक्रम

उपस्थित कर दिया गया, जो जनता की अपनी है और जिससे जनता को अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति की आशा रखने का सम्पूर्ण अधिकार है। इस प्रकार अपने उद्देश्य की पूर्ति में महासम्मेलन सर्वथा सफल हुआ।

आयुर्वेद प्रदर्शिनी

महासम्मेलन के अङ्ग-उपाङ्ग के रूप में होने वाले अन्य सब आयोजनों में भी आशातीत सफलता निस्सन्देह प्राप्त हुई। आयुर्वेद-सम्बन्धी विशाल प्रदर्शिनी जिस भव्य रूप में हुई, उसकी प्रशंसा हर किसी के मुंह पर थी। अनेक वैद्यों के लिये भी उसमें पर्याप्त नवीनता थी, जिससे वे नवीन ज्ञान एवं अनुभव भी प्राप्त कर सकते थे। अत्यन्त दुर्लभ जड़ी-बूटियों तथा वनस्पतियों, शास्त्रोक्त सिद्ध औषधियों और उनके निर्माण में काम आने वाली छोटी-बड़ी मशीनों का संग्रह एवं प्रदर्शन बहुत सावधानी से किया गया था। भिन्न-भिन्न आकार-प्रकार के चालीस तरह के खरल भी देखने के योग्य थे। स्थान-स्थान की अनेक रसायनशालायें अपने सफल प्रयोगों का प्रदर्शन कर रही थीं। भस्मों के साथ साथ इंजेक्शनों के आविष्कार का भी प्रदर्शन किया जा रहा था। त्रिदोष विज्ञान, पंच महाभूत और स्वास्थ्यरक्षा आदि के शिक्षाप्रद चार्ट भी प्रदर्शनी की शोभा बढ़ा रहे थे। दर्शकों को सहसा अपनी ओर आकर्षित कर लेने वाला यन्त्र श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन-कलकत्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया था, जो शरीर में त्रिदोष की वृद्धि तथा उसके शमन की परीक्षा में काम आने वाला है। प्रदर्शनी के ठीक मध्य में भगवान धन्वन्तरि की मनुष्याकार प्रतिमा की स्थापना की गई थी, जिससे उसका रूप अत्यन्त आकर्षक हो गया था। यह आयोजन अपने उद्देश्य में पूरी तरह सफल हुआ और दर्शकों की आयुर्वेद में अभिरुचि बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ।

अन्य आयोजन

आयुर्वेद विद्यापीठ और शास्त्र चर्चा परिषद् के अधिवेशन भी उत्साह के साथ सम्पन्न हुये। आयुर्वेद विद्यापीठ के स्वनामधन्य अध्यक्ष रतनगढ़ के श्री हनुमान आयुर्वेद विद्यालय के आचार्य पण्डित मणिरामजी शर्मा का भाषण संस्कृत में हुआ और लगभग अढ़ाई घण्टा तक उसका कार्य चला। शास्त्र-चर्चा परिषद् में इस वर्ष त्रिदोषवाद तथा कीटाणुवाद का समालोचनात्मक विवेचन किया गया। विषय अत्यन्त गम्भीर होते हुये भी चर्चा बहुत शिक्षाप्रद रही। अनेक प्रतिष्ठित वैद्यों ने इसमें भाग लिया।

आयुर्वेद छात्रों की वाक्-प्रतियोगिता भी अच्छी सफल रही। प्रतियोगिता का विषय था कि "स्वतन्त्र भारत में राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति का स्थान आयुर्वेद को मिलना चाहिये कि एलोपैथी को?" छात्र वेदप्रकाश और दुर्गाप्रसाद को स्वर्णपदक और रजतपदक दिये गये।

आयुर्वेद अनुसन्धान समिति की भी बैठक हुई, जिसका उद्घाटन डा० जी० सी० पण्डित ने किया और अध्यक्ष-पद से केप्टन श्री निवासमूर्ति ने आयुर्वेद में अनुसन्धान के सम्बन्ध में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाषण दिया। उसके बाद रोचक एवं उपयोगी चर्चा भी हुई, जिसमें अनेकों वैद्यों ने उत्साह से भाग लिया।

श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा ने भी इस अवसर से पूरा लाभ उठाया। उसकी ओर से दो आयोजन किये गये। पहिला आयोजन २० फरवरी की शाम को दिल्ली के चीफ कमिश्नर की अध्यक्षता में किया गया, जिसमें वैद्यरत्न पं० शिवशर्मा जी, शहर म्यूनिस्पैलिटी के अध्यक्ष डा० युद्धवीरसिंह, दिल्ली से भारतीय पार्लमेण्ट के सदस्य लाला देशबन्धु गुप्ता और कॉंग्रेस महासमिति के मन्त्री श्री शंकररावदेव आदि के आयुर्वेद के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण भाषण हुये। २१ फरवरी की शाम को महासम्मेलन के गत वर्ष के अध्यक्ष और दिल्ली के प्रमुख वयोवृद्ध वैद्य कविराज हरिरंजन मजूमदार का इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की ओर से विशेष अभिनन्दन किया गया और आपको मानपत्र भेंट किया गया। अनेक सज्जनों ने आपके सम्मान में कवितायें पढ़ीं और आपके प्रति श्रद्धाञ्जलियाँ अर्पित कीं।

आयुर्वेदीय पत्रकार सम्मेलन का आयोजन आयुर्वेद पंचानन श्री जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल के सभापतित्व में किया गया, जिसमें अखिल भारतीय आयुर्वेद पत्रकार संघ की स्थापना की गई और आयुर्वेद के उत्थान के लिये पत्रकारों से अपना कर्तव्य और उत्तरदायित्व निभाने के लिये विशेष अनुरोध किया गया।

आयुर्वेद के विद्वानों का सम्मान भी इस अवसर पर किया गया। आयुर्वेद पंचानन श्री जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल को उनके ग्रन्थ "शिरोरोग विज्ञान" के लिये ५००) पारितोषिक स्वरूप भेंट किये गये, जो कि उन्होंने उसी समय महासम्मेलन के संस्थापक स्वर्गीय श्री शंकरदा पदे स्मारक कोष को दान कर दिये। श्री नाजर आयुर्वेद महाविद्यालय सूरत के प्रिंसिपल श्री रणछोड़राय देसाई को उनके ग्रन्थ 'शरीर क्रिया विज्ञान' के लिये स्वर्णपदक श्री शंकरदा शास्त्री स्मारक समिति की ओर से दिया गया। श्री राय

आयुर्वेद मार्तण्ड श्री यादवजी त्रिकमजी के सुयोग्य शिष्य और विद्वान लेखक हैं। 'आयुर्वेद पर नयी खोज' नामक पुस्तक के लेखक को भी स्वर्ण-पदक से सम्मानित किया गया।

महासम्मेलन पर पधारे हुये वैद्य महानुभावों के सम्मान में अनेक छोटे-मोटे आयोजन किये गये। एक मनोहर आयोजन श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड की ओर से किया गया था। इस स्वागत-समारोह के अवसर पर उपस्थित वैद्यों को 'सचित्र आयुर्वेद' मासिक का "आयुर्वेद और सरकार" विशेषाङ्क भेंट किया गया। श्री वैद्य रामनारायणजी शास्त्री आगत सज्जनों का सम्मान करने के लिये स्वयं उपस्थित थे। एक छोटा-सा, किन्तु अत्यन्त महत्वपूर्ण आयोजन हिन्दी पत्रकारों की ओर से दैनिक 'अमर भारत' कार्यालय में भी किया गया था, जिसमें दिल्ली के हिन्दी समाचार पत्रों के सम्पादकीय विभाग में कार्य करने वाले पत्रकार बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित थे। वैद्य भी काफी संख्या में पधारे थे। फलाहार से सबका स्वागत-सत्कार किया गया। 'वीर अर्जुन' के श्रीकृष्णचन्द्र विद्यालंकार ने पत्रकारों का और बम्बई के वैद्य श्री सीतारामजी मिश्र ने वैद्यों का परस्पर में परिचय कराया। उपस्थित वैद्यों में वैद्यराज वयोवृद्ध प० गोवर्धनजी छांगाणी, विद्यापीठ सम्मेलन के अध्यक्ष वैद्य मणिरामजी शर्मा, कविराज पं० हरिदत्तजी जोशी काव्य-सांख्य-स्मृति तीर्थ, वैद्यराज प० कन्हैय्यालालजी भेड़ा-बम्बई, पं० सीतारामजी मिश्र बम्बई, श्री हनुमानप्रसादजी शास्त्री बीकानेर, प० वैद्यनाथजी शर्मा बगड़, वैद्य जयदयालजी सरदारशहर, वैद्य भागीरथजी शर्मा उदयपुर, वैद्य रामनिवासजी मलसीसर, वैद्य सत्यदेवजी बगड़, आयुर्वेद-सम्पादक श्री शिवकरणजी शर्मा छांगाणी, वैद्य केदारनाथजी शर्मा पुरोहित, वैद्य खेमराजजी शर्मा छाँगाणी आर्यी, वैद्य लक्ष्मीनारायणजी, वैद्य देवकीनन्दनजी शर्मा और श्री लक्ष्मीकान्त जी शर्मा के नाम उल्लेखनीय हैं। श्री गोवर्धनजी शर्मा छांगाणी, श्री हरिदत्त जी जोशी, श्री मणिरामजी शर्मा, श्री कन्हैय्यालालजी भेड़ा, वैद्य हनुमानप्रसाद जी शास्त्री, श्री सीतारामजी मिश्र और श्री वैद्यनाथजी शर्मा के आयुर्वेद को राष्ट्रीय चिकित्सा प्रणाली के आसन पर प्रतिष्ठित करने और उसमें पत्रकारों के सहयोग की आवश्यकता पर भाषण हुये। श्री छांगाणीजी ने वैद्यों और पत्रकारों को छोटे-बड़े भाई बताया, तो श्री जोशी ने दोनों को व्यास और आत्रेय सम्प्रदाय का प्रतिनिधि बताते हुये कहा कि पहिले का काम लोगों को मानसिक दृष्टि से स्वस्थ रखना है, तो दूसरे का काम उनके शारीरिक स्वास्थ्य की व्यवस्था करना है। दोनों का संगम राष्ट्र की सेवा के लिये कितना सहायक हो सकता है? भारतीय राष्ट्र का भावी निर्माण करके इसको जगद्गुरु के उच्चतम आसन

पर प्रतिष्ठित करना दोनों का ही काम है, क्योंकि दोनों भारतीय संस्कृति के दो आवश्यक अंगों के संरक्षक हैं। उपेक्षा और अभाव के हजारों वर्षों में भूखे और तिरस्कृत हो कर भी ब्राम्हणों ने आयुर्वेदकी रक्षा इसी आशा से की थी कि राष्ट्र के स्वतन्त्र होने पर राष्ट्रीय सरकार इस राष्ट्रीय निधि को संभाल लेगी। लेकिन, आज अपनी सरकार द्वारा ऋषियों की सतत साधना से प्राप्त इस ज्ञान का अतिक्रमण किया जाना कितने खेद की बात है? इस खेदजनक परिस्थिति का प्रतिकार पत्रकारों को ही करना है। आयुर्वेद को एलोपैथी से श्रेष्ठ, सुलभ और सस्ती बताते हुये यह मांग की गई कि सरकार को एलोपैथी के व्यामोह से ऊपर उठना चाहिये। यह आयोजन परिचय और प्रचार दोनों दृष्टियों से बहुत ही सफल रहा। वैद्यों और पत्रकारों दोनों ने इस पर परम सन्तोष प्रगट किया।

स्वागत समिति का कार्य

इस प्रकार महासम्मेलन के तीनों दिन की हर घड़ी का सदुपयोग किया गया और इतने अधिक आयोजन हुये कि बाहर से पधारने वालों के तीनों दिन अत्यन्त व्यग्र कार्यक्रम में बीते। दिल्ली के ऐतिहासिक स्थानों का उनको भ्रमण कराने का स्वागत समिति का विचार कार्य में परिणत न हो सका।

स्वागत समिति को इस प्रकार अपने प्रयत्नों में कल्पना से भी अधिक सफलता प्राप्त हुई। सारी रुकावटें और विघ्न-बाधायें स्वतः ही दूर होती गईं। समय समय पर उपस्थित होने वाली निराशा की घटा शरतकालीन बादलों की तरह स्वयं छिन्न-भिन्न होती गईं। जैसे-जैसे महासम्मेलन का समय समीप आता गया, स्वागत समिति के सदस्यों में उत्साह उत्तरोत्तर बढ़ता चला गया। सबसे पहिले श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा ने ग्यारह सदस्यों की एक महासम्मेलन उपसमिति का गठन किया। उपसमिति का कार्य आशा-निराशा के वातावरण में होता रहा। उपसमिति की पहिली बैठक में १७ जुलाई को ग्यारह सदस्य और सम्मिलित किये गये। निश्चय किया गया कि स्वागत समिति की सदस्यता का शुल्क वैद्यों के लिये ११) और आयुर्वेद प्रेमियों के लिये २५) रखा जाय। मान्य सदस्यों के लिये ५१), विशिष्ट सदस्यों के लिये १०१), आश्रयदाताओं के लिये २५१), संरक्षकों के लिये ५००) और माननीय संरक्षकों के लिये १०००) शुल्क नियत किया गया। यह भी निश्चय किया गया कि स्वागत समिति के पदाधिकारी बनने के लिये वैद्येतरों के लिये स्वागत समिति का सदस्य होना अनिवार्य न होगा। ६ सितम्बर को स्वागत समिति के

पदाधिकारियों का चुनाव किया गया। पदाधिकारियों की सूची अन्यत्र दी गई है। स्वागत समिति का सारा कार्य आठ विभागों में बांट कर अलग अलग आठ उपसमितियां भी बना दी गई। प्रदर्शनी, निवास, मण्डप, भोजन, यातायात, स्वयंसेवक, शास्त्र चर्चा, और अर्थ ये आठ विभाग थे। सभी उपसमितियों और महासम्मेलन-उपसमिति के अध्यक्षों तथा मन्त्रियों की सम्मिलित समिति को स्वागत समिति की कार्यकारिणी समिति का रूप दे दिया गया। स्वागत समिति का अस्थायी कार्यालय शहर के मध्य भाग हौज काजी में मजूमदार फार्मेसी में रखा गया। इस प्रकार स्वागत समिति के रूप और संगठन को पूर्ण करके अधिवेशन की तैयारी नियमित रूप से आरम्भ की गई। सभी ने अपना अपना काम पूरे उत्साह के साथ प्रारम्भ कर दिया।

कार्यकारिणी ने बड़ी तत्परता के साथ सारे कार्य का संचालन किया। प्रायः प्रति सप्ताह उसकी अथवा विभागीय मन्त्रियों की बैठकें होती थीं। गत कार्य का सिंहावलोकन करके भावी कार्य की रूपरेखा निश्चित की जाती और उसको पूरा करने का संकल्प किया जाता। आवश्यकता के अनुसार समय समय पर अन्य उपसमितियां भी गठित की गई और विविध उपसमितियों में अन्य सज्जनों का सहयोग भी प्राप्त किया गया। आतिथ्य सत्कार समिति, पताकारोहण समिति, धन्वन्तरी महायज्ञ उपसमिति, निबन्ध परिषद् तथा छात्र प्रतियोगिता निर्णायक उपसमिति आदि का गठन कार्यकारिणी द्वारा ही किया गया था। ५ जनवरी को मन्त्रियों की एक सभा में अधिवेशन के लिये बारह हजार का बजट स्वीकार किया गया और प्रतिनिधियों के भोजन की व्यवस्था भी सर्वथा निश्शुल्क करने और दर्शकों का ३) शुल्क रख कर उनके भोजन की व्यवस्था भी निश्शुल्क करने का निश्चय किया गया। १६ जनवरी को अन्तिम रूप से अधिवेशन की रूपरेखा बना ली गई और कार्यक्रम का सारा ढाँचा खड़ा कर लिया गया। ६ फरवरी को महासम्मेलन का समस्त कार्य गान्धी ग्राउण्ड में करने का निर्णय किया गया। अक्टूबर १९४९ में कार्यकारिणी का गठन होने के बाद उसकी पहिली बैठक १८ अक्टूबर को हुई। उसके बाद नवम्बर में उसकी दो, दिसम्बर में एक, जनवरी १९५० में दो और फरवरी के आधे मास में चार बैठकें हुई। केवल एक बैठक नवम्बर मास के अन्तिम सप्ताह में पर्याप्त सदस्यों के अभाव में स्थगित करनी पड़ी। उससे पैदा हुई निराशा का असर इतना अधिक रहा कि उसके बाद की बैठक ३१ दिसम्बर को हुई। वास्तव में अधिवेशन की यथार्थ तय्यारी का कार्य तो ३१ दिसम्बर से ही शुरू हुआ समझना चाहिये। केवल डेढ़ मास में ही सारा कार्य सम्पन्न किया गया।

उपसमितियों का कार्य

निस्सन्देह, इसका सारा श्रेय भिन्न-भिन्न विभागों की उपसमितियों को है। उनके कार्य का विस्तृत विवरण यथास्थान दिया गया है। तथापि हम यहां अर्थसमिति के सराहनीय कार्य का उल्लेख किये बिना नहीं रह सकते। सारा आधार धन की व्यवस्था पर ही था। अर्थ उपसमिति की तत्परता से धन की जो व्यवस्था हुई, उससे सभी समितियों की चिन्ता का भार हलका हो गया और उन्होंने इसी कारण दिल खोल कर पूरे उत्साह से अपना अपना कार्य किया। आनुमानिक व्यय बारह हजार कूता गया था; किन्तु वास्तविक व्यय सोलह हजार पर पहुंच गया। फिर भी किसी प्रकार की कोई चिन्ता नहीं करनी पड़ी और किसी भी कार्य एवं विभाग में किसी भी प्रकार की कोई कमी अथवा कठिनाई अनुभव नहीं की गई। खुला खर्च करके भी स्वागत समिति को साढ़े छः हजार से अधिक की बचत हुई। इसका अधिकांश श्रेय अर्थसमिति को ही है। तीनों प्रकार की संरक्षकता शुल्क में लगभग पौने बारह हजार रुपया इकट्ठा हुआ और तीनों प्रकार की सदस्यता शुल्क में लगभग सवा आठ हजार। बीस हजार के लगभग तो इस प्रकार शुल्क में जमा हो गया। पौने तीन हजार के लगभग प्रतिनिधि, दर्शक और प्रदर्शनी की आय हुई। अर्थ समिति ने जिस तत्परता से कार्य किया, उसका पता कार्यकारिणी के १२ जनवरी के उस प्रस्ताव से लगता है, जिसमें यह निश्चय किया गया था कि प्रत्येक सदस्य को कार्यकारिणी द्वारा निश्चित किया गया अपना समय अर्थ संग्रह के लिये अवश्य देना ही होगा। इसी प्रकार स्वागत समिति का सारा ही कार्य प्रायः निश्चित योजना और दृढ़ संकल्प के साथ किया गया। इसीलिये उसमें आशातीत सफलता भी प्राप्त हुई।

स्वागत समिति को देहली की आयुर्वेदप्रेमी जनता और धनी-मानी सेठ-साहूकारों का जो सहयोग एवं सहायता प्राप्त हुई, वह आशातीत और कल्पनातीत थी। सभी वर्गों ने सहायता और सहयोग का हाथ बटा कर स्वागत समिति के कार्य को बहुत हलका बना दिया। विद्यापीठ सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष सेठ घुन्नीलालजी जयपुरिया और प्रदर्शनी के स्वागताध्यक्ष बाबू राजेन्द्रकुमारजी जैन ने प्रतिनिधियों के एक-एक समय के भोजन का व्यय अपने ऊपर ले लिया। महासम्मेलन के स्वागताध्यक्ष सर शंकरलालजी का भी सराहनीय सहयोग रहा। श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन ने भी एक समय के भोजन के व्यय से स्वागत समिति को निश्चिन्त कर दिया। अन्य

अनेक धनी-मानी, सेठ साहूकारों, सेवाभावी कार्यकर्ताओं, आयुर्वेदप्रेमियों की भी सतत सहायता और सहयोग निरन्तर प्राप्त रहा। श्री गान्धी आयुर्वेद तिब्बिया यूनानी कालेज के अध्यापकों तथा छात्रों की सेवा-भावना की भी सराहना की जानी चाहिये। लाला शिवचरणजी लोहिया और लाला गुट्टनलालजी जैन ने अर्थसंग्रह में सराहनीय हाथ बटाया। प्रदर्शनी को सफल बनाने का श्रेय है श्री शान्तिप्रसादजी जैन और श्री धर्मेन्द्रनाथजी शास्त्री को। आयुर्वेदबृहस्पति पं० घनानन्द पन्त को भी इसका श्रेय है। भोजन की सुन्दर, समुचित और सन्तोषजनक व्यवस्था की प्रशंसा तो सभी आगन्तुक महानुभावों ने मुक्तकण्ठ से की। वयोवृद्ध कविराज हरिवल्लजी जोशी ने कलकत्ता लौट कर यह लिखा कि यह अनुभव करना कठिन था कि हम लोग स्वागत समिति की पाकशाला में भोजन करते थे कि किसी करोड़पति सेठ की बरात में? ऐसी सफल व्यवस्था का सारा श्रेय है सेठ दुर्गाप्रसादजी धानुका, सेठ शिवदासजी मूंधड़ा, सेठ गौरीशंकरजी गोएनका, सेठ सुन्दरमलजी सांथलिया, सेठ कालूरामजी सरावगी, सेठ बिहारीलालजी झुंझुनवाला, सेठ आनन्दराजजी सुराणा और सेवाभावी सेठ गणेशदासजी ढोलाणी को। आप सभी ने अपने तन-मन-धन से सहयोग और सहायता प्रदान की। निवास की समस्या सात धर्मशालायें प्राप्त हो जाने से सहज में हल होगई। किसी को कोई असुविधा अनुभव नहीं करनी पड़ी। वैद्यराज गोपालसहायजी, गोस्वामी मुन्नीलालजी और महाशय हरिश्चन्द्रजी इसके लिये धन्यवाद के अधिकारी हैं। सुन्दर, मनोहर, भव्य पण्डाल का निर्माण वैद्यरत्न परमानन्दजी, श्री केशवप्रसादजी आत्रेय और वैद्य रामचन्द्रजी की सूझ-बूझ और प्रयत्न का परिणाम था। श्री शान्तिप्रसादजी जैन ने भी इसमें पूरा हाथ बटाया। पांच हजार नर-नारी अत्यन्त सुविधा से पण्डाल में बैठ सकते थे। गरमी का कष्ट भी किसी को अनुभव न होता था। स्वयंसेवकों की सराहनीय व्यवस्था का भार कविराज श्री भुवनचन्द्रजी जोशी, कविराज श्रीपतिजी बी०ए० और पण्डित जयचन्द्रजी शर्मा ने पूरा तत्परता से संभाला हुआ था। स्टेशन पर लगभग एक सौ और पण्डाल, पाकशाला तथा धर्मशालाओं में लगभग दो सौ स्वयंसेवक सदा ही तैनात रहते थे। श्री गांधी आयुर्वेद तिब्बिया यूनानी कालेज के ७० छात्रों ने स्वयंसेवक दल का जिस तत्परता के साथ कार्यभार संभाला, वह अत्यन्त सराहनीय है।

प्रचार और प्रकाशन के कार्य के बिना, यह सारी व्यवस्था हो जाने पर भी, सम्भवतः महासम्मेलन को इतनी सफलता प्राप्त न हुई होती। इस महत्वपूर्ण कार्य को पण्डित गुरुदत्तजी वैद्य ने अत्यन्त सुचारु रूपसे संभाला।

आप स्वयं भी एक अच्छे विचारक और लेखक हैं। हिन्दी में आपने कई राजनीतिक उपन्यास लिखे हैं। दिल्ली के हिन्दी, उर्दू और अंग्रेजी के पत्रों तथा पत्रकारों की सहानुभूति तथा सहयोग प्राप्त करने का सारा श्रेय आपको है। आपने दो प्रेस सम्मेलनों का सफल आयोजन किया। एक में पत्रकारों को स्वागतसमिति के कार्य का परिचय दिया गया और दूसरे में महासम्मेलन की गति-विधि और आयुर्वेद के प्रति सरकार की नीति तथा कर्तव्य की चर्चा की गई। दूसरा प्रेस सम्मेलन महासम्मेलन के मनोनीत अध्यक्ष आयुर्वेदमार्तण्ड श्री यादवजी त्रिकमजी की उपस्थिति में महासम्मेलन से एक दिन पहिले १८ फरवरी की शामको किया गया था। इन सम्मेलनों का पत्रकारों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। महासम्मेलन में पधारने वाले प्रतिनिधियों ने यहां से लौट कर अधिवेशन के जो संस्मरण लिपिवद्ध किये, उनमें दिल्ली के पत्रों और पत्रकारों के सहयोग और सहानुभूति की भूरि भूरि सराहना की गई है। नागपुर के "आयुर्वेद" पत्र के सम्पादक महोदय ने लिखा है कि "दिल्ली के दैनिक हिन्दी-अंग्रेजी पत्रों का भी सहयोग सम्मेलन को पूर्ण-रूपेण मिला। पत्रकारों ने जिस प्रकार सम्मेलन को सफल बनाने में सहयोग दिया, वह आयुर्वेद सम्मेलन के इतिहास में प्रथम ही था।" कविराज हरिवत्सजी जोशी ने महासम्मेलन की सफलताओं को गिनवाते हुए समाचार-पत्रों और पत्रकारों के सहयोग का उल्लेख विशेष रूप से किया है। कलकत्ता के 'सचित्र आयुर्वेद' के सम्पादकीय में भी लिखा गया है कि "विशेष रूप से दिल्ली की जनता एवं उसके प्रतिनिधि पत्रकारों ने सम्मेलन को सफल बनाने में जो सहयोग दिया एव दिलचस्पी ली, उसके लिये वे वैद्य समुदाय के विशेष रूप से धन्यवाद के पात्र हैं। उन्होंने सम्मेलन और आयुर्वेद विषयक समाचार एवं लेख तो प्रकाशित किये ही, सम्पादकीय टिप्पणियां देकर इस विषय की ओर राष्ट्रीय सरकार का ध्यान आकर्षित करके एक महत्वपूर्ण कार्य भी किया।" निस्सन्देह, दिल्ली के पत्र और पत्रकार स्वागत समितिके धन्यवाद के विशेष अधिकारी हैं। उनके सहयोग और सहानुभूति का उल्लेख न केवल स्वागत समिति के इस विवरण में अपितु महासम्मेलन के इतिहास में भी गर्व एवं गौरव के साथ किया जायगा।

इस प्रकार महासम्मेलन को आशातीत और कल्पनातीत सफलता प्राप्त कराने में जिन महानुभावों का सहयोग, सहायता और सहानुभूति स्वागत समिति को प्राप्त हुई, उन सभी के प्रति मैं उसकी ओर से हार्दिक धन्यवाद प्रगट करता हूं। भविष्य में उनके सहयोग, सहानुभूति और सहायता की आयुर्वेद को और भी अधिक आवश्यकता है। आयुर्वेद को अपनी पुरानी प्रतिष्ठा

दिलवाने, उसको राष्ट्रीय चिकित्सा के गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित करने और अपनी राष्ट्रीय सरकार के हाथों से उसके प्रति समुचित न्याय कराने के लिये जो महान कार्य हमें करना है, उसका तो इस महासम्मेलन से अभी केवल श्रीगणेश ही किया गया है। आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना तो इस नगरी में शीघ्र ही की जाने वाली है। इन सब कार्यों में भी दिल्ली की उदार आयुर्वेदप्रेमी जनता का पूरा सहयोग, सहानुभूति और सहायता हमें सदा ही सुनिश्चित रूप से प्राप्त होती रहेगी,—इस आशा और विश्वास से मैं एक बार फिर उसके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रगट करता हूँ। उनका भी मुझे स्वागत समिति की ओर से हार्दिक आभार मानना चाहिये, जिन्होंने आजकल की यात्रा के कष्ट, खानपान की असुविधा और रहन-सहन की कठिनाई की तनिक भी परवाह न करके प्रेमभरे निमन्त्रण को स्वीकार किया और दिल्ली पधारने की कृपा करके हमारी साधारण सी सेवा को अति मान देकर हमारी त्रुटियों पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। अपितु हमें अपने सिर माथे पर उठा लिया।

पहले जब महासम्मेलन उपसमिति के संयोजक का महान कार्य मेरे निर्बल कंधों पर डाला गया, तब मैं उसको स्वीकार करने के लिये तय्यार न था। मुझे यह विश्वास न था कि इतने बड़े उत्तरदायित्व को मैं सफलता के साथ निभा सकूंगा। साथियों के अत्यन्त आग्रह पर बड़े संकोच के साथ मैंने उसको स्वीकार किया। मुझे यह भी भरोसा था कि स्वागतसमिति का नियमित गठन होने पर यह उत्तरदायित्व किसी अन्य योग्य एवं समर्थ सज्जन को सौंप दिया जायगा। मुझे अपनी कमजोरी का इतना मान था कि एक बार मैंने संयोजक के दायित्व से त्यागपत्र भी दे दिया। परन्तु सहृदय साथियों और उदार मित्रों ने मेरी कमजोरी के लिये भी मुझे क्षमा न किया और स्वागतसमिति के प्रधानमन्त्री का कार्यभार भी मेरे ही निर्बल कन्धों पर डाल दिया गया। मुझे आयुर्वेद जगत के सम्मुख महासम्मेलन का यह विवरण प्रस्तुत करते हुये सबसे बड़ा सन्तोष इसी बात का है कि जिस महान परीक्षा में मुझे मेरे साथियों ने डाल दिया था, उसमें मैं उत्तीर्ण हो गया। उनकी प्रेमपूर्ण कृपा मेरे लिये आशीर्वाद सिद्ध हुई। उनका अनुग्रह मेरे लिये प्रकाशस्तम्भ बन गया। इसीलिये मैं उन सब वैद्य-बन्धुओं का भी हृदय से आभारी हूं, जिन्होंने मुझे आयुर्वेद जगत की विनीत सेवा का यह पुनीत अवसर प्रदान कर सेवा के इस परम पवित्र महायज्ञ में अपनी अपनी आहुति डाल कर उसे सफल बनाया और उस सारी सफलता का सेहरा अकेले

मेरे माथे पर बांध दिया। उनके इस प्रेम, कृपा एवं अनुग्रह को मैं कभी भी भूल नहीं सकता।

इस विवरण को इस रूप में तय्यार करने में अपना अमूल्य समय और सहयोग प्रदान करके हिन्दी के यशस्वी लेखक और पत्रकार 'अमर भारत' के सम्पादक श्री सत्यदेव विद्यालंकार ने मेरे इस कार्य में जो हाथ बटाया है, उसके लिये मैं आपका आभारी हूं। महासम्मेलन के प्रचार में भी आपका सराहनीय सहयोग प्राप्त रहा। महाधिवेशन के दिनों में अपनी सजीव लेखनी से आयुर्वेद के पक्ष में आपने जो आवाज उठाई थी, उसकी सराहना सभी वैद्यों के मुख पर थी। महासम्मेलन का यह विवरण राजधानी में हुये आयुर्वेद-महायज्ञ की पूर्णाहुति ही समझा जाना चाहिये। यह अन्तिम आहुति एक प्रकार से विद्यालंकारजी के ही हाथों से डाली गई है। आपने इस विवरण को यह रूप देकर महासम्मेलन के इस इतिहास को उतना ही सुन्दर बना दिया है, जितना कि महाधिवेशन सफल हुआ था।

अन्त में दो शब्द और। आयुर्वेद को अपनी पुरानी प्रतिष्ठा पर अधिष्ठित करने के महाधिवेशन के रूप में राजधानी में किये गये आयुर्वेद-प्रेमियों के प्रयत्नों का यह विवरण उन्हीं की सेवा में समर्पित है। "त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये।" प्रभु की हम पर कृपा हो। स्वदेश की स्वतंत्रता के सम्बन्ध में हमारे महान स्वप्न जिस रूप में पूरे हुये हैं, उनसे कहीं अधिक मनोहर एवं आकर्षक रूप में आयुर्वेद के सम्बन्ध में हमारे महान स्वप्न भी पूर्ण हों। हमें पूरा विश्वास और भरोसा रखना चाहिये कि वे अवश्य ही पूरे होंगे। विश्वास और भरोसा ही सफलता की पहली सीढ़ी है।

ओंकारप्रसाद शर्मा
प्रधानमन्त्री, स्वागत समिति
निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन
३७ [illegible] अधिवेशन-दिल्ली।

सर शंकरलालजी के० टी०

(अध्यक्ष—स्वागत समिति-महासम्मेलन)

वैद्य श्री ओंकारप्रसादजी शर्मा

प्रधानमन्त्री—स्वागतसमिति

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन

३७ वें वार्षिक अधिवेशन की पहिली बैठक

—१६ फरवरी—

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७ वें वार्षिक बृहद् अधिवेशन और उसके साथ होने वाले समस्त सभा-सम्मेलनों के आयोजन तथा प्रदर्शनी के लिये भी समस्त व्यवस्था शहर के सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक मैदान गांधी ग्राउण्ड में की गई थी। इस मैदान में अनेक अखिल भारतीय सम्मेलन हो चुके हैं और शहर की महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक सभाओं का आयोजन भी इसी मैदान में किया जाता है। महासम्मेलन के लिये इस मैदान में की गई व्यवस्था से यहां एक अस्थायी आयुर्वेद नगरी ही बस गई थी। मुख्य पण्डाल और प्रदर्शनी की योजना भी अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक और कलात्मक ढंग से की गई थी। मुख्य द्वार से प्रवेश करने वाले हर नर-नारी का ध्यान सहसा ही वृत्ताकार में बनाई गई प्रदर्शनी की ओर आकर्षित हो जाता था। पण्डाल इतना भव्य और विशाल बनाया गया था कि अत्यन्त सुविधा से उसमें पांच हजार नर-नारी बैठ सकते थे। लगभग दो हजार कुर्सियाँ और दर्जनों सोफा सैट रखे गये थे। विशाल मंच भी बहुत सुन्दर बनाया गया था, जिस पर मान्य अतिथि, वैद्य, स्थायी समिति के सदस्य आदि कोई दो ढाई सौ व्यक्ति बैठ सकते थे। मंच के ठीक पीछे आयुर्वेद प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि, महर्षि चरक और आचार्य सुश्रुत के तैल-चित्र शोभायमान थे। मंच के एक ओर पत्रकारों के लिये सुन्दर समुचित व्यवस्था थी। दर्जनों पत्रकार इस स्थान पर उपस्थित रहते थे। रेडियो, बिजली तथा पंखों की आधुनिक वैज्ञानिक व्यवस्था अत्यन्त सन्तोषजनक रूप से की गई थी। प्रवेश द्वार से मंच तक का मार्ग भी सुसज्जित था। वन्दन, तोरण, पताका से पण्डाल मनोहर ढंग से शोभायमान था। बिजली के भव्य प्रकाश में पण्डाल अत्यन्त आकर्षक प्रतीत होता था। चारों ओर भगवान भास्कर के प्रकाश की तरह मंच उजाले में चमक जाता था और बिजली की बत्तियां भी अत्यन्त मनोहर प्रतीत होती थीं। प्रवेश मार्ग के दोनों ओर मंच के सामने भिन्न-भिन्न प्रांतों की निर्देशक पट्टियां लगी हुई थीं। उनके पीछे दर्शकों के बैठने का

प्रबन्ध था। सभी दृष्टियों से यह सारी व्यवस्था इतनी सुन्दर थी कि कहीं खोज करने पर भी कोई त्रुटि मिलनी संभव न थी। जब सम्मान्य वैद्यों-प्रतिनिधियों तथा दर्शकों से पण्डाल-भरा-होता था, तब वैद्यों की विविध प्रांतों की वेशभूषा जहां महासम्मेलन के निखिल भारतीय स्वरूप को सार्थक करती थी, वहां वह पण्डाल की शोभा को भी कई गुना बढ़ा देती थी। जब १६ फरवरी की दुपहर को तीन बजे महासम्मेलन के वृहदधिवेशन की पहली बैठक हुई, तो पण्डाल में पांच हजार से भी अधिक की उपस्थिति थी। उनके कोने कोने में लोग समाये हुये थे। उपस्थित वैद्यों में आदरणीय सभापति के अलावा जो वैद्य महानुभाव उपस्थित थे उनमें प्रमुख रूप से निम्नलिखित महानुभाव थे—भिषकमणि पं० मणिरामजी शर्मा, वैद्यरत्न श्री शिवरामजी शर्मा, आयुर्वेदवृहस्पति पण्डित गोवर्धनजी शर्मा छांगाणी नागपुर, आयुर्वेदपंचानन पं० जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल प्रयाग, कविराज प० हरिदत्तजी जोशी, रामनिवासजी जोशी, कविराज विजयकालीजी भट्टाचार्य कलकत्ता, डा० ए० लक्ष्मीपति तथा कैप्टेन श्रीनिवासमूर्ति मद्रास, श्री परमेश्वरम-त्रावणकोर, श्री सुब्रह्मण्यम तामिलनाड, महामहोपाध्याय भागीरथजी स्वामी, राजवैद्य श्री नन्दकिशोरजी, स्वामी जयरामदासजी तथा स्वामी मंगलदासजी जयपुर, कविराज श्री प्रतापसिंहजी तथा श्री भागीरथजी शर्मा उदयपुर, प० दुर्गादत्तजी शास्त्री तथा श्री शिवदत्तजी शास्त्री बनारस, वैद्यराज श्री कन्हैयालालजी भेडा, पं० सीतारामजी मिश्र, पं० आशानन्दजी पंचरत्न, पण्डित वामन दीनानाथजी, प० महेन्द्रकुमारजी बम्बई, श्री बिन्दुमाधवजी नासिक, पं० रामनारायणजी शर्मा पटना, आचार्य बद्रीविशालजी मुंगेर, श्री धुलेकरजी, राधागोविन्दजी मिश्र, रामगोपालजी मिश्र, तथा श्री कालीपद भट्टाचार्य झांसी, श्री शरतकुमारजी मिश्र सहारनपुर, आचार्य नित्यानन्दजी पिलानी, श्री ब्रह्मदत्तजी शर्मा भुसावल, श्री रामप्रसादजी राजवैद्य पटियाला, श्री रामेश्वरजी शुक्ल ग्वालियर, उत्तर प्रदेश के डिपुटी डाईरेक्टर श्री दत्तात्रेयजी कुलकर्णी, श्री प्राणजीवन मेहता, डा० आशानन्द, आयुर्वेदाचार्य श्री दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णी एम० एम० सी०। इन सब महानुभावों के अलावा अमेरिका के डा० किपनिस और उनकी पत्नी का भी उल्लेख किया जाना चाहिये, जो आयुर्वेद प्रेम से प्रेरित होकर इस महासम्मेलन में विशेष रूप से पधारे थे। उपस्थिति में वैद्यों की संख्या १५०० से कम नहीं थी। दिल्ली के प्रमुख नागरिक भी काफी संख्या में उपस्थित थे। भारतीय पार्लमेण्ट के अनेक सदस्यों ने भी पधारने की कृपा की थी। कुछ प्रमुख राज्याधिकारी भी पधारे थे।

ठीक तीन बजे भारत सरकार के तत्कालीन रसद व उद्योगमन्त्री डा० श्यामाप्रसादजी मुकर्जी, स्वागताध्यक्ष सर शंकरलाल, सर श्रीराम, लाला देशबन्धु गुप्ता आदि के साथ पधारे। प्रवेश द्वार पर स्वागत समिति की ओर से पुष्पमाला से आपका स्वागत किया गया। श्री मंगलदेव जी शास्त्री ने मंगल पाठ किया।

श्री धन्वन्तरेरभिनवतमो मङ्गलस्तवः।

महामहोपाध्याय पं० प्रभुदत्त जी शास्त्रीने निम्नलिखित मंङ्गल श्लोक प्रस्तुत किये :—

पाणौ यस्य घटोऽक्षयः कनकजः पीयूषवर्षाकरः।
काचित् कांतिमयी छटा नयनयोर्नैरोग्यनिःस्यंदिनी ॥
अंभोजोपम आनने जनिमतां जीवातवः सूक्तयः।
अस्मिन् भारततंत्रराज्यसमये धन्वंतरिर्वर्धताम् ॥१॥

जिनके हाथ में क्षय रहित और सुनहरी एवं अमृत वर्षाने वाला कलश है, नेत्रों में नीरोगता देने वाली कोई अद्भुत शोभा है, कमल से मुख में प्राणियों को जीवन दान करने वाली सुंदर उक्तियां हैं; ऐसे श्री धन्वंतरिजी इस स्वतंत्र प्रजातंत्र भारत में वृद्धि को प्राप्त हों।

रोगज्ञानविधासुपञ्चवदनं नाड़ीभिदाकोविदम्।
लोकप्राणहकालकूटदमनं कारुण्यगङ्गाधरम् ॥
आरोग्यानुडुहिस्थितं रसवशं संजीवनी जीवनम्।
वंदे मृत्युहरं शिवाय जगतां धन्वन्तरिं वा शिवम् ॥२॥

जगत के कल्याण के लिये मैं श्री धनवन्तरि वा श्री शिव को प्रणाम करता हूं। शिव के पांच मुख प्रसिद्ध हैं और १ निदान २ पूर्वरूप, ३ रूप, ४ संप्राप्ति, ५ उपशय ये आयुर्वेद के निर्दिष्ट किए हुए रोग ज्ञान के पांच प्रकार ही श्री धन्वन्तरि के पांच मुख हैं। इड़ा पिङ्गलादि नाड़ियों के भेद के शिव पंडित हैं और श्री धन्वन्तरि भी नाड़ी भेद के विद्वान् हैं। शिव ने भी संसारतापी काल कूट का दमन किया है और श्री धन्वन्तरि भी लोक प्राणहारी संखिया भिलावा आदि विषों को मारते हैं। शिव भी गङ्गाधर हैं और धन्वन्तरि भी कारुण्य की गंगा धारण करते हैं। शिव भी नंदी पर विराजते हैं और धन्वन्तरि भी आरोग्यरूपी सांड पर विराजमान हैं। शिव के भी आनंद वश में है और धन्वन्तरी के भी रस 'पारा' वश में है। संजीवनी नामक विद्या से

शिव जीवन देते हैं और धन्वन्तरि 'संजीवनी' गोलियों से जीवित करते हैं। इस प्रकार दोनों समान हैं ॥२॥

> विभ्रत्पीतपटं सटाल तिवरं दोधूयमानं जवात्।
> श्री मंथाद्रिदरीमुखादिव वहिर्यातो निहन्तुं नवान्॥
> आयुर्वेदविरोधिनो बहुविधान् वादाभिधानान् पशून्।
> जीयाद्रोगकरीन्द्र कुंभदलनोदञ्चत्पदाब्जो हरिः॥३॥

पीले रङ्ग का वस्त्र वेगसे प्रकट होने के कारण खूब हिल रहा है, इसीलिये सिंह की गर्दन के अयाल की शोभावाला सा हो रहा है। पर्वत की गुफा के मुख से ही आयुर्वेद रूपी सिंह विरुद्ध चलने वाले (कीटाणुवाद) ऐलोपैथिक, होम्योपैथिक आदि वाद रूपी पशुओं को मारने के लिये रोगरूपी हाथी के मस्तक तोड़ने के लिये जिनके कमल से पैर चंचल होरहे हैं, वह श्री धन्वन्तरिजी सिंह बनकर विजय करें।

> विष्णोः स्वान्तहरी सुकांतिकिरणैः सा श्री जगन्मोहिनी।
> चंद्रो ध्वान्तहरः समस्तजगतः शंभोः शिरोभूषणः॥
> किं तैः कौस्तुभकल्पपादपमुखैः स्वर्गौकसां मण्डनैः।
> श्री धन्वन्तरिरेक एव मनुजोद्धारव्रतो वन्द्यताम्॥४॥

यद्यपि समुद्र से अनेक रत्न उत्पन्न हुए, उनमें से जो लक्ष्मीजी थीं, वह तो अपनी चमकीली किरणों से विष्णु भगवान के चित्त को हर बैठीं और जो सारे जगत के ध्वान्त अंधकार को हरने वाला चंद्रमा था, वह श्री शिव के शिर का भूषण बन बैठा। ऐसे ही कौस्तुभ और कल्पवृक्ष भी स्वर्गवासी देवों के ही शृङ्गार बने, उनसे हमें क्या लाभ ? श्री धन्वन्तरिजी जो अकेले ही हम मानवों के उद्धार का व्रत लिये हुये हैं, उनको ही प्रणाम किया जाये।

> जातो नीलमणिप्रभो हरगले हालाहलस्तेन किम् ?
> हाला या हलधारिणोऽरुचत सा लब्धिश्च का नोऽभवत् ?
> यद्धस्तामृतनिःस्रवद्भिरभितो बिन्दुव्रजैर्जीवनम्।
> लब्ध्वा हृष्यति मानवः स भगवान् धन्वन्तरिर्ध्यताम्॥५॥

जो हालाहल निकला, वह शिव के कंठ में नीलमणि की चमक वाला बन बैठा, उससे हमें क्या ? हाला जो शराब निकली, वह बलरामजी को पसंद आगई, उससे भी हमें क्या लाभ ? जिसके हाथके अमृत के चारों ओर टपकते हुये उन के बूंदों को पाकर मानव हर्षित हो उठे, उन भगवान धन्वन्तरि जी को ही प्रणाम किया जाय।

माननीय प्रधानमन्त्री श्री जवाहरलालजी नेहरू
(अपनी शुभकामना से महाअभिनन्दन को आपने गौरवान्वित किया।)

डा० मुखर्जी का उद्‌घाटन भाषण

भारत सरकार के तत्कालीन उद्योगमन्त्री डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन का उद्‌घाटन करते हुए कहा कि भारतीय जड़ी बूटियों की गहरी खोज की जानी चाहिये। भारतीय जड़ी बूटियों और औषधि पौदों में ऐसे ऐसे रत्न छिपे हुए हैं, जिनकी यदि खोज की जाय; तो न केवल भारतवासियों का किन्तु समस्त विश्व का कल्याण हो सकता है। सैकड़ों वर्ष पूर्व जब पश्चिमीय देश अज्ञान में डूबे हुए थे, भारतीय चिकित्सा विशेषज्ञों ने मानव रोगों की जटिल समस्या का सही वैज्ञानिक हल खोज निकाला था और यह प्रमाणित किया जा चुका है कि आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली भारत से दूर दूर के देशों, जैसे मिस्र, अरब, रोम और अन्य स्थानों में भी प्रचलित थी। यह कहना गलत न होगा कि हमारी प्रणाली ने पश्चिमी चिकित्सा की, जिस पर दुनिया इतना गर्व करती है, अप्रत्यक्ष रूप में ही सही, नींव डाली।

सारे भारत से सम्मेलन में भाग लेने के लिये १००० से अधिक प्रतिनिधि आये हुए हैं। उनमें से कुछ आयुर्वेद के प्रसिद्ध ज्ञाता हैं। श्री यादव जी त्रिकम जी जैसे विद्वान् सम्मेलन के अध्यक्ष हैं।

देशी और विदेशी दोनों प्रकार की चिकित्सा प्रणालियों के प्रति सहिष्णुता की भावना रखने का अनुरोध करते हुए आपने कहा कि उनमें प्रतिस्पर्द्धा की आवश्यकता नहीं है। आखिर प्रत्येक प्रणाली का एक ही यह उद्देश्य है कि रोगों को दूर किया जाय और मानवता की सेवा की जाय। विभिन्न चिकित्सा प्रणालियों को देश में चलने देने में कोई हानि नहीं है। सबको विकास के समान अवसर दिये जाने चाहिए और योग्यता के जीवित रहने के सिद्धांत को काम करने का मौका देना चाहिए।

सरकार द्वारा आयुर्वेद प्रणाली को मान्यता देने के प्रश्न पर आपने कहा कि कोई भी सरकार उचित माँग की अवहेलना नहीं कर सकती। अगर आप संगठित होकर खड़े होंगे, तो लोगों को यह अनुभव करा सकेंगे कि स्वास्थ्यविषयक समस्याओं के बारे में आपका दृष्टिकोण बुद्धिसंगत और वैज्ञानिक है।

आयुर्वेद प्रणाली के इतिहास की चर्चा करते हुए आपने यह भी कहा कि मुस्लिम और अंग्रेजी शासन के जमाने में उसकी अवनति हुई। अब हम प्रणाली को पुनः जीवित करना है, कारण वह आज भी ८० प्रतिशत भारतीय जनता

की सेवा कर रही है। उसको प्रोत्साहन देने के लिये दूसरा कारण उसका सस्तापन है, जो भारतीय जनता की आर्थिक स्थिति के साथ पूरा मेल खाता है।

आयुर्वेद प्रणाली के इतिहास के इस संक्रमण काल में देश के वैद्यों को संयुक्त होने की अपील करते हुए इस बात पर जोर दिया कि शोध कार्य का विस्तार किया जाय, स्कूल कालेजों में भारतीय चिकित्सा के शिक्षण का स्तर ऊंचा उठाया जाय और आयुर्वेद प्रणाली के कुछ बुनियादी सिद्धान्त तय कर दिये जावें, जिनके आधार पर कि आप सरकार से मान्यता देने की माँग कर सकें। मान्यता तो मिलने ही वाली है।

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन

परिचय

महासम्मेलन के संयुक्तमन्त्री श्री केशवप्रसाद आत्रेय ने महासम्मेलन का निम्नलिखित परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया :—

वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में जब इस देश के वैद्यों ने देखा कि हमारे विदेशी शासक आयुर्वेद से कोई सहानुभूति नहीं रखते, तो उन्होंने भारतवर्ष की इस अमूल्य पैतृक सम्पत्ति की रक्षा के लिये संगठित होने का निश्चय किया।

नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन (जो बाद में "आल इण्डिया आयुर्वेदिक कांग्रेस" के नाम से रजिस्टर्ड हुआ) का प्रथम महाधिवेशन १९०७ में नासिक में हुआ। तब से इस संस्था के ३७ महाधिवेशन भारत की प्रमुख देशी रियासतों, बड़े-बड़े नगरों और राजधानियों में हो चुके हैं। इनमें से एक अधिवेशन कोलम्बो (लंका) में हुआ था। कोचीन के महाराज श्रीराम वर्मा और भारतभूषण पंडित मदनमोहन मालवीय जैसे महापुरुषों तथा अनेक प्रतिष्ठित वैद्यों ने इसके अधिवेशनों का सभापतित्व किया है और इसके क्रियाकलाप में भाग लिया है। भारतीय रियासतों के प्रमुख शासकों ने इस संस्था और इसके प्रति निहित हित को विशेष रूप से संरक्षण प्रदान किया।

आयुर्वेद महासम्मेलन (आयुर्वेदिक कांग्रेस) जिसका प्रभाव नैपाल, लंका और पूर्वी तथा पश्चिमी पाकिस्तान सहित समस्त भारत पर है, देश की सर्वाधिक लोकतन्त्रात्मक विधि में संचालित संस्थाओं में से एक है। भारत के कोने-कोने के वैद्य, एक उद्देश्य और एक ही भावना को लेकर, एक व्यक्ति की नाईं, इसके कार्यों में भाग लेते हैं। भारतीय संघ के सभी प्रान्तों और रियासतों में इसकी शाखायें हैं। इन्हीं शाखाओं के द्वारा इस उप-महाद्वीप में, उत्तर से दक्षिण और पूर्व से पश्चिम तक, ग्राम, ताल्लुका, तहसील, जिला और नगर आयुर्वेद मण्डलों का जाल बिछा दिया गया है। इसका प्रधान कार्यालय प्रति पांच वर्ष बाद एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में बदलता रहता है। इस समय दैवयोग से यह सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न लोक-तन्त्रात्मक गणराज्य की राजधानी में है।

आयुर्वेद-महासम्मेलन एक शिक्षा एवं परीक्षा-संस्था का संचालन भी करता है जिसका नाम "नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ" है। यह विद्यापीठ

सम्बद्धता प्रधान विश्वविद्यालय की भांति काम करता है। लगभग ४० शिक्षा संस्थायें विद्यापीठ से सम्बद्ध हैं और लगभग ६०० अध्यापक इसके द्वारा मान्य हैं। इन शिक्षा-संस्थाओं और मान्य अध्यापकों के विद्यार्थी विद्यापीठ द्वारा संचालित तीन परीक्षाओं में बैठते हैं। देशभर में प्रसृत लगभग ५० परीक्षा-केन्द्रों में प्रतिवर्ष लगभग १५०० परीक्षार्थी परीक्षा देते हैं। अपने अस्तित्व के ३७ वर्षों में विद्यापीठ ने आयुर्वेद के लगभग १६००० ऐसे सुशिक्षित एवं प्रशिक्षित विद्वान् तैयार किये हैं, जो क्रियाकुशल वैद्य प्रमाणित हुए हैं और जिन्होंने इस सुदीर्घ संकटकाल में भी आयुर्वेद की दीपशिखा को प्रज्वलित रखा है। अब विद्यापीठ को एक ऐसे सर्वांगपूर्ण शिक्षात्मक, प्रशिक्षणात्मक, परीक्षात्मक, सम्बन्धनात्मक और अधीक्षणात्मक अखिल भारतीय आयुर्वेदिक विश्वविद्यालय के रूप में परिवर्तित करने का विचार हो रहा है, जो आयुर्वेदशास्त्र के आठों अंगों में उच्च शिक्षा और गवेषणा की व्यवस्था कर सके तथा देश के आयुर्वेद विद्यालयों एवं महाविद्यालयों को सम्बद्धता की सुविधा प्रदान कर सके। इस विश्वविद्यालय को प्राचीन भारत के विश्वविख्यात तक्षशिला-विश्वविद्यालय के ढांचे पर चलाने का विचार हो रहा है।

आयुर्वेद महासम्मेलन का एक मासिक मुखपत्र है, जिसका नाम "आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका" है। इसमें उच्चकोटि की आयुर्वेदीय पत्रकारिता और साहित्यिक लेखों का समन्वय रहता है।

अब हम देश में अब तक हुई आयुर्वेदोन्नति की स्थिति के सम्बन्ध में कुछ तथ्य और आंकड़े देना चाहते हैं।

वैद्य—चोपड़ा-समिति की रिपोर्ट के अनुसार पाकिस्तान सहित भारत के ७ लाख गावों में लगभग दो लाख वैद्य हैं।

आयुर्वेदीय संस्थायें— देश में आयुर्वेद के उत्थान और उन्नति के लिये काम करने वाली लगभग ८० आयुर्वेदीय संस्थायें और परिषदें हैं।

आयुर्वेदीय विद्यालय और महाविद्यालय—समस्त भारत में आयुर्वेद की शिक्षा देने वाले लगभग १२५ विद्यालय और महाविद्यालय हैं। बनारस, लखनऊ, अलीगढ़, आन्ध्र, मैसूर और मद्रास विश्वविद्यालयों में आयुर्वेद विभाग हैं और अपने आयुर्वेद विद्यालय हैं। हाल ही में, नागपुर विश्वविद्यालय ने भी आयुर्वेद विभाग खोलने का निश्चय किया है। पूना विश्वविद्यालय के उपकुलपति (वाइस-चांसलर) डा० एम० आर०

जयकर ने हमें सूचित किया है कि वे और उनके सहयोगी अपने विश्वविद्यालय में आयुर्वेद विभाग खोलने की आवश्यकता अनुभव कर रहे हैं और उसके लिये धर्मस्व प्राप्ति की आशा भी रखते हैं। दिल्ली, आगरा और त्रावणकोर विश्वविद्यालयों ने सूचित किया है कि वे आयुर्वेद विभाग खोलने के विषय में विचार कर रहे हैं। अन्य भारतीय विश्वविद्यालयों के सामने भी यह विषय उपस्थित किया है और वे भी अपने तत्वावधान में ऐसे विभाग खोलने का विचार कर रहे हैं।'

आयुर्वेदीय न्यास और धर्मस्व— आयुर्वेद की उन्नति और पुनरुत्थान के लिये देश में लगभग १० बड़े-बड़े आयुर्वेदीय न्यास और धर्मस्व काम कर रहे हैं और कुछ अन्तर्द्वारिक एवं बहिर्द्वारिक आयुर्वेदीय आतुरालय चला रहे हैं। इनके अतिरिक्त देश भर में बहुत से छोटे-छोटे न्यास और धर्मस्व भी काम कर रहे हैं। २० लाख रुपये का एक बहुत बड़ा न्यास इस समय पाकिस्तान के अधिकार में चला गया है।

आयुर्वेदीय औषध निर्माणशालायें— देश में लगभग १२५ बड़ी आयुर्वेदीय औषध निर्माणशालायें और प्रयोगशालायें विशाल पैमाने पर आयुर्वेदीय औषधों के निर्माण में लगी हुई हैं। इनके अतिरिक्त घरेलू उद्योगों की प्रणाली पर संगठित २५०० से अधिक छोटी-छोटी औषधनिर्माणशालायें भी आयुर्वेदीय औषधों का निर्माण करती हैं। इन निर्माणशालाओं से प्रति दिन लगभग ३०,००० व्यक्तियों को जीविका प्राप्त होती है।

जड़ी-बूटियों का संग्रह— यह अनुमान लगाया गया है कि १ लाख से अधिक व्यक्ति कच्चे औषध-द्रव्यों और जड़ी-बूटियों के संग्रहण में और लगभग इतने ही इन औषध-द्रव्यों के व्यापार में लगे हुए हैं। इस प्रकार आर्थिक दृष्टि से भी "आयुर्वेद" देश के सबसे बड़े उद्योगों और व्यवसायों में से एक है।

जन-कल्याण— आज भी आयुर्वेद समस्त भारत की ८०-९० प्रतिशत जनता की सेवा करता है।

प्रान्तों में आयुर्वेद की प्रगति

बम्बई— बम्बई में रजिस्टर्ड वैद्यों की संख्या ६५३५ है। एक सरकारी आयुर्वेद विद्यालय है और एक सरकारी आयुर्वेद आतुरालय। स्थानीय स्वायत्त-शासन संस्थाओं के १५५ आयुर्वेदीय औषधालय हैं। सरकार आयुर्वेद पर

प्रतिवर्ष ४ लाख से अधिक रुपया व्यय करती है। सरकार कर्णाटक में एक आयुर्वेद विद्यालय और ग्रामीण क्षेत्रों में १२५ आयुर्वेदीय चिकित्सा-सहायता केन्द्र खोलने का विचार कर रही है।

मद्रास—मद्रास में रजिस्टर्ड वैद्यों की संख्या १३,३४४ है। २ सरकारी और ४ सार्वजनिक आयुर्वेद विद्यालय, १ सरकारी आतुरालय, १ सरकारी औषधालय, ५२४ स्थानीय स्वायत्तशासन संस्थाओं के औषधालय और ३ सार्वजनिक धर्मार्थ औषधालय हैं। सरकार आयुर्वेद पर प्रतिवर्ष ५ लाख से अधिक रुपया व्यय करती है। सरकार २५ लाख रुपये की लागत से कुछ विद्यालय, महाविद्यालय और गवेषणाशालायें स्थापित करने का विचार कर रही है।

उत्तर प्रदेश—इस प्रान्त में रजिस्टर्ड वैद्यों की संख्या सबसे अधिक है; परन्तु उनके आंकड़े सरकार से अभी प्राप्त नहीं हुए। इस प्रान्त में १५ आयुर्वेद महाविद्यालय और ६ आयुर्वेद विद्यालय हैं, जो सभी व्यक्तिगत तथा अर्ध-सरकारी अभिकरणों द्वारा चलाये जाते हैं। प्रान्त की भारतीय चिकित्सा मंडली ने बताया है कि प्रान्त में आयुर्वेद बड़ी शीघ्रता से प्रगति कर रहा है। सरकार आयुर्वेद पर कितना व्यय करती है, इसकी सूचना भी हमें प्राप्त नहीं हुई।

मध्यप्रदेश—मध्यप्रदेश में ५७ सरकारी औषधालय और ८२ स्थानीय स्वायत्तशासन संस्थाओं के औषधालय हैं। ७ आयुर्वेदीय विद्यालय हैं, जो व्यक्तिगत अभिकरणों द्वारा चलाये जाते हैं। सरकार आयुर्वेद पर ६८ हजार रुपया व्यय करती है। सरकार ने ६० नये आयुर्वेदीय औषधालय खोलने की एक पंचवर्षीय योजना बनाई है।

पूर्वीय पंजाब—इस प्रान्त में २ सार्वजनिक आयुर्वेदिक विद्यालय ११ सार्वजनिक औषधालय हैं। वैद्यों को रजिस्टर्ड करने का बिल सरकार द्वारा पास होगया है और आशा है शीघ्र ही वैद्यों का रजिस्ट्रेशन आरम्भ हो जायगा।

हिमाचलप्रदेश—३५ सार्वजनिक औषधालय जनता द्वारा चलाये जा रहे हैं। सरकार ने आयुर्वेदोन्नति के लिये ४००००) स्वीकृत किया है।

पटियाला तथा पूर्वीय पंजाब राज्य संघ—सरकार की ओर से प्रान्त में १ आयुर्वेदिक कालेज तथा कुछ औषधालय चलाये जा रहे हैं।

सरकार भविष्य में विभिन्न स्थानों पर आयुर्वेद औषधालय खोलने की योजना बना रही है।

बिहार— सरकार की ओर से एक आयुर्वेद विद्यालय है, जिसे कालेज रूप में पटना विश्वविद्यालय के अन्तर्गत परिवर्तित करने की योजना विचाराधीन है। आशा है शीघ्र ही पटना विश्वविद्यालय अपने अन्तर्गत एक आयुर्वेद विभाग भी खोलेगा।

राजस्थान— इस प्रान्त में आयुर्वेदोन्नति के लिये लगभग सब प्रान्तों से अधिक धन व्यय किया जाता है। इस वर्ष राजस्थान की सब रियासतों को मिलाकर कुल ७,५८,६४०) रु० आयुर्वेद द्वारा जनता की सेवा के लिये स्वीकृत हुआ है।

अजमेर-मेरवाड़ा— इस प्रान्त में २८ सार्वजनिक औषधालय हैं। आयुर्वेदोन्नति के लिए सरकार पंचवर्षीय योजना बना रही है।

जम्मू तथा काश्मीर राज्य— इस राज्य में ८ सरकारी तथा २ सार्वजनिक औषधालय हैं।

कोचीन— इस राज्य में ६ सरकारी आतुरालय, ५० औषधालय तथा १ आयुर्वेदिक कालिज हैं। सरकार ने सन् १९४८-४९ में आयुर्वेद पर ३,६६,५५०) व्यय किया। सरकार ग्रामों में सहकारी संस्थाओं द्वारा बहुत ही अल्पमूल्य में आयुर्वेद-औषधें वितरण करती है। जहाँ तक आयुर्वेद का सम्बन्ध है, यह राज्य आयुर्वेदोन्नति के लिये अन्य प्रान्तों की अपेक्षा बहुत ही अधिक प्रयत्नशील है। इस राज्य के पूर्वकालीन महाराज नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के ८ वें अधिवेशन के, जो कि पूना में हुआ था, सभापति थे।

कुर्ग—इस प्रान्त में १० आयुर्वेदिक औषधालय हैं।

श्रीलंका— इस राज्य में १ सरकारी आयुर्वेदिक कालिज, १ सरकारी अस्पताल तथा १ औषधालय है। इसके अतिरिक्त ३ सार्वजनिक अस्पताल, ६७ आयुर्वेदिक औषधालय तथा २ कालेज हैं। सरकार ने आयुर्वेद पर सन् १९४८-४९ में ६,२७,५११) व्यय किया।

देहली—इस प्रान्त में लगभग ६०० वैद्य हैं। ३ आयुर्वेद महाविद्यालय तथा १ अनुसन्धान-शाला है। स्थानीय स्वायत्त-शासन के ५ आयुर्वेद औषधालय तथा केन्द्रीय सरकार के पुनर्ग्राम सचिवालय की ओर से एक

औषधालय है। इसके अतिरिक्त २५ सार्वजनिक धर्मार्थ आयुर्वेद औषधालय हैं। १ औषधालय नई देहली स्वायत्त शासन की ओर से भी चल रहा है।

विशेषः—अन्य प्रान्तों से अभी हमारे पास पूर्ण सूचनायें प्राप्त नहीं हुई हैं।

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन

(क) प्रधान लक्ष्य व उद्देश्यः—

१. राजकीय आरोग्य विभाग के नियन्त्रण में पर्याप्त हिस्सा प्राप्त करके ऐसी आयुर्वेद-राजनीति का विकास करना, जिससे सभी प्रान्तीय राज्यों में आयुर्वेदिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग की स्थापना द्वारा आयुर्वेद विज्ञान के चिकित्सा-व्यवसायियों की स्वीकृति हो सके और साथ ही उन लोगों के उद्देश्यों तथा आवश्यकताओं के उपयुक्त उपायों का अवलम्बन, योजनाओं का क्रमिक विकास व पूर्ति एवं धारा सभा में नियम-निर्माण के लिए सुविधा और अवसर मिल सके।

२. आयुर्वेद-विज्ञान तथा आयुर्वेद चिकित्सकों के पुनरुज्जीवन एवं प्रगति के लिए एक केन्द्रीय संस्था (Central board) की स्थापना के निमित्त आयुर्वेद-चिकित्सकों तथा आयुर्वेद प्रतिष्ठानों का संगठन करना।

३. आयुर्वेद की शिक्षा-परीक्षा-संस्थाओं की सम्बद्धता एवं निरीक्षण के लिए सर्वांगपूर्ण तथा सर्वसाधनसम्पन्न एक "निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विश्वविद्यालय" की स्थापना करना।

(ख) स्थिर कोषः—इस समय महासम्मेलन तथा विद्यापीठ के स्थिर कोष में एक लाख रुपया की धनराशि सुरक्षित है।

(ग) वार्षिक अधिवेशनः—

अधिवेशन संख्या	वर्ष	महासम्मेलनाध्यक्ष का नाम	सम्मेलन स्थान
१	१९०७	श्री कुंवर सूर्यप्रसादसिंह बहादुर	नासिक
२	१९०८	आयुर्वेदनिधि श्री गंगाधर भट्ट राजवैद्य, जयपुर	पनवेल-कोलाबा
३	१९११	महामहोपाध्याय कविराज गणनाथसेन, सरस्वती, विद्यासागर, एम० ए०, एल० एम० एस० कलकत्ता	

४	१६१२	वैद्यरत्न कविराज श्री जोगेन्द्रनाथ सेन, एम० ए०, वैद्यभूषण-कलकत्ता	कानपुर
५	१६१३	लेफ्टिनेण्ट कर्नल, ए० आर० कीर्तिकर, बम्बई	मथुरा
६	१६१४	आयुर्वेद मार्तण्ड श्री पं० लक्ष्मीरामजी स्वामी आयुर्वेदाचार्य जयपुर	कलकत्ता
७	१६१५	कविराज श्री यामिनीभूषण राय, कलकत्ता	मद्रास
८	१६१६	महाराजाधिराज श्रीराम वर्मा कोचीन नरेश	पूना
९	१६१८	वैद्यरत्न पं० गोपालाचार्लू, मद्रास	लाहौर
१०	१६१९	कविराज श्री उमाचरण भट्ट, बनारस	देहली
११	१०२०	महामहोपाध्याय कविराज गणनाथ सेन, सरस्वती, विद्यासागर, कलकत्ता	इन्दौर
१२	१६२१	कविराज हाराणचन्द्र चक्रवर्ती राजशाही (बंगाल)	बम्बई
१३	१६२२	श्री पंडित कृष्ण शास्त्री कवडे, पूना	राजमहेन्द्री
१४	१६२३	वैद्यरत्न श्री योगेन्द्रनाथ सेन वैद्यभूषण, कलकत्ता	कोलम्बो (श्रीलंका)
१५	१६२५	आयुर्वेदमार्तण्ड वैद्य श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य, बम्बई	हरिद्वार
१६	१६२६	भारतभूषण महामना श्री प० मदन-मोहन मालवीय, बनारस	जयपुर
१७	१६२७	आयुर्वेद पंचानन श्री पं० जगन्नाथ-प्रसाद शुक्ल, प्रयाग	पटना
१८	१६२८	श्री पं० कृष्ण शास्त्री देवधर नासिक	फतहपुर (शेखावटी)
१९	१६२९	वैद्यरत्न केप्टन जी० श्रीनिवास मूर्ति, बी० ए०, मद्रास	नासिक

१०. हिसार जिला आयुर्वेद मण्डल, भिवानी।
११. जम्मू वैद्य सभा, जम्मू (काश्मीर)।
१२. मारवाड़ आयुर्वेद प्रचारिणी सभा, जोधपुर।
१३. जिला वैद्य सभा, आगरा।

(च) विद्यापीठ संबद्ध विद्यालयः—

१. अमर मैडीकल कालेज, अजमेर।
२. अवन्तिका आयुर्वेद विद्यालय, उज्जैन।
३. आयुर्वेद कालेज, आगरा।
४. बाबा काली कमलीवाले का आयुर्वेद विद्यालय, ऋषिकेश।
५. गंगाप्रसाद रामनारायण तिवारी संस्कृत आयुर्वेद विद्यालय, कानपुर।
६. श्री चन्द्रमति आयुर्वेद विद्यालय, जयपुर।
७. श्री चितलांग्या संस्कृत स्कूल, सीकर।
८. दिगम्बर जैन संस्कृत कालेज, जयपुर।
९. धन्वन्तरि आयुर्वेद महाविद्यालय, संगरूर।
१० पंचनद आयुर्वेद महाविद्यालय, अमृतसर।
११. पुराणिक आयुर्वेद महाविद्यालय, नागपुर।
१२. राजस्थान आयुर्वेदिक कालेज, सीकर।
१३. श्री बाजोरिया संस्कृत महाविद्यालय, फतहपुर।
१४. वाल्मीकि आयुर्वेदिक कालेज, ग्वालियर।
१५. श्री ब्रजमोहन आयुर्वेदिक कालेज, बरेली।
१६. भवानीसहाय सुमेरचन्द संस्कृत महाविद्यालय, हापुड़।
१७. महाराणा आयुर्वेदिक कालेज, उदयपुर।
१८. मुक्तानन्द संस्कृत कालेज, धनबा।
१९ रामकृष्ण आयुर्वेद विद्यापीठ, बसवनगुडी (बैंगलोर)।
२० नरहरदास आयुर्वेदिक कालेज, सूरत।
२१. विदर्भ आयुर्वेदिक कालेज, अमरावती।
२२. सनातन धर्म आयुर्वेदिक कालेज, बीकानेर।
२३. संस्कृत कालेज, इन्दौर।
२४. सांगवेद महाविद्यालय, नरौरा।
२५. सांगवेद महाविद्यालय, सिवाना।
२६. आयुर्वेद महाविद्यालय, आगरा।

महासम्मेलन के स्वागताध्यक्ष मर शंकरलाल स्वागत भाषण दे रहे हैं। मंच पर अध्यक्ष महोदय के साथ सुप्रतिष्ठित वैद्यों में डा० श्यामप्रसाद मुकर्जी और बाबा विचित्रसिंह विराजमान हैं।
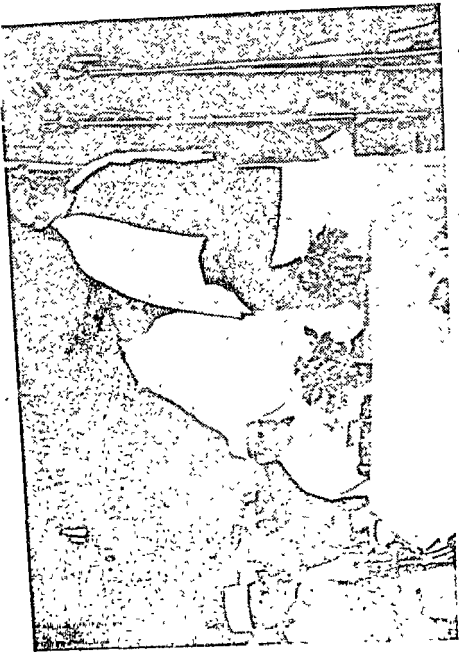
भारत सरकार के तत्कालीन उद्योगमन्त्री डा० श्यामाप्रसाद मुकर्जी महासम्मेलन का उद्घाटन कर रहे हैं।

श्री शंकरलालजी का भाषण

स्वागत-समिति के अध्यक्ष के पद से दिल्ली क्लाथ मिल के लाला सर शंकरलालजी ने निम्नलिखित भाषण दिया :—

आयुर्वेदाचार्यो और मित्रो !

स्वागत-समिति की ओर से आप सबका हार्दिक स्वागत करते हुए मुझे विशेष गर्व और प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। परन्तु साथ ही मैं यह भी मानता हूं कि ऐसा करते हुए मुझे कुछ हिचकिचाहट भी हो रही है; कारण यह है कि मैं इस बात को भली-भांति जानता हूं कि आयुर्वेद-विज्ञान में, जो कि उच्चकोटि के विशेषज्ञों का विषय है, मैं सर्वथा ज्ञान-शून्य हूं। मुझे आश्चर्य है कि यह सम्मान मुझे क्यों दिया गया ! कदाचित् ऐसा इसलिये किया गया है कि सम्मेलन मेरे वंश को, जिसने विभिन्न पीढ़ियों में आयुर्वेद के हित में निरन्तर प्रगाढ़ रुचि प्रदर्शित की है और यथाशक्ति सहायता प्रदान की है, सम्मानित करना चाहता था। मुझे यह घोषित करते हुए गर्व होता है कि आयुर्वेद के प्रति मेरा भी उतना ही प्रेम और आदर है, जितना मेरे पूर्व-पुरुषों और वंशजों का था। अतः इस महान् उद्देश्य की सेवा का साधन बनाये जाने के लिये मैं अपने को गौरवान्वित समझता हूं।

और, क्या संसार की इस प्राचीनतम चिकित्सा-पद्धति को मुझ जैसे साधारण व्यक्ति की प्रशंसा की आवश्यकता है, जबकि अन्य पद्धतियों के प्रतिष्ठित चिकित्सक और डा० हार्ले, सर पार्डी ल्युकिस, डा० हरोल्ड ब्राउन और कलकत्ता विश्वविद्यालय कमीशन के अध्यक्ष सर माइकेल सैडलर जैसे विदेशी विद्वान् इसकी महत्ता को स्वीकार कर चुके हैं ? जैसा कि मैं समझता हूं आयुर्वेद का सौन्दर्य, उसके एक साथ आध्यात्मिक सत्यों और शरीर एवं मनोविज्ञान की गम्भीर गवेषणा पर आधारित होने में है। आयुर्वेद शरीर, मन और आत्मा के स्वास्थ्य पर बल देता है और विभिन्न ऋतुओं एवं जलवायुओं में व्यक्तिगत और सार्वजनिक स्वास्थ्य के विस्तृत नियमों का निर्देश करता है। आयुर्वेद के मूल प्रणेता ऋषि थे, जिन्होंने जीवन के ऐसे बहुत से सत्य खोज निकाले, जो समय की परीक्षा और विज्ञान की सूक्ष्म वीक्षा में पूरे उतरे। परन्तु मेरे कहने का अभिप्राय यह

नहीं है कि आयुर्वेद विज्ञान पूर्ण है या यह आधुनिक ज्ञान के प्रकाश में नवीकरण एवं संशोधन की अपेक्षा नहीं रखता। मैं तो केवल यह बताना चाहता हूं कि आयुर्वेद इतना अबुद्धिसंगत और अवैज्ञानिक नहीं है, जितना उसके कुछ विरोधी बताते हैं। प्राचीन भारत में चिकित्साविज्ञान का शल्य-चिकित्सा नामक अंग भी उन्नत हुआ था और जैसा कि आप सब महानुभाव जानते हैं सुश्रुत में चीर-फाड़ के लगभग १२१ यन्त्र-शस्त्रों का वर्णन मिलता है, जिनमें लैंसिट, फोर्सेप्स और कैथेटर भी हैं तथा उन दिनों कदाचित् शुद्धरक्तवहा नाड़ियों के बन्धन को छोड़ कर, बड़ी बड़ी लगभग सभी शल्य-क्रियायें की जाती थीं। पीड़ा का अनुभव न हो, इस दृष्टि से शून्यता और संज्ञाहीनता पैदा करने के लिये सुश्रुत और चरक दोनों ही औषध-प्रयोग का वर्णन करते हैं। आज भी देश में ऐसे बहुत से आयुर्वेद-विशेषज्ञ हैं, जो अस्थिभंग, सर्पदंश, नेत्र और नासिका रोगों को आश्चर्यजनक ढंग से दूर कर देते हैं तथा कायाकल्प की विधि भी जानते हैं।

महानुभाव! इस प्राचीन विज्ञान को इसके आधुनिक विरोधियों द्वारा उपहासित होते हुए देख कर मुझे अति दुःख होता है। इसके अतिरिक्त हमारे शासकों ने इस पद्धति के प्रति शताब्दियों तक निरन्तर जो अपराधपूर्ण उपेक्षावृत्ति धारण की, वह इस विज्ञान के लिये एक घृणित, पर साथ ही मैं कहूंगा, एक गर्वपूर्ण अभिलेख है। सरकार और जनता दोनों के शताब्दियों के उपहास, उपेक्षा और उदासीनता के बाद भी आयुर्वेद जीवित रहा, यही सबसे बड़ी प्रशंसा है।

परन्तु यदि मैं विनम्रता के साथ यह कहूं कि आयुर्वेद-संसार में सभी कुछ ठीक नहीं है, तो मैं अपने कर्तव्य से च्युत हो जाऊंगा। मेरा विचार है कि आयुर्वेदाचार्यों अर्थात् इस सम्मेलन को रूस के "आत्म-पर्यालोचन" की शरण लेनी चाहिये। आयुर्वेद क्षेत्र में ऐसी अनेक दिशायें हैं, जिनमें गवेषणा करने की आवश्यकता है। आयुर्वेद के ज्ञान को क्रमबद्ध करना और औषधों को निश्चित मानदंड के अनुसार बनाने की व्यवस्था करना आपका कर्तव्य है। इस सम्मेलन को चाहिये कि वह उत्तर प्रदेश के प्रधान वैद्य स्वर्गीय शालिगराम, शास्त्री की, जो वैद्यों में कट्टरता, धोखेबाजी, अहम्मन्यता और असहिष्णुता के कट्टर शत्रु थे, भावना को लेकर कट्टरता का समूलनाश करें। मुझे विश्वास है कि यहां पर जो विद्वान् एकत्रित हुए हैं, वे इस बात को तुरन्त मान लेंगे कि हमारा प्राचीन चिकित्साविज्ञान और चिकित्साक्रिया मरणासन्न हो चुके हैं और आप जैसे वैज्ञानिक ही ज्ञान की भूमी से अज्ञान करके आयुर्वेद के सारभाग को प्रकाश में ला सकते हैं।

मेरा आयुर्वेद-प्रेम आधुनिक पाश्चात्य चिकित्सा-पद्धति और आधुनिक शल्यचिकित्सा की आश्चर्यजनक प्रगति के प्रति मेरी प्रशंसा को कम नहीं करता और मेरे अन्तःकरण की यह भावना तथा विश्वास है कि हमारे देश की स्वास्थ्य-समस्या तब अधिक शीघ्रता से और अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से हल हो सकती है, जब आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा-प्रणाली का किसी प्रकार संश्लेषण हो जाय। प्राचीन और आधुनिक चिकित्सा पद्धतियों में प्रतिस्पर्द्धा क्यों हो, जब दोनों ही रुग्ण मानवसमाज की सेवा में निरत हैं ? इसके बजाय तो अर्द्ध-पुष्ट और दुर्बल जनता को अधिक से अधिक लाभ पहुंचाने में स्वस्थ और सहकारिता के आधार पर प्रतिस्पर्द्धा की जाय, तो अच्छा। कौन जानता है कि इस संश्लेषण के प्रयत्न से भारत को कुछ ऐसे आश्चर्यजनक चिकित्सा-रत्न प्राप्त हो जायें, जो चिकित्साविज्ञान के लिये भारत की एक विशेष देन समझे जायें। मेरा विश्वास है कि आयुर्वेद एक ऐसा व्यापक विज्ञान है कि वह अपने आधारभूत सिद्धान्तों को सरलता से आत्मसात् करता है।

व्यापारी की हैसियत से आयुर्वेद की समस्या को मैं क्रियात्मक दृष्टिकोण से देखता हूं। साधारण आदमी को तो केवल क्रियात्मक पहलू से ही सम्बन्ध रहता है। सत्य वह है जो काम करे और औषध वह है जो रोग शाँति करे, तथा साथ ही सस्ती, सादी, प्रभावपूर्ण और पास ही में मिलने वाली हो। इस कसौटी पर कस कर देखने से विदित होता है कि हमारी देशी चिकित्सा-पद्धति में हमारे इस निर्धन और घनी आबादी वाले देश के लिये अपार सम्भावनायें मौजूद हैं। ऐलोपैथी हमारे राष्ट्रीय स्वास्थ्य की समस्या को शीघ्रता से और सन्तोषजनक ढंग से हल नहीं कर सकती। १२५ वर्ष के पक्षपात-पूर्ण व्यवहार और अपार धनव्यय के बाद भी, हम प्रति २५ सहस्र व्यक्तियों के लिये ऐलोपैथी के एक डाक्टर की व्यवस्था करने में समर्थ नहीं हो सके और हमारी सरकार प्रति सहस्र व्यक्तियों के लिये एक डाक्टर रखने का स्वप्न देख रही है। भोर-समिति ने प्रति छः सहस्र व्यक्तियों के लिये एक डाक्टर की व्यवस्था करने के लिये २ अरब ६३ करोड़ रुपये अनावर्तक और ६ अरब १ करोड़ रुपये की आवर्तक व्यय की शिफारिश की थी। महात्मा गांधी के अनुसार ऐसी योजना हमारे गरीब करदाता के लिये अत्यधिक चकाचौंध पैदा करने वाली दिखावटी और अधिक व्यय-साध्य होगी। इसलिये मेरा विचार है कि समस्या का अन्तिम समाधान देशी चिकित्सा-पद्धतियों को प्रोत्साहित और उन्नत करने से ही होगा। अतः मैं केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकारों तथा देश के धनी-मानी सज्जनों से अपील

करना चाहता हूं कि वे यथाशक्ति आयुर्वेद की सहायता करें। मैं देश में आयुर्वेदीय विद्यालयों, आतुरालयों, गवेषणाशालाओं और औषधि-स्थानों की शृंखलायें देखना चाहता हूं।

वैद्य बन्धुओ! हमारे पिछले प्रभुओं ने आपके मार्ग में जो बाधायें डाली थीं और जो उपेक्षावृत्ति धारण की थी, उसका मुझे पूरा ज्ञान है, परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि हमारे देश में स्वातन्त्र्य-सूर्य के उदय के साथ ही, आयुर्वेद पर छाई हुई कालरात्रि दूर हो गई है और आयुर्वेद शीघ्र ही देश में अपने अभीष्ट स्थान को प्राप्त करने वाला है। कृपया आप हमारे नेताओं में, जो इस समय शासन-सूत्र को धारण किये हुए हैं, आस्था रखिये। हमारी प्राचीन संस्कृति के सब अंगों के प्रति उनका प्रेम किसी से कम नहीं है। यदि आप सब लोग संकीर्ण दृष्टिकोण को छोड़ कर और प्राचीन ऋषियों की जिज्ञासावृत्ति को धारण करके, अपने उद्देश्य में पूर्ण निष्ठा रखते हुए आगे बढ़ने का प्रयत्न करें, तो नेताओं से आपको न्याय ही नहीं, प्रेम और आदर भी प्राप्त होगा। इस बात की आप चिन्ता न करें कि आपकी खोज आपको कहां ले जाती है।

अपने शासकों के सामने भी मैं केवल अशोक का एक महत्त्वपूर्ण उदाहरण उपस्थित करना चाहता हूं, जिसका राज्यचिन्ह हमने अपने गणराज्य के लिये स्वीकार किया है। अशोक अपनी प्रजा के स्वास्थ्य का कितना ध्यान रखता था, इसका उल्लेख उसके एक उत्कीर्ण लेख से मिलता है। डा० वी० ए० स्मिथ ने इस लेख को उद्धृत करते हुए लिखा है कि "अशोक की पीड़ित मनुष्यों और पशुओं के प्रति सहानुभूति रोगियों के लिये आराम और सहायता की विस्तृत व्यवस्था के रूप में भी प्रकट हुई! केवल साम्राज्य के समस्त प्रान्तों में ही नहीं, मैत्री सम्बन्ध रखने वाले स्वतन्त्र राज्यों, दक्षिण भारत और पश्चिमी एशिया में भी मनुष्यों और पशुओं की चिकित्सा के प्रबन्ध की व्यवस्था की गई थी। जहां जड़ी-बूटियों और औषधियों का अभाव था, वहाँ आवश्यकतानुसार जड़ी-बूटियां लगाई जाती थीं, बाहर से मंगाई जाती थीं और वितरित की जाती थीं।"

महानुभाव! मुझे आपकी महत्त्वपूर्ण समस्याओं, शिकायतों, निराशाओं और महत्त्वाकांक्षाओं का भी कुछ ज्ञान है। परन्तु इनके विषय में मैं जान-बूझ कर चुप रहना चाहता हू। अब मैं आपको अपनी समस्याओं पर शान्ति और बुद्धिमत्तापूर्वक विचार करने के लिये छोड़ना चाहता हूं।

धन्वन्तरी, सुश्रुत, चरक तथा आयुर्वेद के अन्य प्राचीन तत्त्वद्रष्टा ऋषियों की आत्मायें आपके सम्मेलन को उत्प्राणित करें।

अध्यक्ष का चुनाव

सम्मेलन की अध्यक्षता के लिये आयुर्वेदमार्तण्ड वैद्य श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य का नाम लाला देशबंधु गुप्त सदस्य भारतीय संसद् ने प्रस्तावित किया, जिसका समर्थन प्रत्येक प्रांत की ओर से एक एक प्रमुख वैद्य द्वारा किया गया और करतलध्वनि के बीच आपने सभापति का आसन ग्रहण किया।

शुभकामना के सन्देश

महासम्मेलन के संयुक्त मन्त्री श्री केशवदेवजी आत्रेय ने प्राप्त हुये निम्न लिखित सन्देश प्रस्तुत किये :—

राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद

आयुर्वेदिक चिकित्सा-प्रणाली इस देश की अपनी चीज है। हमारे प्राचीन मनीषियों ने इस पर शास्त्रीय ढंग से गम्भीर गवेषणा करके इस प्रणाली को सफलता की चरम सीमा तक पहुंचाया था। सस्ता होने के साथ ही यह पद्धति रोग के मूल कारण को दूर करके रोगी को स्थायी रूप से निरोग करती है। वनस्पति की खोज, उसकी समुन्नति और औषधि-निर्माण की शास्त्रीय व्यवस्था इन सभी बातों पर हमारे आयुर्वेदिक विशारदों का अब पूरा ध्यान जाना चाहिए, जिससे कि यह प्रणाली फिर अपनी पुरानी प्रतिष्ठा प्राप्त कर सके और देश शरीर और बुद्धि से स्वस्थ और सबल हो सके। औषधि-निर्माण में एकरूपता लाना बहुत आवश्यक है, ताकि जनता को कहीं भी प्रामाणिक आयुर्वेदीय औषधि मिल सके। आज की वैज्ञानिक खोज की पद्धति से आयुर्वेद भी अपने को अलग नहीं रख सकता है। इस में शास्त्रियों को दिलचस्पी लेना चाहिए और यथासाध्य आधुनिक और प्राचीन पद्धतियों में सामंजस्य लाने का प्रयत्न करना चाहिये।

प्रधानमन्त्री पंडित जवाहरलाल नेहरू

१० फरवरी १९५० का आपका पत्र मिला। धन्यवाद। प्रधानमन्त्री-महोदय को दुःख है कि कार्याधिक्य के कारण वे लिखित सन्देश नहीं भेज सकेंगे। वह आपके सम्मेलन की हर प्रकार से सफलता चाहते हैं।

—एम० विक्रमशाह, निज मन्त्री
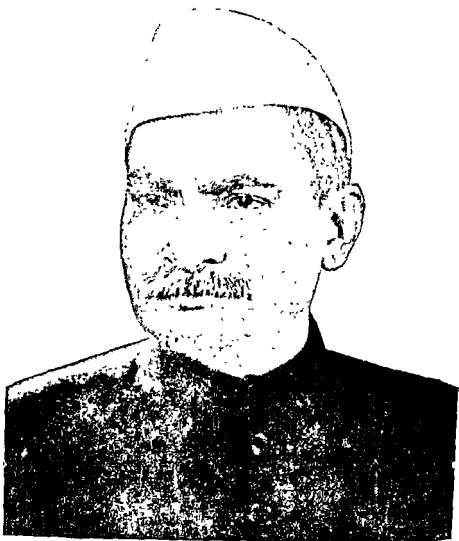
राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसादजी

आप सदा से ही आयुर्वेद के पोषक और प्रशंसक रहे हैं। आपकी शुभकामना महासम्मेलन को प्राप्त हुई थी। एक प्रस्ताव में महासम्मेलन ने भी आपसे आयुर्वेद के लिये महान आशायें प्रगट की थीं।)

श्री मोहनलाल सक्सेना

श्री मोहनलाल सक्सेना, पुनर्संस्थापन सचिव भारत सरकार

१६ फरवरी से २१ फरवरी १६५० तक होने वाले नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन में सम्मिलित होने के लिए आपका ता० १० फरवरी १६५० का कृपा पत्र मिला। मुझे दुःख है कि अन्य कामों में व्यस्त रहने के कारण सम्मेलन में उपस्थित होना मेरे लिए सम्भव नहीं होगा। आपके विचार विनिमय की हर प्रकार से सफलता चाहता हूं।

राजा महाराजसिंह, राज्यपाल-बम्बई

मुझे विदित हुआ है कि नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन का ३७ वाँ अधिवेशन फरवरी १६५० में दिल्ली में हो रहा है। बड़ी प्रसन्नता की बात है कि आयुर्वेद के समर्थक इस चिकित्सा-पद्धति की व्यापक मान्यता के लिए प्रयत्न कर रहे हैं। मैं सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

राजा महाराजसिंह

श्रीयुत कृष्णकुमारसिंहजी भावसिंहजी, राज्यपाल-मद्रास

दिल्ली में १६ फरवरी से २१ फरवरी १९५० तक होने वाले नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन के लिए मैं सद्भावना-सन्देश भेजना चाहता हूं। भारत में देशी चिकित्सा-पद्धतियों के लिए बड़ा सुन्दर भविष्य है। केवल अपेक्षित यह है कि समुचित प्रशिक्षण और एकीकरण द्वारा इस प्राचीन पद्धति का जनता के अधिकाधिक लाभ के लिए बुद्धिमत्तापूर्वक सदुपयोग किया जाय।

मुझे विश्वास है कि सम्मेलन की कार्रवाई से इस विज्ञान की उन्नति में सहायता मिलेगी। मैं सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

श्री माधव श्रीहरि अणे
राज्यपाल बिहार

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आयुर्वेद-महासम्मेलन का अधिवेशन देहली में १९ फरवरी को हो रहा है। मुझे आशा है कि सम्मेलन सरकार से आयुर्वेद-चिकित्सा-पद्धति को स्वीकार करने की प्रार्थना करेगा तथा उसके विस्तार एवं उन्नति के साधन बताएगा। भारतीय जनता के लिए इस प्राचीन चिकित्सा-पद्धति की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है और जन-स्वास्थ्य-प्रदायक इस अत्यन्त अल्प-व्यय-साध्य प्रणाली का सरकार द्वारा उपयोग तथा रक्षा होनी चाहिए। मैं सम्मेलन की सफलता चाहता हूं।

श्री माधव श्रीहरि अणे

श्री एम० वैद्यनाथ अय्यर बी० ए०, बी० एल०, सचिव-राजप्रमुख कोचीन ट्रावनकोर संघ

दिल्ली में १९ फरवरी से २१ फरवरी तक होने वाले नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन के सम्बन्ध में आपका २० जनवरी १९५०

भारतीय पार्लमेण्ट के अध्यक्ष माननीय श्री मावलंकर

(आपने आयुर्वेद के प्रति अपनी निष्ठा का परिचय महासम्मेलन को भेजी गई शुभकामना में भी दिया है।)

श्रीयुत कृष्णकुमारसिंहजी भावसिंहजी, राज्यपाल-मद्रास

दिल्ली में १९ फरवरी से २१ फरवरी १९५० तक होने वाले नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन के लिए मैं सद्भावना-सन्देश भेजना चाहता हूं। भारत में देशी चिकित्सा-पद्धतियों के लिए बड़ा सुन्दर भविष्य है। केवल अपेक्षित यह है कि समुचित प्रशिक्षण और एकीकरण द्वारा इस प्राचीन पद्धति का जनता के अधिकाधिक लाभ के लिए बुद्धिमत्तापूर्वक सदुपयोग किया जाय।

मुझे विश्वास है कि सम्मेलन की कार्रवाई से इस विज्ञान की उन्नति में सहायता मिलेगी। मैं सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

श्री माधव श्रीहरि अणे
राज्यपाल बिहार

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आयुर्वेद-महासम्मेलन का अधिवेशन देहली में १९ फरवरी को हो रहा है। मुझे आशा है कि सम्मेलन सरकार से आयुर्वेद-चिकित्सा-पद्धति को स्वीकार करने की प्रार्थना करेगा तथा उसके विस्तार एवं उन्नति के साधन बताएगा। भारतीय जनता के लिए इस प्राचीन चिकित्सा-पद्धति की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है और जन-स्वास्थ्य-प्रदायक इस अत्यन्त अल्प-व्यय-साध्य प्रणाली का सरकार द्वारा उपयोग तथा रक्षा होनी चाहिए। मैं सम्मेलन की सफलता चाहता हूं।

श्री माधव श्रीहरि अणे

श्री एम० वैद्यनाथ अय्यर बी० ए०, बी० एल०, मन्त्रि-राजप्रमुख कोचीन ट्रावनकोर संघ

दिल्ली में १९ फरवरी से २१ फरवरी तक होने वाले नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन के सम्बन्ध में आपका २० जनवरी १९५०

राजप्रमुख, पटियालासंघ

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि नि० भा० आयुर्वेद-सम्मेलन का ३७ वां अधिवेशन दिल्ली में शीघ्र ही होने वाला है। पाश्चात्य-चिकित्सा-विज्ञान के पदार्पण के साथ ही उस पर आधारित नई संस्थाओं की उन्नति पर जोर दिया जाते रहने के कारण, बहुत दिनों से इस देशी-चिकित्सा-पद्धति को पर्याप्त प्रोत्साहन न मिल सका। फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो आयुर्वेदीय पद्धति आरम्भ में स्थायी आर्थिक और भौतिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर बनाई गई थी, उसे यदि इस प्रकार से उन्नत किया जाय कि वह आगे गवेषणा के लिये क्षेत्र तैयार करने में समर्थ हो सके, तो अधिक लाभ हो सकता है।

महाराजाधिराज पटियाला

यदि ग्रामीण क्षेत्रों में आयुर्वेदीय औषधालय खोलने के लिये संगठित प्रयत्न किया जाय तो भी बहुत सहायता मिल सकती है, क्योंकि आयुर्वेदीय औषधों पर व्यय निश्चित रूप से बहुत कम होगा और जो ग्रामीण अनपढ़ होने के कारण स्वभावतः पाश्चात्य-चिकित्सा-पद्धति के प्रति अधिक आकर्षित नहीं होते, उन पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ेगा।

मैं सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

प्रधान मन्त्री-पेप्सू

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि नि० भा० आयुर्वेद महा-सम्मेलन का ३७ वां अधिवेशन देहली में होने जा रहा है। मुझे आशा है कि उसके द्वारा भारतीय-चिकित्सा के प्रति अधिक से अधिक अनुराग पैदा करने में सफलता प्राप्त हो सकेगी। श्री धन्वन्तरि जैसे महान वैद्यों के द्वारा आयुर्वेद उस समय पूर्णता को पहुंच गया था जिस समय आधुनिक चिकित्सा का विश्व को ज्ञान भी नहीं था। भारत को आज ऐसी चिकित्सा-प्रणाली की अतीव आवश्यकता है क्योंकि यह धनवान और निर्धन दोनों के लिये एकसी

लाभदायक है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि विज्ञान के लिये आवश्यक सुविधाएं और साधन-सामग्री प्राप्त होने पर 'आयुर्वेद' कालानुरूप उन्नति प्राप्त कर सकेगा। जलवायु और अल्प-व्यय-साध्यता के कारण भारतीय जनता के लिये अधिक उपयोगी होने के कारण अवश्य ही राष्ट्रीय-चिकित्सा-पद्धति के पद से गौरवान्वित होगा। आयुर्वेद में शरीर-क्रिया-विज्ञान (Physiology) शारीर (Anatomy) निदान (Pathology), आदि आधुनिक-विज्ञान की सभी धाराओं का समावेश है। अतएव आयुर्वेद को इस पद के लिये दावा करने का पूर्ण अधिकार है। इस प्राचीन और पूर्ण विज्ञान के पुनरुद्धार के लिये आयुर्वेद महासम्मेलन के प्रयत्नों की मैं हृदय से सफलता चाहता हूं।

सरदार ईश्वरसिंह मझैल, एम० एल० ए० भूतपूर्व मन्त्री पंजाब

आयुर्वेद-सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिये आपका निमन्त्रण मिला। मुझे खेद है कि अन्य कामों में व्यस्त रहने के कारण मैं अधिवेशन में भाग न ले सकूंगा। फिर भी, इस अवसर पर मैं आपसे तथा आपके द्वारा अन्य-समस्त सम्बन्धित वैद्यों से प्रार्थना करता हूं कि आप इस चिकित्सा-पद्धति के मानदण्ड और क्षेत्र को ऊंचा और विस्तृत करें। एलोपैथी हमारे देश की परिस्थितियों के अनुकूल नहीं है। हमें अपने "प्रभुओं" की इच्छानुसार चलने के लिये सब प्रकार से बाध्य किया गया था, इसीलिये हमने चिकित्सा-प्रणाली स्वीकार करली थी। स्वतन्त्रता की प्रभातवेला से यह दास-मनोवृत्ति समाप्त हो जानी चाहिए।

महासम्मेलन को चाहिये कि वह आयुर्वेद को लोकप्रिय बनाने में कोई बात उठा न रखे तथा एलोपैथी की उत्तम वस्तुओं को भी आत्मसात् कर ले।

मैं आपकी सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय, प्रधान मन्त्री-मध्यभारत संघ

अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेदिक कांग्रेस के ३७ वें अधिवेशन में सम्मिलित होने का निमन्त्रण प्राप्त हुआ। तदर्थ धन्यवाद

भारतवर्ष ने प्राचीन समय में कला तथा विज्ञान के क्षेत्र में बड़ी उन्नति की थी और हमारे देश को जगद्गुरु का अत्यन्त गौरवपूर्ण पद प्राप्त था। परन्तु कालचक्र ने पलटा खाया, देश परतन्त्र हुआ और उसका पतन होता गया। आज शताब्दी की परतन्त्रता के पश्चात् भारतवर्ष फिर स्वतंत्र हुआ है और हमें अपनी प्रतिभा का विकास करने का अवसर प्राप्त हुआ है।

मेरा विश्वास है कि आयुर्वेद-चिकित्सा-पद्धति इस देश के लिये उपयुक्त एवं हितकर है। आवश्यकता इस बात की है कि उसमें पर्याप्त अन्वेषण किया

जाये एवं विभिन्न आधुनिक चिकित्सा-पद्धतियों की अच्छाइयों का इसमें समावेश हो। मैं आपके सम्मेलन की पूर्ण सफलता चाहता हूं।

डा० टी० एम० एम० राजन, स्वास्थ्य मन्त्री-मद्रास

दिल्ली में १६ फरवरी से २१ फरवरी १६५० तक होनेवाले नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन के लिये आपके निमन्त्रण के लिए धन्यवाद। मैं सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

पं० लिंगराज मिश्र, स्वास्थ्य मन्त्री-उड़ीसा।

दिल्ली में १६ फरवरी से २२ फरवरी १६५० तक होनेवाले नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के इस ३७ वें अधिवेशन के लिये आपके द्वारा भेजे गये निमन्त्रण के लिये अनेक धन्यवाद। मुझे खेद है कि अन्य कामों में व्यस्त रहने के कारण मैं इस अधिवेशन में सम्मिलित न हो सकूंगा। मैं आपके सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

श्री डब्लू० एम० वार्लिंगे लोक-स्वास्थ्यमन्त्री-मध्य प्रदेश

मैं उनमें से हूं जिनका यह विश्वास है कि इस देश की स्वास्थ्य-समस्या तब तक हल नहीं हो सकती है, जब तक आयुर्वेद का आधुनिक ढग से सुधार नहीं हो जाता। मैं आपके सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

श्रीयुत श्रीप्रकाशजी राज्यपाल-आसाम

निमंत्रण के लिये धन्यवाद। दुःख है उपस्थित नहीं हो सकूंगा। मैं महासम्मेलन की सफलता के लिए शुभकामनाएं भेजता हूं। मैं इस अत्यन्त ही लाभदायक प्रणाली की महत्ता को व्यक्तिगत रूप से प्रमाणित कर सकता हूं। मुझे आशा है कि इस में अनुसन्धान के सक्रिय उपाय किए जायेंगे।

श्रीयुत जगलाल चौधरी

मन्त्री सार्वजनिक स्वास्थ्य और हरिजन-कल्याण, विहार।

भारत जैसे देश में, जहां कि अधिकांश जनता गरीब है और जहां बहुत से निर्धन रोगी राजकीय चिकित्सा-पद्धति एलोपैथी के व्यर्थ भार को उठाने की अपेक्षा चिकित्सा सहायता के अभाव में मर जाना अधिक पसन्द करते हैं, देशी चिकित्सा-पद्धति, जो अत्यन्त सरल और अल्प व्ययसाध्य है, जनता और सरकार दोनों के समर्थन की अपेक्षा रखती है। भारत के सार्वजनिक कल्याण के लिये समर्थन प्राप्त करने की दृष्टि से किया जानेवाला प्रत्येक प्रयत्न प्रशंस-

नीय है और मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन का २७ वां अधिवेशन दिल्ली में हो रहा है।

मुझे विश्वास है कि यह अधिवेशन भारतीय-चिकित्सा-पद्धति को जो अकेली ही इस देश के रुग्ण जन-समाज के लिये सहायक सिद्ध हो सकती है, लोकप्रिय बनाने के लिए आवश्यक उपाय और साधन ढूंढ निकालेगा।

काश्मीर व जम्मू के युवराज

दिल्ली में होने वाले नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन के २७ वें अधिवेशन के सम्बन्ध में आपका पत्र मिला।

मुझे खेद है कि कई कारणों से मैं स्वयं सम्मेलन में उपस्थित न हो सकूंगा; मैं यह भी समझता हूं कि जो लोग चिकित्सा-पद्धति के सुधार के सम्बन्ध में विचार करने के लिये वहां एकत्रित होंगे, उनके पथ-प्रदर्शन या ज्ञानवर्द्धन के लिये मैं कुछ कह भी न सकूंगा। परन्तु ऐसे अवसरों पर एक बात हर कोई कर सकता है और करनी चाहिये। वह है उत्साही कवि को उत्साहजनक शब्दों द्वारा प्रोत्साहित और उत्प्राणित करना और ऐसा मैं सच्चे हृदय से करता हूं।

श्री कर्णसिंह

उस चिकित्सा-पद्धति के, जो मेरे विचार में वैज्ञानिक है और इस देश की जनता के लिये सर्वथा उपयुक्त है, सुधार और प्रसार के लिये किये जाने वाले आपके प्रयत्नों की सफलता के लिये मैं हार्दिक अभिनन्दन और शुभकामनायें भेजता हूं। यह देशी है, परन्तु इसकी केवल यही अनुशंसा नहीं है। यह ऐसी चिकित्सा-पद्धति है, जिसको इस निर्धन देश की जनता भी अपना सकती है।

मैं आयुर्वेद की उन्नति द्वारा मातृभूमि की सेवा के लिये किये जानेवाले प्रयत्नों में सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं।

स्वास्थ्य मन्त्री-सौराष्ट्र।

२७ वें सम्मेलन के निमन्त्रण के लिये धन्यवाद। अन्यथा व्यस्त रहने के कारण सम्मेलन में सम्मिलित न हो सकने के लिये आप मुझे क्षमा करेंगे। मैं सम्मेलन की महती सफलता चाहता हूं। आशा है आयुर्वेद भारत की राष्ट्रीय चिकित्सा-पद्धति के रूप में पूर्णतया कार्य करने लगेगा।

श्री एस० राधाकृष्णन्

श्री एस० राधाकृष्णन्, भारतीय राजदूत-मास्को

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि नि० भा० आयुर्वेद-महासम्मेलन का ३७ वां अधिवेशन फरवरी के दूसरे सप्ताह में दिल्ली में हो रहा है। मुझे आशा है कि यह अधिवेशन अति सफल होगा।

महाराज कोचीन

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का ३७ वां अधिवेशन १६ फरवरी से २१ फरवरी तक दिल्ली में हो रहा है। मैं सम्मेलन की सब प्रकार से सफलता चाहता हूं और आशा करता हूं कि स्वतन्त्र भारत आयुर्वेद की उन्नति के लिये कोई बात उठा न रखेगा। आयुर्वेद मानव-समाज के कल्याण के लिये प्रगतिशील बने - ऐसी मेरी शुभकामना है।

महासम्मेलन के अध्यक्ष आयुर्वेद मार्तण्ड वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य का भाषण

आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी ने तुमुल करतलध्वनि के बीच अपना निम्न लिखित भाषण दिया—

श्री धन्वन्तरिर्विजयतेतराम् ।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥

परमादरणीय वैद्यगण ! अन्य महानुभाव ! और सन्नारियो !

इस समय भारतवर्ष में मुझ से अधिक ज्ञानवृद्ध, वयोवृद्ध और कर्मण्य विद्वान् वैद्यों के रहते हुये भी आयुर्वेद महासम्मेलन के सदस्यों ने मुझे इस अधिवेशन के अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया, इसलिये मैं आपका आभार मानता हूँ।

भारतवर्ष को स्वतन्त्र सार्वभौमत्व प्राप्त होने के पीछे अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन का यह पहला अधिवेशन है । भारतवर्ष को स्वतन्त्र सार्वभौमत्व प्राप्त होने पर वैद्य-समाज को उतना ही आनन्द हुआ है, जितना और प्रजाजनों को हुआ है। इस समय वैद्य-समाज में यह प्रबल आशा उत्पन्न हुई है कि स्वतन्त्र भारत में भारतीय चिकित्सा-पद्धति (आयुर्वेद) को वह स्थान पुनः प्राप्त होगा, जो देश पर विदेशी शासन प्रारम्भ होने के पहिले था । वैद्यों की यह आशा स्वाभाविक ही है ।

प्राचीन समय में जब कि भारतवर्ष स्वतन्त्र था, तब इस देश में केवल आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति ही प्रचलित थी और यह देश की सब प्रकार की आवश्यकताओं को पूर्ण करने तथा देश के आरोग्य-रक्षण के लिये समर्थ थी, इस बात को सब स्वीकार करते हैं । जब कि अन्य देशों में चिकित्सा-शास्त्र बाल्यावस्था में था तब इस देश में आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति ने उन्नत स्थान प्राप्त किया था और यह प्रगतिशील थी । इस समय अन्य देशों के वैद्य इस देश में आकर चिकित्सा-शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करते थे।
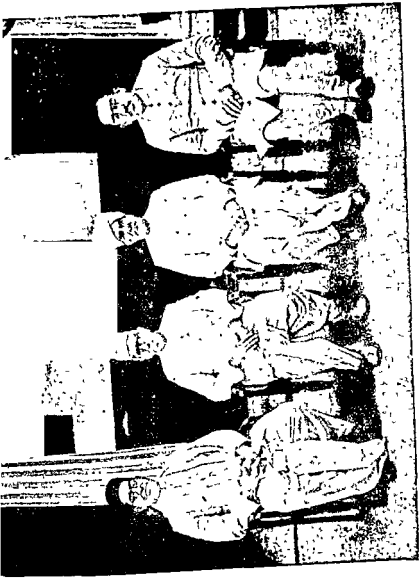
वैद्य ओंकारप्रसादजी शर्मा—उपाध्यक्ष नि० भा० आयुर्वेद कांग्रेस, आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी अध्यक्ष नि० भा० आयुर्वेद कांग्रेस, आचार्य श्री मणिरामजी शर्मा, अध्यक्ष-आयुर्वेद विद्यापीठ सम्मेलन और श्री केशवप्रसादजी आत्रेय—संयुक्तमन्त्री—नि० भा० आयुर्वेदिक कांग्रेस।

"अमर भारत"-कार्यालय में दिल्ली के हिन्दी पत्रकारों की ओर से वैद्यमण्डली का स्वागत—कविराज हरिदत्तजी जोशी, वैद्य कन्हैयालालजी भेड़ा, आचार्य श्री गोवर्धनजी शर्मा छांगाणी, आचार्य श्री मणिरामजी, वैद्य रामनिवासजी जोशी, वैद्य सीतारामजी

प्राचीन समय में आयुर्वेद-प्रवर्तक महर्षि लोग वैद्यों की परिषदें भर कर शास्त्रीय विषयों की चर्चा करते थे। उस समय समग्र चराचर सृष्टि के मूल कारण समग्र बाह्य सृष्टि में तथा मनुष्य शरीर में होने वाले व्यापार (क्रियायें), रोगों के कारण और रोग निवारण, जनपदोध्वंसक (Epidemics) रोगों के कारण और उनका निवारण तथा आहार और औषधद्रव्यों के गुण-कर्मों की परीक्षणपद्धति उनकी चर्चा के मुख्य विषय होते थे। अनेक परिषदों में हुए ऊहापोह और विचार-विनिमय के बाद सिद्धान्त स्थापित होते थे। आज से दो हजार वर्ष पूर्व भारतीय चिकित्सा-शास्त्र के मूल सिद्धान्त लगभग निश्चित हो चुके थे। उस समय उनके सामने जो मतमतान्तर उपस्थित थे, उनका उन्होंने समन्वय करके निश्चित सिद्धान्त स्थापित किये थे। उस समय को आयुर्वेद का आर्षकाल कह सकते हैं।

आर्षकाल के अनन्तर विद्वान् वैद्यों के दीर्घकाल के अनुभवों से सिद्ध नवीन-नवीन औषधि कल्पों की आयुर्वेद में वृद्धि होती रही। इस समय में यहां रस-शास्त्र, जिसका बीजारोपण आर्षकाल में हो चुका था उसका विकास हुआ। भारतवर्ष में रस-शास्त्र का विकास योग सिद्ध के लिये देह को दीर्घजीवी, सुदृढ़ और निरोग बनाने की कामना वाले योगियों ने किया था। निकृष्ट धातु से उच्च धातु (सोना, चांदी) बनाना उनका मुख्य उद्देश्य नहीं था। रस-शास्त्र के विकास मे पतञ्जलि आदि योगाचार्य, नागार्जुन आदि बौद्ध-भिक्षु और नित्यनाथ सिद्ध आदि नाथ सम्प्रदाय के विरक्त महात्माओं का बड़ा हाथ था। रस-शास्त्र के विकास ने भारतीय चिकित्सा पद्धति की एक प्रकार से काया पलट ही कर दी थी। उसने अनेक दीर्घकाल स्थायी, अल्प मात्रा में अधिक गुण-प्रद और सुख-सेव्य औषधि-कल्पों की सृष्टि की थी। कहने का तात्पर्य यह है कि मध्यकाल में भी आयुर्वेद प्रगतिशील ही रहा है।

मुसलमानों के शासन-काल में यहां राज्य ने या शासकों ने आयुर्वेद को प्रोत्साहन न भी किया हो, तथापि इसकी उन्नति में कोई बाधा भी नहीं डाली थी। मुसलमानों के शासन-काल में यहां अनेक चिकित्सा ग्रन्थ और व्याख्या ग्रन्थ लिखे गये इस से ऐसा अनुमान किया जा सकता है।

भारतवर्ष में मुसलमानों का राज्य स्थापित होने पर इस देश में यूनानी चिकित्सा-पद्धति का प्रचार हुआ। परन्तु मौलिक सिद्धान्तों के विषय में आयुर्वेद और यूनानी वैद्यक में अनेक अंशों में समानता होने के कारण तत्समय के वैद्यों को आयुर्वेद के आधार मूल सिद्धान्तों पर पुनः विचार करने

की आवश्यकता प्रतीत न हुई हो, ऐसा प्रतीत होता है। उस समय के द्रव्यगुण और चिकित्सा के ग्रन्थों को देखते हुये मालूम होता है कि यूनानी वैद्यक में वर्णित कुछ भी औषधि-द्रव्यों और औषध-कल्पों को उन्होंने अपने ग्रन्थों में स्थान दिया है।

उसके पीछे-इस देश में अंग्रेजी राज्य स्थापित और पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति (एलोपैथी) प्रचलित हुई। अंग्रेजों के शासन और एलोपैथी चिकित्सा-पद्धति के प्रचार का आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति पर क्या प्रभाव पड़ा है, हमारी राष्ट्रीय सरकार का इस समय आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति के विषय में क्या भाव है और देश के हित के लिये उसके बदलने की कितनी आवश्यकता है; इस विषय पर त्यागमूर्ति स्वामी श्री मङ्गलदासजी ने आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका के जनवरी सन् १९५० के अंक में मार्मिक विश्लेषण और विवेचन किया है, उस लेख को पुस्तिका के रूप में पुनः मुद्रित कराकर आपकी सेवा में वितीर्ण किया गया है, उसको पढ़ने से आपको मालूम होगा। स्वामी श्री मङ्गलदासजी के लेख से मैं पूर्ण सहमत हूं। इसलिये मैं इस विषय को आपके सामने पुनः दोहरा कर आपका अमूल्य समय लेना नहीं चाहता।

पाश्चात्य चिकित्सा-पद्धति में सृष्टि के मूल कारण विषयक पञ्चभूत सिद्धान्त के स्थान पर १८ तत्त्वों (एलीमेंट्स) का सिद्धान्त तथा रोगोत्पत्ति के कारणों में अहित आहार विहार के उपरान्त कीटाणुओं को भी कारण मानने का सिद्धान्त इस समय प्रचलित है। पाश्चात्य चिकित्सकों की ओर से आयुर्वेद का माना हुआ पंचभूत सिद्धान्त और त्रिदोष सिद्धान्त ये आधुनिकविज्ञान की परीक्षा में न उतरने वाले काल्पनिक सिद्धान्त हैं, ये आक्षेप किये जाते हैं। इन आक्षेप करने वालों में से अधिकांश डाक्टरों ने आयुर्वेद के किसी भी प्रामाणिक ग्रंथ को देखने का कष्ट नहीं उठाया है, ऐसा प्रतीत होता है। किसी ने कुछ देखा भी तो आयुर्वेद के संस्कृत ग्रंथों के एतद्देशीय या अंग्रेजी भाषान्तर देखे और उनके आधार पर अपनी सम्मति बनाई। आयुर्वेद का सम्पूर्ण वाङ्मय संस्कृत में है और उसके आधारभूत सिद्धान्तों की आधारशिला वैदिक वाङ्मय और दर्शन हैं। संस्कृत भाषा के सम्यग्ज्ञान और दर्शनशास्त्र के अध्ययन के बिना आयुर्वेद के सिद्धान्तों को ठीक समझना कठिन है। पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञ डाक्टरों में भी जो लोग संस्कृत भाषा की जानकारी रखते थे और जिन लोगों ने आयुर्वेद का भली प्रकार अध्ययन किया उन लोगों ने आयुर्वेद को अपनाया है। यहां यह बात भी विशेषरूप से ध्यान में रखने योग्य है कि इस समय इस देश में

डाक्टरों और वैद्यों के बीच जो संघर्ष चल रहा है वह शास्त्रीय स्वरूप का नहीं, अपितु व्यापारिक स्वरूप का है।

इस समय वैद्यों का प्रथम कर्तव्य यह है कि वे अपने मूलभूत सिद्धान्तों पर फिर से विचार करें। उनका आधुनिक विज्ञान और चिकित्सा-शास्त्र के साथ समन्वय कैसे और कहां तक हो सकता है, इसका विचारपूर्वक निर्णय करें और उन सिद्धान्तों की यथार्थता और उपयोगिता जगत् के सामने प्रमाणित करें। इस तरह का प्रयत्न एक बार बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित हुई पंचभूत-त्रिदोष-चर्चा परिषद् में हुआ भी था। उस समय और उसके पीछे पञ्च-महाभूत और त्रिदोष-सिद्धान्त पर कुछ ग्रंथ भी प्रकाशित हुए हैं। परन्तु ऐसी एकाध परिषद् से ऐसे विषयों का निर्णय और आक्षेपों का परिहार होना सम्भव नहीं है। ऐसी कई परिषदें होनी चाहिये, जिनमें कुछ चुने हुये विद्वान् वैद्य, डाक्टर, दार्शनिक और वैज्ञानिक एकत्र सम्मिलित होकर पूर्वग्रहरहित मन से केवल सत्यान्वेषण की बुद्धि से चर्चा एवं विचार विनिमय करें, तब ही हो सकता है। इस समय जो अखिल भारतवर्षीय और प्रांतीय वैद्यसम्मेलन हो रहे हैं, वे प्रायः शास्त्रीय नहीं परन्तु राजकीय स्वरूप के हैं। ऐसे सम्मेलन भले ही प्रति वर्ष होते रहें, परन्तु विद्वत्परिषद् भी वर्ष में एक दो बार अवश्य होनी चाहिये, जिसमें विद्वान् लोग एकत्र सम्मिलित होकर केवल शास्त्रीय विचारों की ही चर्चा करें।

इस बात को सब कोई स्वीकार करेंगे कि दो ढाई हजार वर्षों के विदेशियों के बाह्य आक्रमण, अनेक बार हुए राज्य विप्लव, अन्तःकलह तथा राज्याश्रय के अभाव के कारण आयुर्वेद इस समय जीर्ण-शीर्ण हुआ है; आयुर्वेद की अनेक ग्रन्थ-सम्पत्ति नष्ट हुई है; आयुर्वेद के आठ अंगों में से केवल कायचिकित्सांग का प्रचार शेष रहा; अतः आयुर्वेद में अनुसन्धान और नवसाहित्य-निर्माण द्वारा इसका जीर्णोद्धार होना आवश्यक है। इस समय आयुर्वेद का कायचिकित्सांग जो जीवित रहा है वह भी अपने सिद्धांतों के बल और हमारे पूर्वजों की औषध-कल्पों की देन पर ही जीवित है और इस देश की अधिकांश जनता की सेवा कर रहा है।

आयुर्वेद के जीर्णोद्धार एवम् नवनिर्माण के लिये निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना उचित होगा।

१—आलोच्य और पाठ्यग्रन्थों का निर्माण—

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ ने अध्ययन, अध्यापन और परीक्षाओं के सौकर्य के लिये विषयप्रधान पाठ्यक्रम (कोर्स) निश्चित

किया है, भारतवर्ष में इस समय विद्यालयों में प्रायः विषय प्रधान पाठ्यक्रम ही चल रहा है। इस पाठ्यक्रमानुसार प्रत्येक विषय पर स्वतन्त्र ग्रन्थों के निर्माण की आवश्यकता है। परन्तु अभी तक विषयप्रधान ग्रन्थ यथेष्ट प्रमाण में तैयार नहीं हुए हैं। विषयप्रधान ग्रन्थ दो प्रकार के बनाने होंगे—१—आलोच्यग्रन्थ (रेफरन्सबुक); २—पाठ्यग्रन्थ (टेक्स्ट बुक)। आलोच्यग्रन्थों में (आयुर्वेद वाङ्मय में तथा संस्कृत वाङ्मय में भी) उपलब्ध आयुर्वेद-वचनों का तथा उनकी प्राचीन एवं अर्वाचीन व्याख्याओं का संग्रह करना होगा—ऐसे ग्रन्थ, अध्यापक और अन्वेषक (रिसर्च स्कोलर) दोनों के लिये उपयुक्त होंगे। उनको इस विषय में प्राचीन वाङ्मय में आयुर्वेद सम्बन्धी जो कुछ साहित्य उपलब्ध है वह एकत्रित देखने को मिलेगा। उनका अनेक ग्रन्थों के खरीदने का व्यय तथा अनेक ग्रन्थों से उन विषयों को ढूंढ निकालने का परिश्रम बच जायगा। इस प्रकार के ग्रन्थों के निर्माण का कार्य नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन को यथाशक्ति शीघ्र करना चाहिए। दूसरे पाठ्यग्रन्थ ऐसे बनने चाहिये जो केवल विद्यार्थियों के पढ़ने-पढ़ाने के लिये उपयुक्त हों। पाठ्यग्रन्थों के निर्माण में इस समय प्राचीन आयुर्वेद में जो साहित्य उपलब्ध है उसका उपयोग कर लेना चाहिये और जहां आवश्यक हो वहां आधुनिक चिकित्सा-साहित्य से उनको आयुर्वेद के ढाँचे में बैठाकर उसकी पूर्ति कर लेनी चाहिये। इस समय आयुर्वेद के नव-स्नातकों की जो दुर्दशा देखने में आती है उसका एक कारण उपयुक्त पाठ्यग्रन्थों का अभाव भी है। इस समय आयुर्वेद विद्यालयों में एक ही विषय में आयुर्वेद और आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र के भिन्न भिन्न अध्यापक होते हैं और दोनों शास्त्रों के भिन्न-भिन्न पाठ्यग्रन्थों से विषय पढ़ाया जाता है, उसका परिणाम अच्छा नहीं निकलता है। इसलिये एक ही अध्यापक और एक ही पाठ्यग्रन्थ होना आवश्यक है।

पाठ्यग्रन्थ किस भाषा में लिखे जायें इस विषय में मतभेद पाया जाता है। कई विद्वानों का मत है कि पाठ्यग्रन्थ प्रथम राष्ट्रभाषा हिन्दी में बनने चाहिये और पीछे उनके यथावश्यक अन्य प्रान्तीय भाषाओं में अनुवाद होने चाहिये। कई विद्वानों का मत है कि अच्छे विद्वान् लेखक पहिले जिस भाषा में लिख सकें उसमें ग्रन्थ लिखवा कर उसका अन्य प्रान्तीय भाषाओं में अनुवाद होना चाहिये। मेरा मत है कि पाठ्यग्रन्थ संस्कृत भाषा में बनने चाहिये, चाहे प्रथम ही संस्कृत भाषा में लिखे जाएं या अन्य भाषा में लिखित ग्रन्थों का संस्कृत में अनुवाद कराया जाये। इस समय भारत की राष्ट्रभाषा भले ही हिन्दी हो जाय, परन्तु शास्त्रीय भाषा पहिले भी संस्कृत थी और आगे भी संस्कृत ही रहेगी। जैन और बौद्ध संप्रदाय के प्रवर्तकों ने अपने

आगम-ग्रन्थ पहिले मागधी और पाली भाषा में लिखे, परन्तु पीछे से इनको शास्त्रीय स्वरूप देने और समस्त भारत में उनका प्रचार करने के लिये उनको अपने आगम ग्रन्थों का संस्कृत में अनुवाद और उनकी संस्कृत में व्याख्याएं लिखनी पड़ीं। आज भी स्वतन्त्र भारत का विधान प्रथम अंग्रेजी में बना, परन्तु अब उसका संस्कृत में अनुवाद कराया जा रहा है। आज सम्पूर्ण भारत में नेपाल से कन्याकुमारी तक और काश्मीर से मणिपुर तक आर्य संस्कृति की जो एकता देखने में आती है, उसका एक मात्र कारण संस्कृत भाषा ही है। संस्कृत भाषा का भण्डार विपुल है। अन्य भाषाओं से विचारों को लेकर उनको अपनी भाषा में लिखते समय जितने पारिभाषिक शब्द बनाने पड़ेंगे वे संस्कृत भाषा में ही बनाने होंगे। सारे भारतवर्ष में पाठ्यग्रन्थों की एकरूपता रखने के लिये सब प्रान्तीय भाषाओं के पाठ्यग्रन्थों में समान पारिभाषिक शब्द ही रखने होंगे और यह समानता संस्कृत भाषा में पारिभाषिक शब्द बनाने से ही आ सकेगी। नवीन पारिभाषिक शब्द बनाते समय जहाँ तक सम्भव हो प्राचीन शब्दों का अन्वेषण कर के उनका ही प्रयोग करना चाहिये। यदि नवीन शब्द बनाने पड़ें तो वे प्राचीन सरणी के अनुसार अन्वर्थक और व्युत्पन्न ही बनाने चाहिये। यदि कारणवश ऐसे शब्द न बनाये जा सकें तो अर्थहीन और अव्युत्पन्न नवीन शब्द बनाने की अपेक्षा प्रचलित परिभाषा के शब्दों को ही लेना अच्छा है। पारिभाषिक शब्द सब प्रान्तीय भाषा के पाठ्यग्रन्थों में एक रूप के ही बरतने चाहिये। एक ही अर्थ में अनेक दुर्बोध और कपोलकल्पित शब्दों का प्रचार अनुचित ही है।

२—योग्य अध्यापक तैयार करना

इस समय आयुर्वेद के योग्य अध्यापक मिलना कठिन हो रहा है। आयुर्वेद विद्यालयों में योग्य अध्यापकों द्वारा आयुर्वेद का अध्यापन न होने के कारण विद्यार्थियों को आयुर्वेद के प्रति उपेक्षा और पाश्चात्य चिकित्सा के प्रति अभिरुचि अधिक देखी जाती है। इसलिये आयुर्वेद में जिनका अच्छा पाण्डित्य हो और आधुनिक चिकित्साशास्त्र का भी जिनको परिचय हो ऐसे अध्यापक तैयार करने के लिये सब प्रकार के साधनसंपन्न विद्यालयों में उचित प्रबन्ध किया जाना चाहिये।

३—आयुर्वेद में अनुसन्धान (रिसर्च)

इस समय आयुर्वेद में अनुसन्धान-कार्य आवश्यक है, ऐसा अधिकांश वैद्यों का मत है। हमारे राजकीय नेता, शासकवर्ग और कई डाक्टर भी यही कह रहे हैं। चोपड़ा कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में आयुर्वेद में अनुसन्धान

किस प्रकार हो, इसकी विस्तृत योजना दी है। बम्बई सरकार और केन्द्रीय सरकार ने अनुसन्धान के विषय में सिफारशें करने के लिये कमेटियाँ नियुक्त की हैं, उनकी रिपोर्ट अल्प समय में ही प्रकाशित होगी। आयुर्वेद महासम्मेलन को भी इस विषय में वैद्यों का दृष्टिकोण सरकार के सामने रखने और परामर्श देने के लिये विशेषज्ञों की समिति नियुक्त करनी चाहिये, जो आयुर्वेद में अनुसन्धान किस प्रकार हो इसकी विस्तृत योजना तैयार कर के सरकार के सामने रखे तथा सरकार या किसी संस्था द्वारा जो अनुसन्धान-कार्य करें उनको परामर्श और सहायता देने का कार्य करे। यदि इस कार्य में आयुर्वेद महासम्मेलन और वैद्यसमाज उदासीन रहा तो अनुसन्धान कार्य पर राज्य के द्वारा किये हुए धन का व्यय निष्फल जाने और अनुसन्धान कार्य से आयुर्वेद को लाभ के स्थान पर हानि होने की सम्भावना है।

आयुर्वेद में अनुसन्धान करने वाले आधुनिक विज्ञानवेत्ता और डाक्टरों को यह बात ध्यान में रखना चाहिये कि आयुर्वेद के संहिताग्रन्थ जब लिखे गये थे तब इस देश में लेखन-सामग्री (कागज) सुलभ न थी और मुद्रणकला का अभाव था। अतः उन्होंने अपने ग्रन्थ संक्षिप्त एवं सूत्ररूप में लिखे। विद्यार्थियों को पढ़ाते समय अध्यापक लोग संक्षिप्त सूत्रों की विशद व्याख्या मौखिक रूप से करते थे और बहुत सी बातें प्रत्यक्ष करके दिखाते थे, उनके पास आधुनिक वैज्ञानिकों के जैसी साधन-सामग्री उपलब्ध थी या नहीं यह ऐतिहासिक सामग्री की अनुपलब्धि के कारण कहा नहीं जा सकता, तथापि उनके लेखों में दीर्घकाल का अनुभव, उनकी विलक्षण अवलोकनशक्ति तथा प्रत्येक विषय का सतत अभ्यास और मनन स्पष्ट देखने में आता है।

आयुर्वेद के लुप्त चिकित्सा-कर्मों के अनुसन्धान और पुनः प्रचार की आवश्यकता—

आयुर्वेद में पंचकर्म (स्नेहन, वमन, विरेचन और वस्तिकर्म) चिकित्सा को विशेष महत्व दिया गया है। अनेक रोगों की चिकित्सा में पंचकर्म द्वारा चिकित्सा करना आयुर्वेद में लिखा गया है। वस्तिकर्म का प्रयोग केवल पेट के साफ करने के लिये ही नहीं अपितु अनेक रोगों के निवारण और वाजीकरण के लिये भी किया जाता था। परन्तु इस समय मलबार (केरल) प्रांत को छोड़कर अन्यत्र इस चिकित्सा का प्रचार नहीं के बराबर है। इस प्रकार अग्निकर्म, क्षारकर्म, रक्तावसेचन, रसायन चिकित्सा-आदि चिकित्सा-कर्म लुप्त से हो गये हैं। इनमें अनुसन्धान और इनके पुनः प्रचार की आवश्यकता है। वर्तमान समय में जिन आयुर्वेद महाविद्यालयों में अच्छे

आतुरालय भी हैं वहाँ इन चिकित्सा-कर्मो का अनुसन्धान और प्रयोग हो सकता है। उनसे यह कार्य हाथ में लेने का मेरा अनुरोध है।

दक्षिण भारत का सिद्धसंप्रदाय—

दक्षिण भारत में सिद्धसंप्रदाय नाम से एक आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति प्रचलित है। इस संप्रदाय के आदिप्रवर्तक महर्षि अगस्त्य बताये जाते हैं। इस संप्रदाय का समग्र साहित्य द्रविड़ (तामिल) भाषा में लिखा हुआ है। इसके अनेक ग्रन्थ तामिल लिपि में छपे हुए उपलब्ध होते हैं। मूल सिद्धान्तों के विषय में आयुर्वेद से इसमें क्या विशेषता है उसका मुझे पता नहीं। तद्देशीय विद्वानों से जो कुछ सुना है उससे मालूम होता है कि भस्मनिर्माण और औषधकल्पों विशेषतः रसयोगों में विशेषता अवश्य है। सिद्धसंप्रदाय के साहित्य का संस्कृत या हिन्दी में अनुवाद होना, उत्तर-भारत में उसके प्रचार के लिये आवश्यक है। आयुर्वेद में अनुसन्धान के साथ इसका भी अनुसन्धान होना चाहिए।

आयुर्वेदिक औषधनिर्माणशालायें (फार्मेसियां)

आयुर्वेदिक औषधों का जनता में अधिक प्रचार और वैद्यों की सुविधा, वैद्यों की बनाई औषधियां प्राप्त हों, उनका औषधनिर्माण का कष्ट और समय बच जाय तथा वे चिकित्सा कार्य में अधिक ध्यान और समय दे सकें इसके लिए अच्छी साधन-संपन्न और प्रामाणिक फार्मेसियों का होना भी नितान्त आवश्यक है। पाश्चात्यचिकित्सा के प्रचार में फार्मेसियों ने बड़ी सहायता की है, फार्मेसियों के संचालकों को चाहिए कि वे औषधकल्प शास्त्रोक्त विधि से बनावें, उनमें वे निश्चित और उत्तम औषधद्रव्यों का ही प्रयोग करें और वैद्य लोग अपने घर में औषध बनावें तो जिस खर्चे पर औषध बने उस मूल्य पर औषधकल्प बेचें तो उनका व्यवसाय अच्छा चलेगा, उनकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी और वैद्यसमाज को भी फार्मेसियों से अधिक लाभ पहुंचेगा। फार्मेसीवालों को चाहिए कि आयुर्वेद-शास्त्र में जो लाभप्रद योग वर्णित हैं परन्तु वैद्यों में प्रचलित नहीं, उन योगों को भी बनावें और वैद्य-समाज में प्रचलित करें। फार्मेसीवालों को चाहिए कि वे अपने व्यवसाय की उन्नति और आयुर्वेद के हित के लिए अपनी आय से कुछ भाग औषधि-निर्माण विषयक अनुसन्धान के लिए खर्च करें और अपने यहाँ अनुसन्धान विभाग भी आरम्भ करें। फार्मेसीवालों को चाहिए कि औषधिनिर्माण विषयक विशेष ज्ञान सम्पादन के लिए वे योग्य विद्वानों को अपनी ओर से छात्र-वृत्तियां देकर यूरोप, अमरीका और जापान भेजें।

राज्यमान्य योगसंग्रह (फार्माकोपिया)

सब फार्मेसियों और अपने घर में औषध बनाने वाले वैद्यों के औषधकल्प (योग) एक निश्चितरूप (स्टेन्डर्ड) के बनें. इसलिए नित्योपयोगी योगों का एक संग्रह तैयार करना नितान्त आवश्यक है। इस ग्रन्थ में मान परिभाषा का निर्णय कल्पों की सामान्य और विशिष्ट निर्माणविधि, उद्भिज्ज-खनिज और प्राणिज-द्रव्यों के शास्त्रीय पर्यायनामों का निर्णय, अमुक शास्त्रीय नाम से अमुक ही द्रव्य लेना चाहिये इसका निर्णय, अकृत्रिम और कृत्रिम द्रव्यों की परीक्षण- विधि, सिद्ध औषधकल्पों की यथासंभव परीक्षण-विधि, योगों की मात्रा, सामान्य और रोग विशेष में अनुपान इन विषयों का समावेश होना चाहिये। यह कार्य राज्य को स्वयं अपने हाथ में लेना चाहिये और यदि राज्य के द्वारा यह कार्य तुरन्त होने की सम्भावना न हो तो आयुर्वेद महासम्मेलन को यह कार्य राज्य और फार्मेसी वालों की सहायता से करना चाहिये।

आयुर्वेदिक स्वस्थवृत्त का प्रचार—

आयुर्वेद तथा धर्म-शास्त्रों में वैयक्तिक स्वास्थ्य-विज्ञान (पर्सनल हाईजीन) का बड़ा सुन्दर वर्णन पाया जाता है। रोगनिवृत्ति की अपेक्षा रोग होने ही न देना, यह अधिक महत्व की बात है। आयुर्वेदोक्त स्वस्थवृत्त जिसमें दिनचर्या, रात्रिचर्या, ऋतुचर्या और सद्वृत्त का वर्णन है। इस पर सरल भाषा में सोपपत्तिक ग्रन्थ लिखवा कर उसका जनता में अधिक से अधिक प्रचार करना चाहिये। व्याख्याओं. चित्रपटों तथा चलचित्रों द्वारा जनता में आयुर्वेदोक्त स्वस्थवृत्त का प्रचार होना आवश्यक है। यह कार्य भी आयुर्वेद महासम्मेलन को अपने हाथ में लेना चाहिये। इसके लिये आयुर्वेद महासम्मेलन को अपने निरीक्षण में छोटी पुस्तिकायें (ट्रेक्ट) तैयार करवा कर स्वयं छपवाना, अन्य प्रकाशकों द्वारा छपवा कर प्रकाशित करवाना, और स्वयं तथा अन्य-दानी दाताओं द्वारा उन पुस्तिकाओं को वितीर्ण करवाना, प्राथमिकशाला (स्कूलों) में उनको पाठ्य पुस्तक के रूप में स्वीकृत कराना आदि उपायों का अवलम्बन करना चाहिये।

आयुर्वेदिक सार्वजनिक औषधालय

आयुर्वेदिक चिकित्सा द्वारा जनता को रोग-मुक्त करने और आयुर्वेद के प्रचार के लिए बड़े शहरों एवं छोटे गांवों में आयुर्वेदिक सार्वजनिक औषधालय खोलने की आवश्यकता है। इस प्रकार के कुछ औषधालय प्रान्तीय सरकारों और धनी-दानियों की ओर से खुले भी हैं। परन्तु कुछ

औपधालयों को छोड़ कर अधिकांश औपधालयों की स्थिति संतोषजनक नहीं है। इस प्रकार के औषधालयों में अच्छे पण्डित-शास्त्रज्ञ और अनुभव प्राप्त वैद्यों की नियुक्ति होनी चाहिये। उनको अच्छा स्थान, उचित उपकरण-साधन, योग्य सहकारी (कम्पाउन्डर आदि), पर्याप्त मात्रा में औषधें तथा वे निश्चिन्त और सन्तुष्ट रह कर अपना कार्य कर सकें उतना वेतन भी होना चाहिये। तभी इन औषधालयों से इच्छित लाभ मिल सकेगा और आयुर्वेदिक चिकित्सा में लोगों की श्रद्धा बढ़ेगी। धन-संकोच के कारण यदि अधिक औषधालय न भी खोले जा सकें तो भी कोई चिन्ता की बात नहीं, परन्तु जो खोले जावें उनमें ऊपर लिखी सुविधायें दी जानी चाहिये।

आयुर्वेदिक परिचारक-परिचारिकायें तैयार करना

आयुर्वेद में परिचारक को चिकित्सा का एक अंग माना गया है। वैद्यों को चिकित्सा-कार्य में सहायता और अनुकूलता हो इसलिये आयुर्वेदिक-पद्धति से जिनको स्नेहन, स्वेदन, बस्तिकर्म, प्रलेपन आदि चिकित्सा-कर्म, क्वाथ, फाण्ट, हिम, क्षीरपाक आदि का ज्ञान प्राप्त हो ऐसे परिचारक-परिचारिकायें तैयार करने चाहिये। इनकी शिक्षा के लिये प्रचलित रोग-परिचर्या के ग्रन्थों से उपयुक्तांश ले, उनमें ऊपर लिखे हुए विषय बढ़ा कर उनकी शिक्षा के लिये स्वतन्त्र ग्रन्थ बनाने चाहियें। जिनमें आतुरालय हों ऐसे वर्तमान आयुर्वेद विद्यालयों में उनके लिये शिक्षा और कर्माभ्यास का प्रबन्ध करना चाहिये।

आयुर्वेदिक उपवैद्य (कम्पाउन्डर) तैयार करना

सार्वजनिक आयुर्वेदिक औषधालयों के वैद्यों तथा अन्य चिकित्सकों के सहायतार्थ शिक्षित उपवैद्य तैयार करना आवश्यक है। उनको औषध-द्रव्यों का परिचय, उनकी मात्रा, औषधकल्पों का निर्माण, औषधप्रयोग-विधियों का ज्ञान तथा औषध-वितरण सम्बन्धी सब आवश्यक ज्ञान होना आवश्यक है। उनकी शिक्षा के लिये स्वतन्त्र पाठ्य-ग्रन्थ बनाना चाहिये और वर्तमान आयुर्वेद-विद्यालयों में ही उनकी शिक्षा का प्रबन्ध होना चाहिये।

ऊपर मैंने इस समय आयुर्वेद महासम्मेलन और वैद्य-समाज को आयुर्वेद की उन्नति के लिये क्या विधायक (रचनात्मक) कार्यक्रम करना चाहिये इसका संक्षेप में विवेचन किया है। अब हमारी राष्ट्रीय सरकार को भी एतद्देशीय चिकित्सा- पद्धति की उन्नति के लिये क्या-क्या करना चाहिये उसका संक्षेप में निर्देश करता हूं।

१—केन्द्रीय चिकित्सा बोर्ड की स्थापना

(Central Board of Indigenous Systems of Medicine)

सरकार को सब से पहले चोपड़ा कमेटी की सलाह के अनुसार एक केन्द्रीय देशीय चिकित्सा-बोर्ड की स्थापना करनी चाहिए, जो समग्र भारत-वर्ष के लिये वैद्य-हकीमों को रजिस्टर्ड करने के नियम, पाठ्यक्रम (कोर्स), डिग्रियां आदि देशीय चिकित्सा सम्बन्धी सब विषयों में राज्य की नीति का निर्माण करे।

२—डायरेक्टर आफ आयुर्वेद की नियुक्ति

सरकार को अपने आरोग्य-विभाग (हेल्थडिपार्टमेन्ट में) देशीय चिकित्सा विभाग को स्वतन्त्र स्थान देना चाहिए और एक स्वतन्त्र डायरेक्टर आफ आयुर्वेद की नियुक्ति करनी चाहिये। इसका पदाधिकारी वैद्य ही होना चाहिये। राजस्थान यूनियन ने डायरेक्टर आफ आयुर्वेद की और उत्तर भारत (यू० पी०) सरकार ने डेप्युटी डायरेक्टर आफ हेल्थ सर्विसेस के स्थान पर वैद्यों की नियुक्ति की है। इसलिये हम उनका अभिनन्दन करते हैं। अन्य प्रान्तों तथा यूनियनों में भी सत्वर ही डायरेक्टर आफ आयुर्वेद की नियुक्ति करनी चाहिये। इस समय डायरेक्टर आफ हेल्थ सर्विसेस डाक्टर होते हैं, जिससे आयुर्वेद की उन्नति को योग्य अवसर नहीं मिलता और उनके द्वारा प्रायः उसमें बाधायें पहुँचाई जाती हैं।

३—आयुर्वेदिक-पद्धति की उन्नति के लिये आर्थिक सहायता

आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति का अधिक प्रचार करने से सरकार इस समय आरोग्य विभाग पर जो खर्च कर रही है, उसमें बड़ी बचत होगी। थोड़े खर्च में जनता को अधिक सहायता पहुंचाई जा सकेगी। इस समय विदेशों से दवाइयां मंगाने में जो करोड़ों रुपये सरकार और प्रजा को विदेश भेजने पड़ते हैं, वे नहीं भेजने पड़ेंगे। आयुर्वेदिक औषधों के निर्माण से वनस्पति-संग्रह करने वाले ग्राम्य लोगों को अधिक काम मिलेगा और यहां के मजदूरों को अधिक मजदूरी मिलेगी। इससे लोगों को उनकी प्रकृति तथा देश की जलवायु के अनुसार औषधें मिलेंगी। अतः सरकार को चाहिये कि वह आयुर्वेद में अनुसन्धान (रिसर्च) का कार्य शीघ्र आरम्भ करे, वर्तमान अस्पतालों में आयुर्वेद चिकित्सा के लिये अधिक रोगियों को रखने की व्यवस्था करे, उनमें आयुर्वेदिक चिकित्सा में अच्छा अनुभव और श्रद्धा रखने वाले वैद्यों की नियुक्ति करे, आयुर्वेदिक चिकित्सा और औषधों

के फल की परीक्षा करे और जैसे-जैसे वे फलप्रद मालूम होते जावें, वैसे-वैसे विदेशी चिकित्सा और औषधों के स्थान पर आयुर्वेदिक चिकित्सा और औषधों के प्रयोग को अधिक स्थान देवे। इसलिये सरकार को आयुर्वेदिक अनुसन्धानालय और अधिक आयुर्वेदिक कालेज, अस्पताल और सार्वजनिक औषधालय खोल कर आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धति इस देश की चिकित्सा और स्वास्थ्य-रक्षण की सब आवश्यकताओं को पूर्ण करने में समर्थ हो, ऐसा करने में उदारता से धन व्यय करना चाहिये। मुझे आशा ही नहीं; अपितु विश्वास है कि इस प्रकार किया हुआ धनव्यय निष्फल नहीं जायगा; अपितु लाभप्रद ही सिद्ध होगा।

उपसंहार

आयुर्वेद की और वैद्यसमाज की उन्नति के लिये इस समय हमारे सामने क्या विधायक (रचनात्मक) कार्य-क्रम होना चाहिये, यह मैंने आपके सामने रक्खा है। उसके साथ सरकार को भी भारतीय चिकित्सा-पद्धति को उन्नत करने तथा उसके द्वारा जनता को लाभ पहुँचाने के लिये क्या करना चाहिये; इसका भी संक्षेप में निर्देश किया है। आप भी अपनी ओर से सुझाव रख सकते हैं। आयुर्वेद के लिए यह क्रान्ति का समय है। आपको इस अधिवेशन में केवल भावावेश से नहीं; किन्तु विचारपूर्वक और दीर्घ-दृष्टि से वर्तमान परिस्थिति को लक्ष्य में रखकर निर्णय करने होंगे। इन निर्णयों को कार्यान्वित करने के लिये तन, मन और धन से भरसक प्रयत्न करने होंगे। इस समय हमारी सरकार की आयुर्वेद के प्रति नीति अस्पष्ट है। इधर पाश्चात्य संस्कृति से रंगे हुए और राज्याश्रय से परिपुष्ट डाक्टर लोग अज्ञान और स्वार्थवश आयुर्वेद को मिटाने के लिए उद्यत हैं। वे लोग यह प्रचार कर रहे हैं कि आयुर्वेद किसी समय में उन्नत होगा, परन्तु इस विज्ञान-युग में जब कि आधुनिक चिकित्सा-शास्त्र वैज्ञानिक वेग से प्रगति कर रहा है, नित्य नवीन नवीन सिद्धफल औषधों का आविष्कार हो रहा है, तब आयुर्वेद के गड़े हुए मुर्दों को पुनः जीवित करने का यत्न और उसके लिए सरकार को धन का व्यय करना निरर्थक है। उनका यह भ्रम है। आयुर्वेद अब भी जीवित है। उसमें अनेक सिद्धान्त और औषधरूप रत्नों का भण्डार भरा हुआ है। परन्तु काल की उथल-पुथल और राज्यकर्ताओं की उदासीनता तथा प्रोत्साहन के अभाव के कारण जीर्ण-शीर्ण अवश्य हुआ है। यदि इसको प्रोत्साहन दिया जावे, इसमें अन्वेषण-कार्य किया जावे तथा इसका जीर्णोद्धार और नवनिर्माण हो, तो आज भी यह समग्र जगत का उपकार कर सकता है। इस समय वैद्य समाज यदि असावधान और अकर्मण्य रहा, तो इस देश की

प्राचीन राष्ट्रीय चिकित्सा के विनाश की सम्भावना है। इसके साथ-साथ आपको यह भी ध्यान रखना चाहिये कि दुर्बल मनुष्य (या शास्त्र) जीवित रहने के लिए अयोग्य होता है। जीवित वही रह सकता है, जो नवीन आहार (ज्ञान) को ग्रहण करके अपने में हजम कर लेता है। आपको भी नवीन विचार और ज्ञान से आयुर्वेद को परिवृद्धित-पुष्ट करना होगा। हमारे महर्षियों ने सत्य ज्ञान को कहीं से भी लेने का उपदेश किया है। (नीचादप्युत्तमां विद्याम्-मनु)। आपको आयुर्वेद को परिवृद्धित करके तद्द्वारा अपने को राष्ट्र की चिकित्सा और स्वास्थ्यसम्बन्धी रक्षण की सब जिम्मेदारियों को उठाने के लिए समर्थ बनाना होगा। यदि यह कार्य कर सकें, तो आयुर्वेद का भविष्य उज्ज्वल है। अन्यथा हम लोगों की अकर्मण्यता के कारण आयुर्वेद की अधोगति अवश्यम्भावी है। कोई भी विद्या या कला की उन्नति राज्याश्रय के बिना नहीं हो सकती। अब सरकार हमारी ही है। आयुर्वेद की उन्नति के लिये सरकार से सहायता मांगना हमारा हक है और इस देश की चिकित्सा पद्धति को सहायता देकर उन्नत करना राज्य का धर्म है। जय भारत।

वैद्यरत्न श्री शिवशर्माजी का भाषण

उद्‌घाटनकर्ता महोदय के प्रति कृतज्ञतासूचक एवं आयुर्वेद की महत्ता पर महत्त्वपूर्ण सारगर्भित भाषण देते हुये महासम्मेलन के भूतपूर्व अध्यक्ष वैद्यरत्न श्री शिवशर्माजी ने कहा कि राजाधिकारियों की विदेशी मनोवृत्ति एवं मानसिक परतन्त्रता का यह कारण है कि वे अन्तर्राष्ट्रीयता की आड़ में प्रत्येक स्वदेशी ज्ञान-विज्ञान, संस्कृति एवं कला-कौशल को विनष्ट कर देने में लगे हुए हैं। उनकी इस भावना का आपने तर्कसंगत विवेचन किया और वैद्य समाजसे संगठित होकर प्रत्येक सम्भव उपाय से उसका प्रतिकार करने की अपील की।

दूसरी और तीसरी बैठक
२०-२१ फरवरी

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के खुले अधिवेशन के दूसरे दिन की कार्यवाही २० फरवरी की दुपहर को ढ़ाई बजे और तीसरे दिन की दुपहर बाद चार बजे शुरू हुई। पण्डाल पहिले दिन की तरह ही दर्शकों तथा प्रतिनिधियों से खचाखच भरा हुआ था। मंच पर अध्यक्ष महोदय के अलावा गणमान्य वैद्य महानुभाव उपस्थित थे। दूसरे और तीसरे दिन का मुख्य कार्य विविध प्रस्ताव स्वीकार करना था। दूसरे दिन का अधिकांश समय आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना के प्रस्ताव ने के अनुसार चन्दा जमा करने ने ले लिया। सारे ही पण्डाल में नवजीवन, अदम्य उत्साह और असीम साहस की वेगवती लहर दौड़ गई। दस-दस, पांच-पांच रुपये से लेकर सैंकड़ों-हजारों तक के दान की घोषणायें होने लगीं। इन घोषणाओं में होड़-सी लग गई। ८२ हजार का चन्दा लिखा गया। ५० हजार जमा करने की घोषणा श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की ओर से की गई। पांच हजार तत्काल जमा हो गया।

सेठ गोविन्ददासजी का भाषण

आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना के लिये चन्दा लिखे जाने के बाद सुप्रसिद्ध नेता, भारतीय पार्लमेंट के सदस्य तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन के भूतपूर्व अध्यक्ष सेठ गोविन्ददासजी का प्रभावशाली भाषण हुआ। आपने कहा कि हमारे परिवार का आयुर्वेद के साथ कई पीढ़ियों से सम्बन्ध रहा है। मेरा भी आयुर्वेद के प्रति पूर्ण अनुराग है, क्योंकि सभी भारतीय वस्तुओं से मेरा अनुराग रहा है। मैं आयुर्वेद को भारत की सब से बड़ी देन समझता हूं। अंग्रेजों की तीन मुख्य देन भारत को मिली हैं—गरीबी, अशिक्षा और शारीरिक सम्पत्ति का ह्रास। इनमें शरीर सब से प्रथम है और भारतीयों के शरीर की उन्नति की ओर ध्यान देना आवश्यक है। दुर्भाग्य है कि स्वराज्य मिलने के बाद भी नेताओं का किसी भारतीय वस्तु में विशेष अनुराग नहीं है। हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनवाने के लिए भी विधान परिषद् में सब से अधिक संघर्ष करना पड़ा है। भारत में चिकित्सकों की जितनी कमी है, उतनी संसार के किसी देश में नहीं है। जो भी चिकित्सक भारत में हैं, उनमें सब से अधिक वैद्य हैं। पार्लमेंट में मातृगृह खोलने के सम्बध में

वताया गया है कि इनमें आयुर्वेद को कोई स्थान नहीं मिलेगा; क्योंकि कहा यह गया है कि आयुर्वेद में इस सम्बन्धमें कुछ नहीं लिखा है। जब कि वास्तव में आयुर्वेद में प्रसूतिगृहों के विषय में सब से अधिक वर्णन है। चोपड़ा कमेटी की रिपोर्ट से सरकार सहमत नहीं है और उसने उसकी सिफारिशों की जाँच के लिए एक और कमेटी नियुक्त की है। वास्तव में भारतीय विज्ञान का पतन इसलिए हुआ कि हम मान बैठे कि अब उसमें विकास की कोई गुंजाइश नहीं है। दुर्भाग्य की बात है कि आचार्य चरक और सुश्रुत के बाद आयुर्वेद के विकास के लिए कुछ नहीं लिखा गया। कई बातों में आयुर्वेद प्राचीनकाल में जहाँ तक पहुंच गया था, वहां तक एलोपैथी आज भी नहीं पहुँची है। परन्तु एलोपैथी में अनुसन्धान-कार्य निरन्तर जारी है। आयुर्वेद में विकास के दरवाजे को बन्द कर देना अनुचित है। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली ने जो जो उन्नति की है, उसे आयुर्वेद को अपनाना चाहिए।

वैद्य लोग भविष्य में सरकार के भरोसे न रह कर स्वयं प्रयत्न करें। दूसरी ओर अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए सरकार से सम्बन्ध करें। वैद्य चिकित्सकों का पूर्ण संगठन कर के अनुसन्धान कार्य बढ़ाया जाय। अधिकांश भारतीय जनता की आयुर्वेद में आस्था और विश्वास है। जनता भारतीय है, विदेशी नहीं। भारतीयता की जो भी चीजें हैं, उसकी उनमें आस्था है। आप संगठित प्रयास से देशवासियों के सहयोग से न केवल दिल्ली में ही आयर्वेद महाविद्यालय का संचालन कर सकते हैं, अपितु उसकी कई शाखाओं का सुगमता से संचालन कर सकते हैं। स्वतन्त्रता के बाद भारतीय जनता अब विभिन्न सांस्कृतिक कार्यों को भी अपने हाथ में लेना चाहती है। ससार में शरीर पहली वस्तु है। जनता का स्वास्थ्य सुधारने के लिए प्रत्येक संभव प्रयास किया जाना आवश्यक है।

श्रीमती अमृतकौर का भाषण

लगभग ४। बजे भारत सरकार की स्वास्थ्य मंत्रिणी श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर अधिवेशन में पधारीं। आपके साथ भारतीय सरकार के स्वास्थ-विभाग के डायरैक्टर जनरल के० सी० के० ई० राजा तथा स्वास्थ्य सचिवालय के डिपुटी सेक्रेटरी श्री कोदण्डरामन भी पधारे थे। श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर ने अपने संक्षिप्त भाषण में आयुर्वेदिक चिकित्सकों से अपील की कि वे चिकित्सा विज्ञान का विकास करने में सरकार को पूरा सहयोग दें। यह ख्याल बहुत गलत है कि सरकार भारतीय चिकित्सा पद्धति को विकास करने की पूरी सुविधायें नहीं देना चाहती। सरकार यह चाहती है कि यह चिकित्सा प्रणाली अपने अन्दर इस काल की विविध वैज्ञानिक पद्धतियों का समन्वय करे।

पश्चिमी चिकित्सा प्रणाली ने देशी चिकित्सा पद्धति की अनेक बातें अपनाली हैं, इसलिए इस प्रणाली पर किसी एक देश का एकाधिकार नहीं है। हर देश को किसी भी चिकित्सा प्रणाली का अच्छे से अच्छा लाभ उठाने का पूरा अधिकार है। किसी एक चिकित्सा पद्धति को रियायत देने का कारण यही है कि उससे अधिक से अधिक लोगों को अधिक से अधिक लाभ पहुंचना चाहिए। यदि इस दृष्टिकोण से सारे मामले पर विचार किया जाय, तो फिर आयुर्वेदिक चिकित्सकों को सरकार के विरुद्ध कोई शिकायत नही रहेगी।

आयुर्वेदिक पद्धति के विकास की संभावनाओं की खोज करने के लिए सरकार ने एक कमेटी नियुक्त की है। कमेटी की रिपोर्ट शीघ्र ही प्रकाशित हो जायगी और सरकार उसकी सिफारिशों को अमल में लाते हुए देशी चिकित्सा के विकास की पूरी सुविधायें मुहैया करेगी।

आपके भाषण के बाद वैद्यरत्न श्री शिवशर्माजी ने वैद्यों का दृष्टिकोण उपस्थित करते हुए अपना भाषण प्रारम्भ किया ही था कि श्रीमतीजी ने उपस्थित रह सकने में असमर्थता प्रगट की। आपको किसी आवश्यक कार्य पर कहीं अन्य स्थान पर जाना था। आपको धन्यवाद देने के बाद दूसरे दिन का कार्यवाही समाप्त हो गई।

तीसरे दिन २१ फरवरी को शाम के ४ बजे अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। प्रस्ताव स्वीकार किए। वार्षिक विवरण और आयव्यय का गत वर्ष का तथा अगले वर्ष का आनुमानिक आय-व्यय पत्र भी स्वीकार किया गया।

अन्तिम बैठक

महासम्मेलन के सैंतीसवें अधिवेशन की अन्तिम बैठक २० फरवरी की रात को ७ बजे शुरू हुई। महासम्मेलन निधि समिति की रिपोर्ट पढ़ी गई, जो सर्वसम्मति से स्वीकार की गई। इसके बाद निर्वाचन का कार्य शुरू हुआ। बम्बई के वैद्यरत्न श्री प० शिवशर्माजी तथा दिल्ली के वैद्य श्री ओंकार-प्रसादजी शर्मा महासम्मेलन के उपप्रधान चुने गये। शेष चुनाव में कुछ मतभेद होने के कारण अध्यक्ष महोदय पर छोड़ दिया गया, जिसके सम्बन्ध में यह प्रस्ताव स्वीकार किया गया कि "सैंतीसवें आयुर्वेद महा-सम्मेलन का यह अधिवेशन यह निश्चय करता है कि सभापति को पूर्ण अधिकार दिया जाय कि वे जैसा चाहें, निर्वाचन के सम्बन्ध में अपना निर्णय दें। उन्हें यह सम्मेलन इसके लिये पूर्ण अधिकार देता है" इस प्रस्ताव के सर्वसम्मति से स्वीकार किये जाने पर अध्यक्ष महोदय ने चुनाव का शेष कार्य स्थायी समिति के आगामी अधिवेशन में करने की घोषणा की।

महासम्मेलन के महामन्त्री श्री गणेशदत्त जी सारस्वत ने स्वागत समिति, समागत वैद्य महानुभावों एवं स्वयंसेवकों को अधिवेशन की सफल समाप्ति के लिए धन्यवाद दिया। स्वागत समिति के पदाधिकारियों तथा कार्यकर्ताओं को अधिवेशन की सफलता का विशेष श्रेय देते हुए उनके प्रति आपने विशेष रूप से आभार प्रगट किया। पहिले दो दिन की कार्यवाही अखिल भारतीय रेडियो द्वारा प्रसारित करने के लिए उसका विशेष रूप से आभार माना गया।

अत्यन्त प्रेमपूर्ण, सद्भावनापूर्ण और उत्साहपूर्ण वातावरण में रात को ११ बजे 'जन-गण-मन' के राष्ट्रीय गायन के साथ सम्मेलन के दिल्ली-अधिवेशन की कार्यवाही समाप्त हुई।

स्वीकृत प्रस्ताव

महासम्मेलन और विद्यापीठ सम्मेलन के संयुक्त अधिवेशनों में स्वीकृत प्रस्ताव निम्नलिखित हैं—

प्रस्ताव १

यह अधिवेशन निम्नलिखित महानुभावों के जो आयुर्वेद जगत के स्तम्भ थे, असामयिक देहावसान पर अत्यन्त हार्दिक शोक प्रकट करता है और परमात्मा से प्रार्थना करता है कि उनके परिवार को इस असह्य दुःख में सांत्वना तथा मृतात्मा को शांति प्रदान करे।

कविराज मणिन्द्रकुमार मुखोपाध्याय, हरद्वार
श्री बालकृष्ण अमरजी पाठक, बनारस
श्री जुगतराम शंकरप्रसाद भट्ट, बम्बई
श्री पुरुषोत्तमनारायण चतुर्वेदी, पटना
श्री शान्तानन्दजी, हरिद्वार
श्री पं० कन्हैयालालजी, बरेली
श्री पं० वैजनाथ शास्त्री, कानपुर
श्री पं० मोहनचन्द्र शर्मा, कानपुर
श्री श्रीधर शास्त्री, नारनौल
श्री पं० सुखरामदास ओझा, बम्बई
श्री मंगलरामजी लाटा, भरतपुर
श्री व्यासदेवजी, देहली
श्री अर्जुनदत्त शर्मा, भिवानी

श्री जमनादासजी, भिवानी
श्री महादेव मिश्र, पटना
श्री भागदत पाठक, आरा
श्री राजाराम मिश्र, आरा
श्री चन्द्रशेखरदत मिश्र, चम्पारन
श्री आनन्देश्वरी त्रिपाठी, आरा

सभापति द्वारा

प्रस्ताव न० २

आयुर्वेद महासम्मेलन का यह अधिवेशन देश के महान नेता श्री शरतचन्द्र बोस के असायिक देहावसान पर हार्दिक शोक प्रकट करता हुआ भगवान धन्वन्तरि से प्रार्थना करता है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति एवं दुखी परिवार को धैर्य धारण करने की शक्ति प्रदान करे। इस प्रस्ताव की प्रतिलिपि उनके परिवार के सदस्यों के पास भेज दी जाय।

सभापति द्वारा

प्रस्ताव नं० ३

यह सम्मेलन भारत में सर्वसत्ता संपन्न स्वतन्त्र गणराज्य की स्थापना पर हर्ष प्रकट करता है और उसके राष्ट्रपति देशरत्न बाबू राजेन्द्रप्रसाद जिस प्रकार पहले से ही आयुर्वेद के पोषक और प्रशंसक रहे हैं उनसे यह सम्मेलन आशा रखता है कि वे इस समय आयुर्वेद को नष्ट करने के लिये जो संगठित षड़यंत्र चल रहा है उसे विफल कर आयुर्वेद की उन्नति और विकास के लिये ऐसी योजना प्रचलित करने में अपना प्रभाव काम में लावें, जिससे क्रमशः आयुर्वेद स्वास्थ्य और चिकित्सा विभाग की आवश्यतायें पूर्ण करने में समर्थ होकर राष्ट्रीय चिकित्सा के पद को प्राप्त कर सके।

सभापति द्वारा

प्रस्ताव नं० ४.

यह सम्मेलन स्वतन्त्र भारतीय सरकार से अनुरोध करता है कि वैदिक काल से प्रचारित आयुर्वेदिक वैज्ञानिक चिकित्सा पद्धति, जो संसार के करोड़ों प्राणियों को जीवन प्रदान करती रही है, परन्तु मध्यकाल में विशेषतया ब्रिटिश शासनकाल मे राज्य की उपेक्षा के कारण दब गई थी और उस अवस्था में भी ८० प्रतिशत भारतीय जनता को जीवन प्रदान कर रही है, उसे पुनः उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचाया जावे; जिससे भारत की जनता की चिकित्सा तथा स्वास्थ्य संरक्षण सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूर्ण करने में समर्थ हो।

ए० लक्ष्मीपति, गंगाधर विष्णु शास्त्री पौराणिक, श्रीनिवासमूर्ति, दयानिधि शर्मा, रामप्रसादजी, ठाकुरदत्त शर्मा, विश्वनाथ द्विवेदी, रामरक्ष पाठक, आर० वी० धुलेकर, ख्यालीरामजी, मनोहरलाल विजयकाली भट्टाचार्य, गणेशदत्त, कृष्णदत्त, केशवप्रसाद आत्रेय, रमणीकदेव, गुरुदत्तजी, गोपाल सहाय, अग्निदेव, नारायणदत्त, ओंकारप्रसाद शर्मा।

उपर्युक्त समिति के संयोजक विद्यापीठ मन्त्री होंगे।

प्रस्तावक—श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल
अनुमोदक—स्वामी मंगलदास
श्री नित्यानन्द सारस्वत

प्रस्ताव नं० ९

इस समय जनता को खाद्य सामग्री निकृष्ट और पोषण तत्व रहित मिल रही है जिससे जनता का स्वास्थ्य बिगड़ रहा है, इसलिए यह सम्मेलन सरकार से अनुरोध करता है कि इसकी उचित व्यवस्था की जाय। इस सम्मेलन को यह जान कर भी बड़ी चिन्ता हो रही है कि दूध और घी के अभाव में बालकों का पोषण ठीक नहीं हो रहा है तथा अन्य लोगों का भी विशेषतः निरामिष भोजियों का स्वास्थ्य गिरता जा रहा है। यहां तक कि अनुपान के लिए भी शुद्ध दूध और घी का मिलना कठिन हो रहा है। इस लिए यह सम्मेलन सरकार को नम्रता पूर्वक सूचित करता है कि (१) दूध देने वाले पशुओं का निरपवाद रूप से वध रोका जाय और इसके अपराधियों को कड़ा दण्ड दिया जाय (२) प्रत्येक ग्राम में पशुओं की संख्या के अनुपात से गोचर भूमि अवश्य छोड़ी जाय (३) दूध देने वाले पशुओं के पोषण और दुग्धवृद्धि के लिए बिनौलों की नितान्त आवश्यकता है। इसलिए बिनौलों को विदेश भेजना और अन्य प्रकार का उपयोग एकदम बन्द किया जाय। आशा है इन उपायों से दूध घी की प्राप्ति सुलभ हो सकेगी।

प्रस्ताव नं० १०

इस समय गोरोचन, रूमी मस्तंगी, कस्तूरी यहाँ तक कि पिसी हल्दी और लाल मिर्च तक का शुद्ध रूप में मिलना कठिन हो गया है। जिससे शुद्ध औषधियाँ न मिलने से तैयार औषधियों के गुण प्रभावपूर्ण रूप से प्रकट नहीं होते। यह सम्मेलन सरकार से अनुरोध करता है कि नकली और बनावटी वस्तुओं की रुकावट के लिए कायदे का अमल कड़ाई के साथ करने की व्यवस्था करे।

प्रस्ताव नं० ११

यह महासम्मेलन आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी तिब्बिया कालेज, देहली की अव्यवस्था को दूर करने के लिए स्थानीय सरकार ने जो प्रयास किया है उसके लिए धन्यवाद देता है। तथा सरकार से अनुरोध करता है कि यथा संभव शीघ्र इस महती संस्था को अपने हाथ में लेकर उसके मूल उद्देश्यों के पालन की सुव्यवस्था का समुचित प्रबन्ध करे।

इस प्रस्ताव को कार्यान्वित करने के लिए अधोलिखित सज्जनों की एक समिति बने:—

श्री केशवप्रसाद आत्रेय, देहली।
श्री जयरामदास स्वामी, जयपुर।
श्री ठाकुरदत्तजी देहरादून।
श्री रामगोपाल शास्त्री, देहली (संयोजक)।

यह भी निश्चय हुआ कि संयोजक को आवश्यकता पड़ने पर अन्य सदस्यों को भी सम्मिलित करने का अधिकार होगा।

प्रस्तावक—श्री केशवप्रसाद आत्रेय
अनुमोदक—श्री रामविलास शारदा

प्रस्ताव नं० १२

सम्मेलन यह निश्चय करता है कि आयुर्वेद महामण्डल के प्रकाशन कार्य के बढ़ने की निकट भविष्य में सम्भावना है। अतः हम आय बढ़ाने के हेतु यह आवश्यक समझते हैं कि संस्था का निजी मुद्रणालय होना आवश्यक है। इस कार्य को कार्यान्वित करने के लिए एक उपसमिति बनाई जावे, जो तत्सम्बन्धी योजना बनाकर स्थायी समिति में शीघ्रातिशीघ्र स्वीकृति के लिए उपस्थित करे।

श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य
श्री रामनारायणजी
श्री रामरत्न पाठक

सभापति द्वारा

प्रस्ताव नं० १३

सामयिक परिस्थिति को देखते हुए विद्यापीठ कार्यसमिति के इस प्रस्ताव को स्वीकृत करते हुए यह सम्मेलन निश्चय करता है कि आचार्य परीक्षाशुल्क

में ५) रु०, आयुर्वेद विशारद तथा वैद्य विशारद परीक्षा शुल्क में ३) रु०, भिषक परीक्षा शुल्क में २) रु० प्रति खण्ड वृद्धि करदी जाय।

प्रस्तावक—श्री सुन्दरलाल शुक्ल
समर्थक—श्री ब्रह्मदत्त

प्रस्ताव नं० १४

निश्चय हुआ कि पाकिस्तान छोड़ कर भारत में आ बसे हुए वैद्यों से आजीवन सदस्यता शुल्क निश्चित धनराशि का अर्धांश सन् १९५१ के अन्त तक स्वीकार किया जावे।

सभापति द्वारा

प्रस्ताव नं० १५

(क) महासम्मेलन निधि-समिति का इतिवृत्त पढ़ा गया और सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। निधि समिति के सदस्यों का निम्न प्रकार निर्वाचन हुआ—

सर्वश्री जीवराम कालीदास शास्त्री (गोंडल), पं० ठाकुरदत्त शर्मा (देहरादून), स्वामी जयरामदास (जयपुर), वैद्य रामनारायण शर्मा (पटना), शिवनाथ शर्मा (देहली), श्री हरिरंजन मजूमदार (बनारस)।

(ख) निर्वाचन का विषय उपस्थित हुआ। श्री पं० शिवशर्मा (बम्बई) तथा श्री ओंकारप्रसाद शर्मा देहली महासम्मेलन के उपसभापति सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए।

प्रस्ताव नं० १६

३७ वें आयुर्वेद महासम्मेलन का यह अधिवेशन यह निश्चय करता है कि सभापति को पूर्ण अधिकार दिया जाय कि वे जैसा चाहें निर्वाचन के सम्बन्ध में अपना निर्णय दें। उन्हें यह सम्मेलन पूर्ण अधिकार देता है।

प्रस्तावक—श्री विशाल त्रिपाठी
समर्थक—श्री बाबूराम मिश्र, मंगलदास स्वामी

महासम्मेलन कार्यालय का वार्षिक वृत्त

नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के संयुक्त मंत्री श्री वेदव्रतप्रसादजी आत्रेय ने महासम्मेलन के कार्यालय का १९४९-५० का निम्नलिखित इतिहास उपस्थित किया:—

आज मैं आपकी सेवा में गत वार्षिक अधिवेशन से अब तक का इतिवृत्त उपस्थित करता हूं। महासम्मेलन के गताधिवेशन में जितने प्रस्ताव स्वीकृत हुए

थे उन्हें कार्यान्वित करने का यथासम्भव प्रयत्न किया गया। कार्यालय का पहला कार्य तो इन प्रस्तावों का अधिकाधिक प्रचार करना था। उन्हें सहस्रों की संख्या में अंग्रेजी अनुवाद सहित प्रकाशित किया गया और युक्ति-युक्त पत्रों सहित सभी प्रान्तीय शाखाओं के प्रधानमन्त्रियों को विशेषतया तथा अन्य प्रमुख वैद्यों एवं आयुर्वेदीय परिषदों के पास साधारणतया प्रचार के लिये भेजा गया। एक मैमोरेण्डम सहित इन प्रस्तावों को केन्द्रीय विधान-परिषद् के सदस्यों, केन्द्रीय सरकार के सभी मंत्रियों तथा प्रांतीय सरकारों के प्रमुख २ मंत्रियों एवं देश के प्रमुख नागरिकों तथा अधिकारियों में वितरित किया गया। तदुपरांत एक २ प्रस्ताव पर समुचित कार्य प्रारम्भ हुआ। जो समितियां बनी थीं उनके संयोजक महोदयों को तत्तत् समिति का कार्यभार सौंपा गया। इन समितियों ने स्वतन्त्र रूप से क्या २ कार्य किया उसके इतिवृत्त, इस रिपोर्ट के लिखने तक, स्मारकपत्र देने पर भी हमारे कार्यालय में प्राप्त नहीं हुए थे, अतएव तत्सम्बन्धी कोई उल्लेख अभी नहीं कर रहा हूँ। परन्तु मुझे आशा है कि उक्त समितियों के कुछ इतिवृत्त इसी सम्मेलन पर आपके सन्मुख उपस्थित किये जावेंगे।

कार्यालय के आधीन एक तो चोपड़ा कमेटी के सुझावों को कार्यान्वित कराने का विशेष कार्य था और दूसरा भारतीय विश्वविद्यालयों में आयुर्वेदीय विभागों की स्थापना कराने का।

पहले विषय पर जितना कार्य हुआ उसकी कुछ सूचना आपको महा-सम्मेलन पत्रिका द्वारा मिलती रही है। इस विषय में सफलता प्राप्त करने के लिए ही ता० २० सितम्बर १९४९ को भारत के प्रमुख पत्र-प्रतिनिधियों के सम्मेलन (प्रेस कान्फ्रेंस) का आयोजन किया गया था, जिसमें महासम्मेलन के सभापति श्री कविराज हरिरंजन मजूमदारजी ने पत्र-प्रतिनिधियों से चोपड़ा कमेटी के इतिवृत्त को कार्यान्वित कराने के लिये पूर्णरूप से प्रचार करने का अनुरोध किया। हमारे सतत प्रयत्न का यह फल निकला है कि सरकार ने आयुर्वेदीय अनुसंधान के सुझाव प्रस्तुत करने के लिये एक नई समिति का निर्माण किया है, जिसके ९ सदस्यों में से ४ सदस्य महासम्मेलन स्थायीसमिति के हैं। यद्यपि इस समिति के विचार्य विषय कुछ दुःखजनक थे, तो भी हमने उस ओर माननीया स्वास्थ्य-मंत्रिणी का सामयिक ध्यान आकर्षित करा दिया था। उनसे जो हमारा पत्रव्यवहार हुआ है और हो रहा है उसे आयुर्वेद की हित की दृष्टि से अभी प्रकाशित नहीं किया गया। इसी सम्बन्ध में एक डेपूटेशन माननीया स्वास्थ्य-मन्त्रिणी को वैद्यरत्न श्रीनिवासमूर्ति मद्रास के नेतृत्व में ता० १७-२-५० को मिला था और अपनी कुछ शंकाएं उनके सामने रखी थीं। यह शंकाएं क्या निरी शंकाएं ही रहेंगी; यह देखने की बात है।

विश्वविद्यालयों में आयुर्वेदीय विभाग खोलने के विषय में हमारे प्रयत्न बहुत हद तक फलीभूत हुये हैं। लखनऊ तथा नागपुर यूनीवर्सिटियों में आयुर्वेद शिक्षण विभाग खोले गये हैं। देहली, आगरा तथा पूना विश्वविद्यालयों ने हमारे सुझावों पर विचार करने के अपने निश्चय की हमें सूचनाएँ दी हैं।

प्रान्तों में आयुर्वेद की प्रगति पर हम निरन्तर प्रान्तीय सरकारों के सम्पर्क में रहे हैं। प्रत्येक प्रान्तीय सरकार से हमने पृथक् आयुर्वेद-विभाग स्थापित करने के विषय में अनुरोध किया है। राजस्थान तथा उत्तरप्रदेश में पृथक् आयुर्वेद विभाग खुल गये हैं। राजस्थान में वैद्यरत्न प्रतापसिंहजी रसायनाचार्य तथा उत्तर प्रदेश में वैद्यराज श्री दत्तात्रेय अनन्त कुलकर्णीजी की नियुक्ति हुई। हम दोनों महानुभावों को बधाई देते हैं। शेष सरकारों ने हमारे प्रस्तावों के अनुसार बहुत हद तक कार्य करने का हमें आश्वासन दिया है। प्रान्तीय बोर्डों पर भी हमने रजिस्ट्रेशन में श्रेणी भेद उड़ा देने के विषय में जोर डाला है, हमें आशा है कि उसमें सफलता प्राप्त होगी। बम्बई तथा मद्रास प्रान्तों में आसव और अरिष्टों पर जो प्रतिबन्ध थे उनको हल्का कराने में हम प्रयत्नशील रहे हैं। इस प्रकार कार्यालय प्रस्तावों को कार्यान्वित कराने में पूर्ण चेष्टा करता रहा है।

गत महासम्मेलन से अभी तक महासम्मेलन स्थायीसमिति एवं कार्यकारिणी समिति के चार सम्मिलित अधिवेशन हुए हैं, जिनके कार्य-विवरण आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित किये जा चुके हैं।

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इस वर्ष देहली में हो रही अखिल भारतीय उद्योग-प्रदर्शनी के अन्तर्गत महासम्मेलन की ओर से आयुर्वेदीय प्रदर्शनी का आयोजन किया गया है। उक्त प्रदर्शिनी में जनता को आयुर्वेद की श्रेष्ठता दर्शाने का विशेष प्रयत्न किया गया है। इस सम्बन्ध में समिति के संयोजक श्री गुरुदत्तजी की कार्य-तत्परता के लिये हम उनके आभारी हैं।

आयुर्वेद के सार्वभौम प्रचार के लिये एक सार्वभौम-प्रचार-समिति का आयोजन महासम्मेलन की [illegible] समिति के ता० १९–२० नवम्बर के अधिवेशन में किया गया था, जिसके संयोजक श्री पं० शिवशर्माजी निर्वाचित किये गये थे। संतोष का विषय है कि इसी बीच में श्री शिवशर्माजी ने "आयुर्वेद तथा जन एवं उद्योग-स्वास्थ्य" के विषय में एक सुन्दर पत्रक अंग्रेजी भाषा में मुद्रित कराया है। इस पत्रक में आयुर्वेदीय दृष्टिकोण का अच्छा विवेचन है। पत्रक के मुद्रणार्थ जो व्यय हुआ उसमें से २००) श्री पं० मुन्शीरामजी आयुर्वेदाचार्य (भटिण्डा निवासी) ने प्रदान किये हैं, जिसके लिये हम

उनके आभारी हैं। इस पत्रक-माला में स्वास्थ्य सम्बन्धी विभिन्न विषयों पर आयुर्वेदीय दृष्टिकोण के विवेचन के लिये लगभग १० पत्रक और निकाले जावेंगे। उनके प्रकाशनार्थ जो सज्जन सहायता देंगे उसके लिये आयुर्वेद तथा महासम्मेलन उनका आभारी रहेगा। श्री पं० शिवशर्माजी का यह कार्य बहुत सराहनीय है। अपना बहुमूल्य समय निकालकर भी उन्होंने इस कार्यभार को सम्भाला है उसके लिये हम उनके आभारी हैं।

इस वर्ष महासम्मेलन के अन्तर्गत आसाम को छोड़कर शेष सभी प्रांतों में पूर्वापेक्षा बहुत अच्छा संगठन हो गया है। सभी प्रान्तों में वैद्यसम्मेलन स्थापित हो गये हैं जो महासम्मेलन से सम्बद्ध है। लेकिन उन सबका कार्य सन्तोषजनक है, यह नहीं कहा जा सकता।

अखिलभारतीय आयुर्वेद-विश्वविद्यालय योजना के सम्बन्ध में जो कार्य हुआ है, उस पर श्रीमान् कविराज उपेन्द्रनाथदास विद्यापीठ मन्त्री अपना पृथक् वक्तव्य देंगे।

देशभर में आयुर्वेदोत्थान किस सीमा तक पहुँचा है तथा तत्सम्बन्धी अन्य क्या-क्या प्रगति होरही है उसका विवरण एक पृथक् पत्रक में छापा गया है जो पृथक् वितरित किया जा रहा है।

आयुर्वेद-महासम्मेलन तथा विद्यापीठ के आय-व्यय की क्या स्थिति रही, इसका अनुमान आप फरवरी मास की पत्रिका में प्रकाशित सन् १६४८-४६ वर्षीय आय-व्यय विवरण से लगा सकेंगे। महासम्मेलन-विद्यापीठ के आय के साधन सर्वथा वही हैं, जो दुःखद मँहगाई काल से पहले थे। व्यय विवशतया अधिक करना पड़ रहा है। महासम्मेलन की आय बढ़ाये बिना किसी प्रकार की प्रगति करना असम्भव है। साथ ही परिवर्तित परिस्थिति में हमें अधिक वैतनिक कार्यकर्ताओं की आवश्यकता पड़ेगी और कार्यालय का पुनर्निर्माण करना पड़ेगा। आयुर्वेद को अपने उपयुक्त स्थान तक पहुँचाने के लिए अब भरसक प्रचार अनिवार्य हो गया है। इन सब कार्यों से व्यय और भी बढ़ेगा। इस अवस्था में महासम्मेलन के लिए एक आर्थिक संकट उपस्थित हो गया है जो अग्रिम वर्ष में परिस्थिति-वश और भी उग्ररूप धारण करेगा। इस स्थिति की ओर मैं आपका पूर्ण ध्यान आकर्षित करता हूँ ताकि इसके सामयिक निराकरण का आप गम्भीरता पूर्वक विचार करके अभी से ही उपाय ढूंढ सकें। इसी सम्बन्ध में महासम्मेलन स्थायी-समिति के गताधिवेशन द्वारा निर्मित उपसमिति के सुझाव आपके विचारार्थ उपस्थित किये जावेंगे। पाकिस्तान से आये हमारे वैद्य भाईयों की समस्यायें सुलझाने का कार्यालय ने विशेष प्रयत्न किया है और

इस दिशा में सरकार ने पत्र-व्यवहार करके बहुत हद तक सफलता भी प्राप्त की है।

श्री शंकरदासजी शास्त्रीपदे स्मारक-कोष में महासम्मेलन के अन्यतम कर्णधार श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल के अथक परिश्रम से अब १४००० के लगभग रुपया एकत्रित हो गया है। इस अधिवेशन में इस समिति के उद्देश्यों को पूर्ण करने का उपक्रम किया गया है।

महासम्मेलन-पत्रिका के रूप में हमने बहुत कुछ परिवर्तन करने का प्रयत्न किया है। आशा है पत्रिका भविष्य में मास-प्रतिमास अच्छी से अच्छी निकलेगी।

निधि समिति का कार्य पूर्ववत अच्छी प्रकार चलता रहा है। इस समिति के पास ८०५४१।।) जमा हैं जिनमें ७०००० के लगभग रुपया सरकारी सर्टिफिकेटस् में है। इस समिति का नियमानुसार अब: पुनः निर्वाचन होना है। समिति के मन्त्री श्री कविराज हरिरंजन मजूमदार ने अपना कार्य बहुत दूरदर्शिता बुद्धिमत्ता और तत्परता से किया है जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

अपने कटु कर्तव्य का पालन करता हुआ यहां पर यह मैं लिख देना उचित समझता हूं कि हमारे संगठन में अभी बहुत त्रुटियाँ हैं। हमारी बहुत सी प्रांतीय शाखाओं का कार्य शिथिल है। अपने अपने प्रांत की आयुर्वेदीय स्थिति की गति विधि के विषय में सभी प्रांत सतर्क प्रतीत नहीं पड़ते और न ही तत्सम्बन्धी सूचनाएं कार्यालय में बार २ प्रार्थना करने पर भी वे भेजते हैं। जो कि दुःख का विषय है, विशेष कर जब कि प्रांतीय सरकारों ने हमें सभी सूचनायें अच्छे ढंग में भेजी हैं। हमारी इच्छा है कि हमारी सभी शाखाओं के अच्छे सुसंगठित कार्यालय हों, जो अपने २ प्रांत में आयुर्वेद की प्रगति की सभी सूचनाओं को भी प्रकाशित करें। इस प्रकार शाखाओं का संगठन बहुत आवश्यक है और इसे सुदृढ़ बनाये बिना हम अपने ध्येय में अग्रसर नहीं हो सकेंगे।

मेरी दूसरी विनम्र प्रार्थना यह है कि हमें उपसमितियां न्यूनातिन्यून नियुक्त करनी चाहियें और जब उन्हें नियुक्त करना आवश्यक प्रतीत पड़े तो उनके कार्य के लिए सभी साधन उपस्थित करने चाहिये, उनका विचार हमें उन्हें नियुक्त करते समय ही कर लेना चाहिए।

महासम्मेलन कार्यालय को सुदृढ़ एवं सुसंगठित बनाने के लिए यह आवश्यक है कि महासम्मेलन का अपना भवन हो, जहां पर यह केन्द्रीय कार्यालय स्थिर कर दिया जावे।

इस जनतन्त्रवाद के युग में यह आवश्यक है कि जनता में अधिकाधिक प्रचार करें और उसके लिए सभी साधन संग्रहीत करें।

लगभग पांच मास से महासम्मेलन के प्रधानमन्त्री श्री गणेशदत्तजी सारस्वत के बाहर चले जाने के कारण यह कार्य भार अचानक मुझ पर आ पड़ा। अतएव मैं आपका बहुत आभारी हूँ; क्योंकि आपने बाहर रहते हुए भी अपने सामयिक संकेतों द्वारा कार्य में बहुत सहायता दी। साथ ही महासम्मेलन विद्यापीठ के अन्य पदाधिकारियों एवं देहली प्रांत के अपने साथियों का मैं विशेष ऋणी हूँ जिन्होंने मुझे निरन्तर सहयोग प्रदान किया है। कार्यालय के कार्यकर्ताओं का मैं आभारी हूँ जिनके अथक परिश्रम से सारा कार्य सुचारु-रूप से चलता रहा है। जैसा भला बुरा कार्य मैंने किया है उसे आशा है आप अपनायेंगे-जो अच्छा कार्य मैं कर सका हूँ वह अपने सहकर्मियों के कारण और जो त्रुटि रही है उसके लिए मैं स्वयं अपने आप को ही दोषी मानता हूँ।

गत वर्ष मैं किस प्रकार संयुक्त मन्त्री बना यह समस्या मैं अभी तक भी हल नहीं कर सका हूँ कारण कि मैंने किसी सम्मेलनाधिवेशन के इससे पूर्व कभी दर्शन भी नहीं किये थे। मैं चाहता था यह कार्य वृद्धजन ही करें लेकिन अपने सभापति जी की आज्ञा से जिनका मेरा सम्बन्ध सभापति का ही नहीं बल्कि गुरु-शिष्य का भी है मैं अपने आपको इस से अलग न रख सका।

———

निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ

३७ वां वार्षिक सम्मेलन

—१६ फरवरी—

निखिल भारतीय महासम्मेलन के पण्डाल में ही १६ फरवरी की शाम को ४॥ बजे निखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ, जो रात्रि के ७ बजे तक चला। स्वागताध्यक्ष सेठ चुन्नीलाल जी जयपुरिया का स्वागत-भाषण उनके अस्वस्थ होने से वैद्य श्री ओंकारप्रसादजी शर्मा ने पढ़ा। भाषण निम्न लिखित है:—

स्वागताध्यक्ष का भाषण

आदरणीय सज्जनवृन्द, वैद्य बन्धुओ तथा देवियो !

परम पिता परमेश्वर की यह असीम कृपा है कि हमें आज आप लोगों के दर्शन तथा स्वागत करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ है। स्वागत समिति के निमन्त्रण को स्वीकार कर अपने अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़ कर लम्बी यात्रा के कष्ट को उठाते हुए आप लोग यहां पधारे हैं। इसके लिये देहली की स्वागत समिति आपकी परम कृतज्ञ है। भारत के प्रत्येक भाग से आगत आयुर्वेद के कुशल कर्णधार, विद्वान्, प्रख्यात चिकित्सक तथा आयुर्वेद प्रेमी सभी महानुभावों का मैं स्वागत समिति कीओर से हार्दिक स्वागत करता हूं और सभी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूं कि आप लोगों का समुचित स्वागत करने के लिए हमने जो आयोजन किया है उसमें सतत प्रयत्न करने पर भी त्रुटियों का होना स्वाभाविक है। निश्चय ही आ[illegible] लोगों को सब प्रकार की सुविधाएं उपस्थित करने में हम सदा असमर्थ हैं। आपके स्वरूप और मान मर्यादा के अनुरूप हम आपको सुख-सुविधाएं सुलभ नहीं कर सके हैं। अतः हम अपनी त्रुटियों के लिए अपने प्रिय बन्धुओं तथा पूज्य एवं वयोवृद्धों से सविनय क्षमा प्रार्थी हैं। स्वागत सम्बन्धी हमारी इन असमर्थताओं का कारण निर्देश यहां अनुचित न होगा। देश विभाजन के फलस्वरूप दिल्ली पर उसकी सामर्थ्य से अधिक भार आ पड़ा है। गत दो वर्षों में इस नगर की जन-संख्या तिगुनी से अधिक हो गई है। इस से यहां खाली स्थानों का मिलना तो दुष्प्राप्य हो ही गया है साथ ही जीवनोपयोगी आवश्यक वस्तुओं की प्राप्ति भी अत्यन्त कठिन हो गई है। फिर भी इस विषमता के साथ २ हमारे हृदय में सजातीय बन्धु

प्रेम उमड़ रहा है। आशा है आप लोग हमारे स्वागत सम्भार में, इसी भावना को मुख्य समझते हुए हमारी त्रुटियों पर ध्यान न देंगे।

माननीय बन्धुओ !

यवनों के शासन काल से लेकर अब तक जो कुछ भी आयुर्वेद के क्षेत्र में कार्य हुआ है वह सब व्यक्तिगत त्याग तथा भारत के कुछ धनी मानी सज्जनों के सहयोग से हुआ है। इसमें सरकार की ओर से प्रोत्साहन मिलना तो दूर रहा, उपेक्षा ही रही है। प्रति वर्ष आयुर्वेद सम्मेलन होते हैं। आयुर्वेद उन्नति की चर्चा चलती है। किन्तु यह देख कर हमें बड़ा दुःख होता है कि आयुर्वेद विश्वविद्यालय की बात तो दूर रही हम लोग आज तक एक भी ऐसा आयुर्वेद महाविद्यालय नहीं चालू कर सके हैं जिस में अन्य कालेजों की भांति केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकार की सहायता उपलब्ध हो। समय २ पर हमारे महाराजाओं ने और धनिकवर्ग ने आयुर्वेद प्रचार में आर्थिक सहायता दी है, किन्तु भारत सरकार की ओर से सदा उपेक्षा ही दिखाई गई है। इस समय देश में जितने अस्पताल खुले हुए हैं उनमें करोड़ों रुपयों की औषधियां प्रति वर्ष विदेशों से मंगाई जाती हैं। इसकी तुलना में सरकार ने आयुर्वेद औषधालयों पर क्या खर्च किया है? वास्तव में हम अपने आपको एक असहायावस्था में अनुभव कर रहे हैं। प्रतीत होता है हमें अग्नि परीक्षा देनी पड़ेगी। इसके लिये अब समय आ गया है या अभी प्रतीक्षा करनी है इन बातों का निर्णय आप लोग ही करेंगे।

महानुभावो !

आज यह २७ वां अवसर है जब कि आप एक स्थान पर एकत्रित हो कर आयुर्वेद की उन्नति के साधनों और उपायों पर गहनता से विचार करेंगे। विगत अनेक वर्षों से आयर्वेद के अनादित्व अथवा पुरातनत्व के सम्बन्ध में अनेकों अकाट्य प्रमाण दिए जा चुके हैं। हम ही नहीं अपितु अन्य देशीय लोग भी जिन में कृतज्ञता का कुछ भी अंश विद्यमान है, वे इस बात को स्वीकार करते हैं कि चिकित्सा विज्ञान में भारत का स्थान सर्वोपरि रहा है। अतः इस विषय में पुनः कुछ कहना सम्भवतः पिष्टपेषण ही होगा।

इस समय हमें इस बात पर विचार करना है कि समय की कठिनाईयों के होते हुए भी किस प्रकार आयुर्वेद के प्रति सर्व साधारण को आकर्षित किया जाय। अब केवल मौखिक अथवा लिखित प्रमाण देकर ही आयुर्वेद की महत्ता बतलाने का समय नहीं रहा। अधिक समय तक इन्हीं पुराने नियमों पर चलते हुए हम जनता को अपनी अनुगामिनी बनाए नहीं रख सकते हैं। माना कि

अपने मुख्य ध्येय तक पहुँचाना है तो अविलम्ब ही कोई क्रान्तिकारी कदम उठाना होगा। अन्यथा यदि पूर्ववत् शिथिल गति से ही चलते रहे तो हम जनता की अविश्वास भावना की वृद्धि के ही कारण होंगे।

आगत बन्धुओ !

मैंने आपका बहुत समय ले लिया है। सभापति महोदय एवं अन्य विद्वानों से आपको अपनी उन्नति के उपाय के सम्बन्ध में विचार विमर्श करना है। अतः अन्त में मैं सभापति महोदय को तथा बाहर से आये हुए अन्य बन्धुओं को पुनः धन्यवाद देता हूं कि आप लोगों ने हमारे निमन्त्रण को स्वीकार कर अपने शुभागमन से नगरी को तथा दर्शनों से नगर निवासियों को कृत-कृत्य किया है। स्वागत समिति आप लोगों की इस कृपा के लिये हृदय से कृतज्ञ है। हम अपनी त्रुटियों के लिये फिर आप से क्षमा याचना करते हैं। अब मैं श्री आदरणीय सभापति जी से प्रार्थना करूंगा कि वे सम्मेलन के अध्यक्ष के आसन को अलंकृत कर के कार्य-क्रम को संचालन करने की कृपा करें।

अध्यक्षीय भाषणम्

स्वागताध्यक्ष के भाषण के बाद नियमित रूप से अध्यक्ष पद के लिए रतनगढ़ के श्री हनुमान आयुर्वेद विद्यालय के अध्यक्ष राजवैद्य आचार्य श्री मणिरामजी शर्मा का नाम प्रस्तुत किया गया। अनुमोदन-समर्थन के बाद आपने तुमुल हर्षध्वनि में अपना आसन ग्रहण किया और संस्कृत में अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण तथा भावपूर्ण निम्न लिखित भाषण पढ़ाः—

यत्प्रभापटलोद्भासि भासतेऽद्यापि भारतम्।
आयुर्वेदात्मकं ज्योतिः शाश्वतं नः प्रकाशताम्॥
इन्द्रप्रस्थे विविधविशिधैर्शोभिते विश्वशस्ते,
शिक्षाकेन्द्रे गुणिजनगणैर्गीयमानेऽतिमान्ये।
आयुर्वेदं समधिगतवान्यः पुरा छात्रभावात्,
तस्मिन्नस्मि प्रमुखपदभाक् सः प्रसादो गुरूणाम्॥
मात्सर्यममतं येषां विख्यातं क्षितिमण्डले।
श्रीमनोहरलालाम्ने पूर्वाचार्या मणेर्मताः॥
श्री लक्ष्मीचरणान्नमामि सततं धर्मार्थकामप्रदा-
नायुर्वेदविशेषकार्यकरणे साक्षाद्धि धन्वन्तरीन्।
मान्यैः परमेष्ठा भूमिपतिभिर्मान्यान वदान्यान् गुरून्
मान्यस्थान भिषग्जामथो गुणनिधीन् शिष्यप्रशिष्यमनुतान्॥

आचार्य श्री मणिरामजी
(अध्यक्ष - आयुर्वेद विद्यापीठ सम्मेलन)

दिल्लीपूर्वं निगडितकरा पारतन्त्र्यस्य पाशै-
र्मुक्ता साभूद्बहुतिथकृतैर्गान्धिनिर्दिष्टकार्यैः ।
जाता चैषा जनगणमनःस्वीकृतैः संविधानैः
सर्वश्रेष्ठा बहुविधजनैः सम्प्रतीष्टास्मदीया ॥

अयि मान्या विविधविद्याविद्योतितविलक्षणलक्षणा आयुर्वेदविचक्षणाः ! अतिसुखकरे परममनोहरे स्वास्थ्यविधायके वसन्तमये स्वतन्त्रतासमयेऽद्य विपुलवैभवगुणावदातायां भारतप्रसिद्धायां विभिन्न संस्कृतिसंमिश्रणस्य केन्द्रस्थानीयायां प्राचीनकालादारभ्य बहूनां विभिन्नशासकानां संस्मृतिचयं स्वांचले सगर्वं वहन्त्यामैतिहासिक्यां प्रधानराजधान्यां देहलीनगर्यां निखिलब्रह्माण्डसूत्रधारस्य जगन्नायकस्य भगवतः श्रीपरमात्मनः कृपया समवेतमेतत्सप्तत्रिंशत्तमं निखिलभारतीयायुर्वेदशिक्षासम्मेलनम् ।

यद्यपि निखिलभारतवर्षस्यानेके वेदविद्यापारंगताः पीयूषपाणयः प्राच्यौषधविज्ञानानुभवोपकृतछात्रवर्गा बहुशो विद्वद्वैद्यवर्या वर्तन्ते तेषु विद्यमानेस्वपि धीमद्भिः परमसज्जनैर्व्यवहारानभिज्ञे श्रीगुरुचरणप्रसादावाप्तकतिपयज्ञानकणे चैककोणस्थे छात्राध्यापके साधारणे व्यक्तावपि मयि निखिलभारतवर्षीयायुर्वेदशिक्षासम्मेलनस्य साभापत्यं समर्प्य स्वोदारताया अपूर्वः परिचयः प्रादायि, तदर्थं हार्दिकाः धन्यवादाः । यदत्र शिक्षापरिष्कारपरिष्कृतान्तःकरणः कश्चिद् विश्वविश्रुतो विपश्चित् वैद्यो नियुज्येत तद्ध्येतीवशोभनं मनोरमं च स्यात् । किन्त्वाशासे भवत्साहाय्येनातीवदुर्भरमपीदं पदं यथाकथंचिदुद्वोढुं शदयामि ।

मान्याः ! क इदं जानातिस्म, यन्निखिलजनकल्याणपरायणस्य, जितरागद्वेषमदमानमोहस्य निर्भीकस्य कौपीनधारिणो विश्ववन्द्यस्य गान्धिमहात्मनो विश्वप्रियान् प्राणानपहृत्य कलङ्कयिष्यति कश्चिच्चेमां राजधानीम् । असौ महात्मा भारतवासिनो जनान् सर्वतन्त्रस्वतन्त्रान् स्वकीयचक्षुषावलोकयितुमस्माकं सम्मुखे नायावलोक्यत इति स्मरतां चेखिद्यन्ते नश्चेतांसि । तथा समयेऽस्मिन्न स्मास्वायुर्वेदहृदयविदः श्रीज्योतिश्चन्द्रमहोदयाः यैर्महता श्रमेण गवेषणापूर्णं शारीरशास्त्रं परिष्कृतम्, तथानेकग्रन्थरचयितारो हिन्दुविश्वविद्यालयान्तर्गतायुर्वेदीयविभागाध्यक्षाः डा० बालकृष्ण अमरजी पाठकमहाशयास्तथा सम्मेलनसभापतयः श्रीमणीन्द्रकुमाराश्चैव जम्मू (काश्मीर) निवासी वैद्यराज परशुराम नागरमहोदयानां पुत्ररत्नं नारायणप्रसादश्च न सन्तीति महद्दुःखम्, प्रार्थयामः परेशं यद्दिवंगतेभ्यः प्रयच्छेत्परमां शान्तिम् ।

सहृदयाः !

अद्यत्वे सर्वतोऽस्मद्राज्यं राजतेऽतो वयमद्य मिलिताः किंचिदायुर्वेद-महत्वमालोचयामः । प्राचीनवैदिककालकपुराणेतिहासविदः सभ्याः ! नैतन् तिरोहितं भवतां यत् सृष्ट्यारम्भत आरभ्य इतः कालात् द्विशतवर्षपूर्वं यो महान् समयो गतः तस्मिन् काले किमु रोगा नासन्, अथवा रोगिणो नाभवन् किं वा चिकित्सा नासीत् ? परं चैतदितिहासप्रमाणेन युक्त्यादिभिश्च स्वीकृतं स्यात्, यद्रोगरोगिचिकित्सादिकं सर्वमेवासीत् । तर्हि जिज्ञासयतां यत् का सा चिकित्सा यया रोगिणो रोगमुक्ता भवन्तिस्म । तस्मिन् पुराणे समयेऽयमेवाथर्ववेदोपाङ्गः सर्वाङ्ग आयुर्वेद एवासीत् येन शल्यचिकित्सास्थिसंधानादि च कियत् परिष्कृतं सद्यः फलदं चासीत्, यत् श्रुत्वा आधुनिकाः नव्यचिकित्सका अपि सशिरः कम्पं साश्चर्यं मन्यते । सर्वथा यच्छिन्नमङ्गं पुनस्तथैव तस्य सन्धानमतीवदुष्करं यदाधुनिका अपि कर्तुमक्षमा एव । यथा ह—

यज्ञस्य हि शिरश्छिन्नं पुनस्ताभ्यां समाहितम् ।
प्रक्षीणा दशना पूष्णो नेत्रे नष्टे भगस्य च ॥ इत्यादि

तथापि यद् यद् वस्तु राज्याश्रितं भवति तत्तद् समेधत इति प्राकृतिको नियमः । यथा—

अंग्रेजैर्भारतमधिकृत्य स्वप्रभुतास्थापनार्थं, स्वसंस्कृतिविकासाय च भारत-सभ्यतासंस्कृतिश्चाशेषा निश्शेषं नीता । लवपुरीयपंचनद संस्कृतविद्यालये प्राक् संस्कृते प्राज्ञविशारद-शास्त्रिपरीक्षात्रयं, तथा वैद्यके वैद्यवैद्यवरवैद्यराज-परीक्षात्रयं च निर्धारितमभूत् । परमेकवर्षानन्तरमेवायुर्वेदपरीक्षात्रयं विश्वविद्यालयाधिकारिभिर्निरुद्धम् । विचारितं च तैर्यदायुर्वेदस्य परीक्षा प्रचलिष्यति तदा परीक्षोत्तीर्णानामपि पाश्चात्यचिकित्सकैः समं सर्वो राजसन्मानादिसम्मानं भविष्यति । आयुर्वेदभेषजानि स्वल्पमूल्यानि सुलभानि भारतीयजनतायाः प्रकृतिहितानि चेदस्योद्धारेऽस्माकं भेषजानि न कोऽपि क्रेष्यतीति मत्वा आयुर्वेदोपरिध्यानं नादायि, प्रत्युतास्य ह्रासकरणे यत्न आचरितः । अज्ञानिकोय-मायुर्वेद इत्युच्चैः प्रचारि च । गौराङ्गव्यापारप्रतिनिधिभिः स्वार्थलोलुपैरङ्गरेजै-रपि तदेवानुमतम् । राजसत्तया नव्यवैद्यकस्य वर्द्धनोपवर्द्धनादिकार्यं बहुसफलम् । यथा चाष्टाङ्गायुर्वेदस्य केवलं शल्याङ्गं दृष्ट्वा बहुव्ययेन तदङ्गं परिष्कृत्य परिवर्द्धनं च बहुधा प्रचारितमासीत् विदेशी राज्येन, इति सर्वं विदित-मेतत् । कायचिकित्साङ्गे त्वधुनापि ते आयुर्वेदमेवैनं पृष्ठ एवेति सर्वजनप्रत्य-क्षम् । परं चैवं प्रकृतिरीतिनियमन् सत्यं भवति तत् संकटापन्नेऽपि समये नहि विलुप्यति । भवेद्धि कालवशेन जीर्णं शीर्णं वा ! अनपायमायुर्वेदो राजमाश्रय-

मन्तरापि यथाकथंचित् सत्य-सिद्धान्तत्वादवस्थितोऽस्ति, केवलमस्य संरक्षणे कैश्चिद् धनिकैरेव साहाय्यमकारि, तेनाद्याप्ययमुच्छ्वसिति।

विभावयन्तु विचारशालिनो यद्राज्यानाश्रितोऽपि भारतीयायुर्वेद अद्यावधि जीवति पुनश्चास्मै राज्याश्रयणं प्राप्तं स्यात् तदा किमु कथनीयमस्य लोकोपकारितायाः। सर्वकारः (सरकारः) आयुर्वेदाय संरक्षणशरणं प्रयच्छेत्तदा स्पष्टं सर्वकाराय विदितं भवेत् यदायुर्वेदो हि वैज्ञानिकपद्धतिपरः। पाश्चात्यशिक्षादीक्षिता डाक्टरा राज्यानुकूल्येपि स्वल्पानेव धनिकान् नगरेष्वेव चिकित्सन्ति। वैद्यास्तु राज्याश्रयणमन्तरापि प्रतिनगरं प्रतिग्रामं प्रतिवर्गं प्रतिकुटीरञ्च स्वपद्भ्यामेव गत्वा कृशान् दीनानाथानपि जनान् प्रेम्णा पश्यन्ति चिकित्सन्ति च, अतो बलेनाहं ब्रवीमि सर्वसाधारणजनतायाः मतमंग्रहणेन सर्वकारोऽप्यस्मन्मत्यसेवायाः विस्तृतिं प्रशस्तिं च ज्ञास्यति। यदि चैतत् सत्यं स्यात्तदाऽस्माकमायुर्वेदविद्या अवश्यमेव राष्ट्रमान्या भवेत्। मन्ये शस्त्रकर्मणि वैद्या नाद्यापि प्रवृत्तास्तथापि शल्यशास्त्रीयशिक्षादीक्षिता एते स्वल्पेनैव कालेन तत्रापि प्रागल्भ्यमासादयितुं सक्षमा इति दृढीयान् ममाशावन्धः। पुराणि शल्यकर्मणि निष्णाता वैद्या आसन्नित्यनुपदमेवोक्तम्।

अथ चायुर्वेदे स्वास्थ्यसंरक्षणविषयिविज्ञानं कियदुपयुक्तमिति विवेचयन्तु विचक्षणाः।

यथा दीपस्य परिपालनं स्नेहवर्तिदानादिपोषणेन क्रियते, शलभपातादिनिर्वापकहेतुपरिहारेण च, तथा स्वास्थ्यं विशुद्धाहाराचाराभ्यां सदा क्षीयमाणशरीर-पोषणेन क्रियते, प्रत्यवायहेतुपरिहारेण च। श्रीभगवांश्चरकः सूत्ररूपेणैव स्वास्थ्यपोषकहेतुं स्वास्थ्यविघातकहेतुपरिहारश्च प्रदर्शितवान्। तद्यथा—

तच्च नित्यं प्रयुंजीत स्वास्थ्यं येनानुवर्तते।
अजातानां विकाराणामनुत्पत्तिकरञ्च यत्॥

इति, आयुर्वेदशास्त्रं हि रोगाणां चिकित्सापेक्षया तेषां यथोत्पत्तिर्न स्यात्तथोपदिशति, एतदर्थं हि दिनचर्यर्तुचर्यादीनां तथा शरीरधारकानामुपस्तम्भानामाहारनिद्राब्रह्मचर्यादीनां च प्रतिपादनम् करोति। यद्येभिर्नियमैः शरीरं पाल्यते तदा दूषिता आहारादयः शरीरे विकृतिं न कुर्वन्ति। पाश्चात्यायुर्वेदशास्त्रनिपुणाः शरीरपरिमार्जनादिबाह्यशुद्धावधिकं ध्यानं ददति नाभ्यन्तरशुद्धौ, बाह्यशुद्धेरपेक्षया आभ्यन्तरशुद्धेरधिकः प्रभावो भवति शरीरे। दृश्यते लोभेर्ष्याद्वेषमात्सर्यरागादिरहितान् सन्तोषिणो जितेन्द्रियान् सत्यव्यापारपरान् न बाधते तादृग् रोगजातं यादृगितरान् इति। ते ह्यमद्द्यदारादिना गतधना अग्निमान्द्यादिरोगाणामधिष्ठानभूता दुःखमनुभवन्ति म्रियन्ते च, केचिच्चिन्तादि-

रोगपीड़िता उन्मत्ता वा भवन्ति। एतादृशाः बहवो दृष्टाश्चिकित्सिताश्च। अतोऽस्माकमायुर्वेदशास्त्रे द्विविधा शुद्धिः प्रदर्शिता यथा रोगागमो न स्यात्। किं बहुना शरीराभिसंस्कृतिरेतादृशी दृढा संपादनीया यया विरुद्धमपि भक्षितं विकारं न कुर्यात्—

"द्रव्यैस्तैरेव वा पूर्वं शरीरस्याभिसंस्कृतिः।"

विरुद्धप्रतिपक्षगुणवता द्रव्येण देहस्तथा दाढर्यमाहितो यथा विरुद्धमपि द्रव्यविकारं कर्तुं नालम्। अस्माकमायुर्वेदो धर्मशास्त्रेणापि साम्यामावहति। धर्मशास्त्रे आश्रमचतुष्टयं वर्तते—ब्रह्मचर्याश्रमो गृहस्थाश्रमो वानप्रस्थाश्रमः संन्यासाश्रमश्चेति। आयुर्वेद आश्रमस्थानीयमेषणात्रयमुपदिष्टम्। यथा हि ब्रह्मचर्यस्य शरीरदाढर्ये रोगाणामनाक्रमणे च तात्पर्यं, तथैव प्राणैषणायाः अपीति द्वयोः साम्यम्। तथा धनैषणायाश्च साम्यं गृहस्थाश्रमेण, यतो न हि गृहस्थो धनमन्तरा स्वपरिवारं पालयितुं प्रभवतीत्यनयोरपि तात्पर्यं सममेव। वानप्रस्थसंन्यासाश्रमयोः परलोकैषणायामन्तर्भावः उभयोर्हि परलोकहितसाधनलक्ष्यत्वात्। चरकवचनं यथा—

इह खलु पुरुषेणानुपहतसत्वबुद्धिपौरुषपराक्रमेण हितमिह चामुष्मिंश्च लोके समनुपश्यता तिस्र एषणाः पर्येष्टव्या भवन्ति। तद्यथा—प्राणैषणा धनैषणा परलोकैषणेति।

एवमायुर्वेदधर्मशास्त्रयोः सामञ्जस्यम्। नव्यवैद्यकं केवलमैहिकं हि वेदयति, अस्मदायुर्वेदश्चोभयोर्लोकयोर्हितम्। किं बहुना धनलोलुपाः केचिन्नव्य मृतेऽपि रोगिणि शुल्कं गृह्णन्ति, आयुर्वेदाभिज्ञाः बहवो मुमूर्षुणा प्रदीयमानमपि शुल्कं न स्वीकुर्वन्तीति दृष्टचरम्। तत्र परलोकभीतिर्नास्ति, अत्र च परलोक भयं वर्तते, अतो महर्षिभिरध्यात्मवादः प्रशंसितो न धनादिभौतिकवादः आयुर्वेदः शरीरे रोगोत्पत्तिर्यथा नस्यात्तथा बहुधा प्रतिपादयति, रोगप्रतिषेध क्षमता ह्यस्य परं लक्ष्यम्। यथा—

> शीतोद्भवं दोषचयं वसन्ते नित्यं हिताहारविहारसेवी।
> अर्थेष्वलभ्येष्वकृतप्रयत्नं कृतादरं नित्यमुपायवत्सु॥
> जितेन्द्रियं नानुपतन्ति रोगास्तत्कालयुक्तं यदि नास्ति दैवम्॥

इत्यादि

आयुर्वेदीयचिकित्सा—

आयुर्वेदो हि रोगभेदेन द्विविधां चिकित्सामुपदिशति—शोधिनीं शमनीञ्च। शरीरस्य कुपितविकारकारिणां दोषाणां बहिर्निःसारणेन

समूलोन्मूलनमेव शोधिनी चिकित्सेति व्यवहारः। यद्दोपलिङ्गानां शान्तिः सा शमनीचिकित्सेत्यायुर्वेदममयः।

आयुर्वेदेन का चिकित्सा कुत्र रोगे कथं विधेयेत्यतीवसुन्दरतयोपदिष्टम्। शोधिनीचिकित्सा रोगाणां समूलोन्मूलनाय कियदुपयुक्तेति तदनुभवशालिनो विदन्त्येव। सेयमेकान्तात्यन्ततो रुजा कर्तॄणां रोगाणां निवृत्तेः परमोपायः, यदुक्तम्—

> दोपाः कदाचित् कुप्यन्ति जिता लंघनपाचनैः।
> ये तु संशोधनैः शुद्धाः न तेषां पुनरुद्भवः॥

अयं हि मार्गो न केवलं रोगनिवृत्तेः परम उपाय इत्येतावतैव न स्तुत्योऽपितु जनाः कदापि रोगिणो न स्युः, रुग्णाश्च त्वरयैव सुखिनः स्युरिति सिद्धान्तद्वयमप्येतेन सिद्धं भवतीत्यतोऽपि। यतः प्रतिवर्पमपि समयानुसारं स्वस्थायापि दोपनिर्हरणादिकमुपदिष्टमाचार्यैः।

तथायुर्वेदे कस्मिन् रोगे रोगिणे किं पथ्यं किमपथ्यमिति, अयं हि रोगः साध्योऽथवासाध्य इति च, तथैव रोगिणां जीवनमरणामम्बन्धिलक्षणानि च यथोपलभ्यन्ते न तथान्यत्र पाश्चात्यवैद्यके। सर्वोत्तमः सर्वैः समादृतश्च स एव पन्था भवितुमर्हति, यत्र चलन्तो जनाः कदापि स्वास्थ्यविकला न स्युरीदृग् विधिश्चायुर्वेदोपदिष्ट एव पन्था। यत्र हि कस्मिन्नृतौ कथं वर्तितव्यं, किं भक्षितव्यं, किं च सेवितव्यं, कीदृशं वस्त्रं धार्यमित्यादि प्रत्येकर्तु संचर्यासद्वृत्तञ्च वर्णितमस्ति, यमनुसरन्त इहैव लोके केवलं स्वास्थ्यलाभमेव लभेरन्नित्येव नहि, अपितु तदुपदिष्ट-मार्गानुमारिभ्यः परलोकोऽपि सुखावहः स्यादिति कियदौदार्यमायुर्वेदस्येति विवेचयन्तु सुधियः।

आयुर्वेदानुसारिणी हि चिकित्सा स्वल्पव्यया नैव रोगान्तराधायिनी सुखानुबन्धिनी च। अस्याश्चोपयोगे मन्नीयमानं भेपजमिहैव देशे सर्वत्रोपलभ्यत इति कियत् सौकर्यमस्यामिति विज्ञजनसंदोहप्रमाणम्। पर्यालोचनचतुराश्चलोचयन्त्विदानीं नव्यभिपजां कायचिकित्सासरणिम्।

नव्यचिकित्सा—

नव्यैः कायचिकित्सायां नव्यचिकित्साया एव प्रयोगः प्रायः क्रियते, यद्यप्येषा चिकित्सा स्वल्पप्रयामसाध्या, परं नैकान्ततः सुखकरी। नव्यास्तु कृणितास्ताः सन्तः सर्वत्रैव तद्प्रयोगार्हेऽपि स्थले तामेव चिकित्सां कुर्वते, यथा विपमज्वरे, वृक्करोगे, उपदंशे, शीतलायां चेत्यादि सर्वरोगेषु। नव्यानां दियमदूरदर्शिनी मनोवृत्तिर्यत् यथाकथंचिच्छीघ्रं रोगशान्तिः करणीया।

तदा तेषां रोगवह्नौ भस्मं प्रक्षिप्य तत्तिरोधानमेव, न तु जलेनैव वास्तविकी तच्छान्तिः। तेन च रुग्णस्यान्तस्तिरोहितस्य स्थितो रोगः स्वल्पेनैव कालेन स्वोद्भावकं हेतुमासाद्यैव प्रादुर्भवति, तदर्थं रुग्णा मुहुर्मुहुर्नव्यभिषजां द्वारि गच्छन्ति। तं च नैव तस्य रोगस्य हेतुं समूलमुन्मूलयन्ति, किन्तु तस्य चिन्हमेवदूरयन्ति, तेन पुनरपि कालमासाद्य प्रकुप्यन्ति सहसा ते दोषाः।

प्राच्यप्रतीच्यचिकित्सयोस्तुलना—

इयं नव्यानां विज्ञाननिकषे निघृष्टा भव्या चिकित्साकृतिः। एतच्चिकित्साक्रमेण तु रोगश्चान्तरान्तरा समेधमानो रोगिणं जीर्णयंश्च तिरोहितो भवति। तदात्वे रोगी चेत्थं व्यवस्यति यन्नवीनभिषजा चमत्कारिणी चिकित्सा कृता, यदहं भेषजग्रहणसमकालमेव सुखी सम्पन्न इति स नवीनभिषजि गाढं विश्वसिति, परान् विश्वासयितुं प्रयतते ऽपि। तथैव भव्या नव्याः प्रतिश्यायपीनसशूलादिरोगेषु रूपान्तरासन्नमहिफेनादिकमुग्रं संकोचकं द्रव्यान्तरं वा प्रयुज्य तन्निरोधयन्ति। तथैव वृक्कशूलादौ पीडाशान्तिर्निद्राप्तिश्च मादकैर्द्रव्यैरेव क्रियते, परं चैतेन यावन्मदावस्था तावदेव शान्तिर्नतु चिरस्थायिनी सा। प्रत्युत नाडीचक्रं शून्यं स्तब्धं वा भवति येनरोगान्तरमाप्नोति रोगी। इतोऽप्यवधीयताम्—

भगवान् धन्वन्तरिर्हि विकारकारिणः कुपितान् दोषान् शारीरशल्यतया वर्णयति, शल्यविवेचनावसरे यथा—तत्र शारीरं दन्तरोमनखादिधातवोऽन्नमलाः दोषाश्च दुष्टा इति। इदानीं सूक्ष्मया दृशा विवेच्यं यच्छल्यानि शरीरान्तः शमनीयानि उताहो समूलोन्मूलनीयानीति। यदि शरीरं सद्म, दोषाश्च संकराः कंटका वेति मन्येत, तत्त्वेन चालोचयामस्तर्हि तत्र नव्याहृतचिकित्साक्रम उपादेयोऽथवाऽऽयुर्वेदोपदिष्टः क्रम इति सुधिय एव विभावयन्तु। विवेचयन्त्विदानीं विचारचतुराश्चिकित्सकाः यन्नव्यवैद्यै रुपयोगेऽधिक्रियमाणायाः चिकित्सापद्धत्यारायुर्वेदस्तद्विदोवाऽनभिज्ञाः सन्त्यतः सा तैरनुपयुज्यते नेति विभावनीयम्। आधुनिकैर्वैज्ञानिकैरत्यवहुश्रमेणैव गवेषणा कृता, कृत्वा चेमां स्वात्मानं धन्यं मन्यामाना आयुर्वेदमाक्षिपन्ति यन्नेदं शास्त्रं विज्ञानतुलया तुलयितुमर्हतीति। परमालोचयन्तु विज्ञाः आयुर्वेदः स्वसेविभ्यश्चिकित्सकेभ्यः पूर्वमेवचिकित्साप्रयोगःकीदृशो विधेयो वैद्येनेति, कियन् मर्यादिताः नव्यव्याधितानां कृते परमसुखोदर्कं चोपदिशति। रुग्णेषु स एव चिकित्साप्रयोगः प्रयोक्तव्यः, योऽन्यमन्यं व्याधिमसमुद्भाव्यैव जातं व्याधिं शमयेत्। यस्य प्रयोगो जातं व्याधिं शमयेत् परमन्यमन्यं प्रकोपयेत् कालान्तरे प्रयोगसमकाले वा न स चिकित्साप्रयोगः प्रयोगस्तदुक्तं स्पष्टशब्दैरेव—

प्रयोगः शमयेद् व्याधिं योऽन्यमन्यमुदीरयेत्।
नासौ विशुद्धः शुद्धस्तु शमयेत् यो न कोपयेत् ॥इति॥

पूर्वोक्तसूत्रे हि विशुद्धशुद्धेति पदद्वयं सर्वथेदमभिव्यंजयति यदायुर्वेदो वैज्ञानिकानां परं विज्ञानं, यतो ह्याधुनिका नव्या यं चिकित्सा-प्रयोगं परं विज्ञानं मन्यते तत्त्वायुर्वेदज्ञैर्बहुकालपूर्वमेव हेयोपादेयरूपेण स्पष्टं प्रदर्शितमेव।

पंचकर्म

आयुर्वेदविदो विद्वद्वैद्याः!

भारतीयविद्यावरिष्ठस्यायुर्वेदस्यावनतावनेककारणानि सन्ति। तत्र वैद्यानां तदुपदिष्टमार्गोऽननुसरणमेव प्रधानं कारणम्।

आयुर्वेदे हि प्रत्येकरोगस्य चिकित्साक्रमे समुदितस्य व्यस्तस्य वा पंचकर्मणः समुल्लेखो विलोक्यते तथा स्वस्थस्य स्वास्थ्यानुवर्तनायापि तदुपयोगोपदिष्टः। काले च वैद्यके तत् कियदुपयुक्तमिति विवेचनार्हमेवेति विविच्यते किंचित्।

यद्यपि दोषाश्चक्रवद् घूर्णमाने काले स्वस्वसंचयप्रकोपप्रशमनानुकूल-कालमासाद्य संचयप्रकोपप्रशममापद्यन्ते, इति प्राकृतिको नियमः—

चयप्रकोपप्रशमा वायोर्ग्रीष्मादिषु त्रिषु।
वर्षादिषु तु पित्तस्य श्लेष्मणः शिशरादिषु॥ इति

यदि चेमे स्वतो प्रबलप्रकोपकमनापद्यमानाः स्युस्तर्हि प्रकृतिरेव तच्छान्ति परमृतुमासाद्य तं तं दोषं शमयति, यदा च त एव प्रबलं प्रकोपमासादयन्ति तर्हि केवला प्रकृतिस्तच्छमने न प्रभवतीति प्रत्यक्षम्। आयुर्वेदस्य चायं सुपरीक्षितः सिद्धान्तो यत् संचिता क्रुद्धा दोषा मारका गाढं रुजः कारका वा स्युरिति। संचयश्च दोषाणां द्विविधः—संचयोऽत्यर्थसंचयश्चेति भेदात्। ते च यदा संचिताः कुपितास्तदा स्वप्रशमता स्वल्पभेषजप्रयोगेन शाम्यन्ति स्वतो वेति बहुशो दृष्टचरं नः। अथ च स्वप्रकोपकर्तौ प्रबलप्रकोपमासाद्या-त्यर्थसंचिताः पंचकर्मभिरनुपक्रम्यमाणाश्च जीवितच्छिद एव प्रायो भवन्ति यथा—

अत्यर्थं संचितास्ते हि क्रुद्धाः स्युर्जीवितच्छिदः।

इति वाग्भटे। एवंच तन्निर्हारणानाम् पंचकर्मणामेव केवलानां क्रियानुपयोगानवस्थायामिति चिकित्साचतुराश्चिकित्सका एव साक्षिणः। प्राचीनकालीना जनाः शास्त्रसंमतामृतुचर्यां दिनचर्यां सदाचारं चाचरंतिरम। आसंश्च

व्रतोपवासजपतपोहोमपुण्यपरायणाः खाद्यपेयभक्ष्यादिकं सर्वमप्याहारजातं पवित्रमेव जेमन्तिस्म । इदानीन्तनानामिव शीघ्रं शीघ्रं विदेशगमनं न कुर्वतेस्म । हस्तचक्रिकया पिष्टेन चूर्णेन पवित्रा गृहिण्यो भोजनं सम्पादयामासुः । कूपनदीसरोभ्यो निजहस्ताकृष्टं वस्त्रपूतं जलं प्राप्यापुः । अन्यसर्पिरादिपोषकं पदार्थजातं वास्तविकमेव लेभिरे, अतएव शरीरतो बलतो बुद्धितो वयस्तोऽस्मदपेक्षयैधांचक्रिरे, व्यायामरुचयश्चासन् । एवं च दोषाणां कृते प्रायः स्वात्मानं चरितार्थयितुमीदृग्विधः समयो दुर्लभ एवासीत् । अतो दोषप्रतीकारिणां पंचकर्मणां न ह्यासीत् तावान् प्रयोगः, रसायनैषिण एव प्रायः पुरैषां प्रयोगमकार्पुरात्ययिके व्याधौ च । प्राक्तनकालापेक्षया चास्मिन् काले पंचकर्मणां महतीमावश्यकतां प्रतीमः । यत इदानीन्तना मानवाः शास्त्रसम्मतां सर्वामेव मर्यादां हितोदर्कामपि परिहरन्तो दृष्टाः । सदाचारश्च कः कीदृगित्यपि तैर्न ज्ञायते । सदाचारस्तु तेभ्यो दूरंगत इति स स्वप्नायातोऽपि न भवति ।

व्रतोपवासजपतपोहोमादिकाः कुतस्तद्विरुद्धाचरणैरेव समयः संतोषश्च यत्किंचिल्लभ्यते । अधुना तु धूम्रबहुलसुयंत्राकलितासु बाष्पशकटीष्वहरहर्यातायातं विदधानाः स्वाभिमतं देशं यावन्नाप्नुवन्ति तावन्मार्गे पाकालयहोटलादिपु पुराणस्य पर्युषितस्य निःसारस्य विद्युच्चक्रिककृतचूर्णस्यान्नस्य भोजनं यच्च दर्शनमात्रेणैव सुन्दरं वस्तुतो मिथो विरुद्धद्रव्यसकृदधिश्रितेषु स्नेहेषु तलितं समुच्छिष्टं येन केनापि स्पृष्टं दृष्टिदुष्टं भुञ्जते । यंत्रकलशैवाकृष्टं जलं पिबन्ति । कामक्रोधेर्ष्यादिदूषितस्वान्ताः स्वकर्तव्यमार्गभ्रष्टाः ह्यादुवेला एव दोषाणामर्थमचयं लभन्ते । आलस्यसंचयादिपरायणाः स्वार्थपराः स्वल्पाग्नयः सुकुमारशरीरा वैद्यमानिनो भीरवः कृतघ्नाश्चंडाश्च दृश्यन्ते । ते बह्वीतिकर्तव्यतोपलक्षितपंचकर्मचिकित्सां बहुकालफलदां गृहकार्यव्यग्रतया स्वशरीरं प्रत्यननुकूलां मन्यमानाः पाचनचिकित्सयैव व्यवहरन्ति न च तया रोगमुक्ता भवन्तीति । अतो नितरामिदानीं पंचकर्मणामावश्यकतां जानीमहे । यद्यपि पंचकर्मणां पुराणी पद्धतिः सर्वथैव परिमार्जिता सैवाधुनोपयुज्येत, तर्हि तु तदनुसारि सर्वं विधिजातं चतुरान्तम् । तथापि न ते बलवन्तः क्लेशसहा नरा न वा स समयः समीरणो वा, साम्प्रतं धनमेव स्वप्राणान् मन्यमानानां वृषवत् सर्वदिनं वहतां स्वपव्यायामानामस्यासुखमनुभवतामपि क्रयविक्रयलेखनादिकार्येभ्यः समयप्राप्तताकृते "व्यहावरं सप्तदिनं परं" इत्याद्युपक्रमो नोपयुज्यते । किन्तु यस्मै श्वो विरेचनं देयं तस्मै पूर्वदिन एव भोजनकाले विचारणा विधेया स्नेहसंमिश्रां द्रवप्रायां कृशरां संभोज्य, परदिने च कोष्ठवयःसत्वानुरूपां मात्रां प्रदाय विरेच्यः । विरिक्तश्च तद्दिवसे विरलद्रव्यमन्नमुपयुञ्जानः स्वस्थमिव स्वरार्थे समुपस्थितो भवति । एवं वमनार्थं पयोदध्यादिना पूर्वं समुत्क्लिष्टकफं

छत्वा दधिद्विदलादिकमावरठं पायदित्वा मात्रानुरूपं भेषजं प्रदाय वामयेत्। वान्तश्च स्वसाध्यं कार्यं साधयितुं भृत्यादिपु यातीति बहुशो विहितविधिरयम्। अनेक कल्पेन यथायथं बस्त्यादिकानामुपयोगः कार्यः, भवन्ति चानया रीत्या सुखिनो रोगमुक्ताश्च जनः। अतः समयानुसारेण पंचकर्मणां पूर्णावश्यकता प्रतीयते। अतस्तदवश्यं वैद्यैर्ध्यानेन प्रयोगेऽधिकर्तव्यम्। रसायनकामास्तु समुदितस्य पंचकर्मणः प्रयोगं मासद्वयेन यथापूर्णं स्यात्तथा चरेयुः।

इदं त्ववश्यमेवावधेयं श्रीमद्भिर्यत् केचन वदन्ति पंचानां स्नेहस्वेदविरेचनबस्तिनस्यानां समाहारः पंचकर्म, तदत्र स्नेहस्वेदौ प्रसिद्धौ, विरेचनं तु शरीरमलविरेचनाद्वमनविरेचनभेदेन द्विविधम्। वस्तिश्च निरुहानुवासनोत्तरभेदेन त्रिविधः। नासया प्रणीयमानमौषधं नस्यं भवतीति, परं चैतन्नायुर्वेदसम्मतम्। यद्यपि विरेचनादौ प्रयोक्तव्ये पूर्वं स्नेहस्वेदयोरावश्यकता, न ह्यनुत्क्लिष्टे दोषे विरेचनादयः प्रयुज्यन्ते तथापि स्नेहस्वेदौ पचकर्मणः पूर्वकर्मणी वर्तेते, न तु पचकर्मकायप्रविष्टौ, न हि तौ प्रभूतमलहरणशक्तौ, किन्तु दोषोत्क्लेशं संशमनं वा कुरुतस्तदेवं प्रभूतमलनिर्हारकत्वे सति रोगहरणशक्तिमत्त्वं तत्वमिति पंचकर्मलक्षणं सुसम्पन्नं भवति। अत आयुर्वेदरूढिसंज्ञया पंचकर्मपदेन वमनविरेचननिरुहानुवासननस्यानि गृह्यन्ते। एतच्च प्रभूतमलहारीनि संक्षेपः।

विद्वांसः!

पंचकर्मविषये इदं तु मह्यमतीव रोचते, मन्मतं चापि यत् सर्वाश्चिकित्साःपंचकर्मान्तर्गता, नास्ति कश्चिद्रोगो यत्र पंचकर्म न प्रयुज्येत।

कुत्रचिद्रोगे समुदितं प्रयोगार्हं कुत्रचिद् व्यस्तमिति त्वन्यदेतत्। यद्यपि चरके—

दोषज्ञोऽस्त्यामयः कश्चिद्यस्यैतानि भिषग्वरः।
न स्युः शक्तानि शमने साध्यस्य क्रियया मतः॥

'अस्त्युरुस्तम्भ इत्युक्ते गुरुणा' इति प्रश्नोत्तराभ्यामुरुस्तम्भे समस्तं व्यस्तं वा पंचकर्म तदपहर्तुमसमर्थमिति प्रतिपादितं, तथापि तत्रैव पंचकर्मोपाङ्गभूतः स्नेहस्वेदक्रम उक्तः। यथा—

स्नेहस्वेदक्रमस्तत्र कार्यो वातभयापहः। इति

तदेवमुरुस्तम्भचिकित्सायां उपक्रमेऽपि यदि विरेचनं स्यात्तदा न दोषावहमपितु हितावहमेव, यतो विरेचनं शोषणकारि तत्र शोषणं तत्र यौगिकम्—

चतुष्प्रकाराः संशुद्धिः पिपासा मारुतातपौ।
पाचनान्युपवासश्च व्यायामश्चेति लंघनम्॥'

इत्युक्तदिशा दशविधलंघनान्तर्गतं विरेचनं, एवं च लंघनान्तर्गतविरेचन शोषणमुपपन्नमेवातस्तत्रोरुस्तम्भे तद् यौगिकमेव। नन्वेवमप्यभ्यादीनां का गतिरिति ब्रूमः। अवभ्यादीनामपि रोगविशेषस्यातीतामवस्थां निरीक्ष्य तत् प्रयोज्यमेव भवति, यथावभ्यादीनां वमनादिसाध्यैकरोगे विषगराद्यभ्यवहारे तस्य प्रवृत्तिरस्त्येव।

तदुक्तं हि—

न चैकान्ते न निर्दिष्टेऽप्यर्थेऽभिनिविशेद् बुधः।
स्वयमप्यत्र वैद्येन तर्क्यं बुद्धिमता भवेत्॥
उत्पद्यते हि सावस्था देशकालबलं प्रति।
यस्यां कार्यमकार्यं स्यात् कर्मकार्यं च वर्जितम्॥

तदेवं सर्वरोगाणां चिकित्सितं पंचकर्म भवत्येवेत्यवश्यमेव वैद्यैः प्रयोगे करणीयमिति संक्षेपः।

पाठ्यक्रमः—

महीयांसो विद्वांसः!

यतो हि प्रगतिशीलेऽस्मिन् युगे प्रत्येकसाहित्ये विज्ञाने च यत्र नवनवा रचना गवेषणाश्च सम्भवन्ति, अतस्तदेव साहित्यं विज्ञानं वा द्रुतं गच्छता समयेन सह प्रगन्तुं प्रभवति यदुन्नतं स्यात्।

यद्यस्मिन् समयेऽस्मदीयायुर्वेदसाहित्यस्य विज्ञानस्य वा प्रगतिं वृद्धिं विधित्सवो भवन्तस्तर्हि "सुभाषितं बालादपि ग्राह्यम्" इति सूक्तिं स्मारं-स्मारं सुरभारतीकृतसंस्कारेण प्रतीच्यविज्ञानवैभवेनापि प्राच्यायुर्वेदविज्ञानकोषं परिपूरयन्तो यत्र स्यात्प्राच्यप्रतीच्य वैमत्यं तत्र सयुक्तिकं सामञ्जस्यं स्थापयन्तु। वर्तमानसमये चायुर्वेदस्य पठनपाठनप्रणाली न सर्वाङ्गीणा वर्तते। छात्रा एवमध्यापकाश्च प्रायोऽन्यासां पाश्चात्यादिपद्धतीनामनुकरणं कुर्वाणा आयुर्वेदं नोत्कर्षयन्ति।

पाठ्यक्रमनियंत्रणाभावे बहवश्छात्राः संस्कृतमधीत्य पुनः स्वयमेवायुर्वेदाध्ययनपरायणा आयुर्वेदाचार्योपाधिधारिणोऽपि व्यावहारिकीं चिकित्सां व्यवहारायुर्वेदं वा ज्ञातुं न शक्नुवन्ति। अत इतश्चेतश्च प्रसृतान् विषयान् संगृह्य नवीनविषयाश्च संयोज्य, नवीनग्रन्थगतविषयांशाद्धेयहानोपादेयोपादानपरिवर्तनीयोपवर्तनवर्धनीयोपवर्धनादिरूपाभिनवसंस्कारेणसंस्कृता भवेयुर्येन तद्विषयकं ज्ञानं

तथैव समयानुसारि सुदृढं सुसंस्कृतं च स्यात्। तदेतत् सर्वं नवीनपाठ्यक्रमनिर्धारणेनैव संभवति। नवीनपाठ्यक्रमविवेचने पाठ्यक्रमाधारभूमिपरिष्करणं कारणमितिकृत्वा पाठ्यक्रमविषयपरिष्करणाय केचित् समुपाया यथामति निर्दिश्यन्ते।

१—द्रव्यगुणविज्ञानम्—

वर्तमानसमये प्राचीनं द्रव्यगुणविज्ञान सम्पूर्णं वर्तते, तत्कृते यथा पुरायैरपि माह्यद्रव्याणि द्वीपान्तरीयवचापारसीकयवानीत्यादीन्यायेपद्धत्यनुसारेण गुणादिकं विविच्य संनिवेशितानि तथैवाधुनाऽप्यभिनववनस्पतयो माह्याः।

२—शारीरविज्ञानम्—

प्राचीनशारीरविज्ञानविवृद्ध्यर्थं पाश्चात्यशारीरविज्ञानाश्रयणं नितरामावश्यकम्। यतो हि प्राचीनशारीरे नोपलभ्यन्ते शरीरावयवानां हृदययकृत्पुप्फुसप्लीहवृक्कादीनां पूर्णविवेचनानि किञ्चिरिथप्रभृतिगणनायां यत्र भेदोऽस्ति तत्र सयुक्तिकं समन्वय स्थाप्यं स्यात्। यथाहि स्वर्गीयमहामहोपाध्यायगणनाथसेन सरस्वतीमहाभागेम सभूरिपरिश्रमं रचितं प्रत्यक्षशारीरम्

३—रोगविज्ञानम्—

रोगविज्ञाने च समयप्रभावेण जातप्रादुर्भावाणां नवीनानां व्याधीनां नवीननामलक्षणोल्लेखेन समं संनिवेशः कर्तव्यः। सन्ति हि प्रचलिता नवीना रोगाः ये प्राचीनग्रन्थेषु नोपलभ्यन्ते। ये च लभ्यन्ते तेषां लक्षणादिकमतीवसंक्षिप्तम्, साधारणवैद्यानां परिचयाय ज्ञानाय नालमिति। अपिच प्राचीनग्रन्थेषु प्राचीननामत उल्लिखितानामपिरोगाणामाधुनिकं प्रचलितं प्रान्तीयानुसारं नामापि निर्देष्टव्यं भवेत्। येनाध्येतुस्तत्परिचयः सुखेन स्यात्। एतेन हि चिकित्साकरणे वैद्येभ्योऽत्यधिको लाभः। एतदर्थं सिद्धान्तनिदानादिकमनुकरणीयं खलु।

४—कायचिकित्सा—

आर्याणां हि कायचिकित्सा सर्वचिकित्साशिरोमणिरितिनात्युक्तिः। कायचिकित्साविज्ञाने केवलमौषधनिर्माणकला नवीनकलालंकृता भवेत्, सूचिवेधचिकित्सा च समाकृष्टा भवेत्।

५—शल्यशालाक्यविज्ञानम्—

एतस्य च परिवर्तनं परिवर्धनं च पाश्चात्यविज्ञानसाहाय्यमन्तरेण न कथमपि कर्तुं पारयामः। यद्यपि पुरासमये भारतवर्षे चासीत् शल्यचिकित्सायाः प्रचुरः प्रचार इति प्राचीनग्रन्थावलोकनेन स्पष्टमसन्देहास्पदं, परं शल्यशालाक्यविज्ञाने पाश्चात्यवैज्ञानिकैर्यादृशी खलु

सर्वोत्तमा समुन्नतिर्विहिता सा खलूपादेया। शल्यशालाक्ययोः पुनर्निर्माणाय ते प्राच्यप्रतीच्योभयविशेषज्ञा एव प्रभवन्ति, ये हि विद्वांसः प्राच्ययंत्रशस्त्रादीनि प्रतीच्ययंत्रशस्त्रैः समन्वीय नवीनयंत्रशस्त्राणां च तत्र सन्निवेशं कुर्युः, योग्यासूत्रीयत्रणितोपासनीयादीनां सौश्रुताध्यायानां नवीनरीत्या विवेचनं कुर्युश्च। एवंहि शल्यशालाक्यप्रधानेषु शिरोमुखनेत्र-नासिकाशिरोगेषु नवीनविधया प्राचीनविधया वा शस्त्रविचारणप्रकार-मुपदिशेयुरिति।

६—विषतन्त्रसूतिकौमारभृत्यरसायनवाजीकरणतन्त्राण्यपि यथायोग्यं परिवर्ध्य संकलनीयानि खलु।

७—रसविज्ञानम्—

रसशास्त्रं हि बहुविधमुपलभ्यते, परं प्रायस्तच्छास्त्रं खण्डचतुष्टये विभक्तं विलोक्यते यथा-रसखण्डं, प्रयोगखण्डं, वादखण्डं मन्त्रखण्डञ्चेति। एते सर्वएव विषयाः स्वस्वस्थाने रम्या एव, परं नहि चात्र वादमन्त्रखण्डद्वये समग्रमहिम्ना साफल्यमनुभूयेत् न वा तत्र केश्चित् प्रयत्यते। खण्डचतुष्टयात्मकं सर्वं रसविज्ञानं न चिकित्सोपयोगीति कृत्वा चिकित्सोपयोगिनी बहुशो बहुभिरनु-भूतानि रसप्रयोगोभयखण्डात्मकान्यनेकानि चाभिनवानि रसतरंगिणीप्रकाराणि-रसपुस्तकानि संकलय्य पाठ्यत्वेन निर्धारयितव्यानि भवेयुरिति। इतोऽप्यधिकं जिज्ञासुभिस्तदेव पुरातनं शास्त्रं स्वेच्छया द्रष्टव्यं भवेदिति।

इदमत्रावधेयम्—गवेषणालब्धं नवीनं चायुर्विज्ञानं सर्वं भाषान्तरे आस्ते, अतो नवीनं सर्वं माह्यांशं वा सरलसंस्कृतभाषायामनूद्य प्रकाशयितव्यं स्यात्। अनुवादे च पारिभाषिकाः शब्दास्तथैव सौकर्याय आहोस्वित् तदर्थं सांकेतिका नवीना शब्दा प्रयोज्याः। एतदर्थं विज्ञानकार्यालयतो नागरी-प्रचारिणीसभातो लवपुरतः प्रकाशितांग्रेजीसंस्कृतकोषतश्च साहाय्यं माह्यम्। एवं ह्यायुर्वेदसाहित्यस्य विज्ञानस्य वा वृद्धिर्भविष्यति नात्र सन्देहः।

अस्ति च पाठ्यक्रमविषये विदुषां मतभेदः—

१—केचिच्छुद्धायुर्वेदस्य विषयप्रधानं पाठ्यक्रमम् स्वीकुर्वन्ति।
२—केचिच्छुद्धायुर्वेदग्रन्थप्रधानं पाठ्यक्रमम्।
३—केचिच्च नव्यार्षग्रन्थसमन्वितं मिश्रं पाठ्यक्रमं मन्यंते।

मन्मते हि तृतीयः पक्षो नव्यार्षग्रन्थसमन्वितो मिश्रपाठ्यक्रमात्मकः श्रेयस्करः प्रतिभाति। यतो हि समये-समये आयुर्वेदेऽपि संहिताग्रंथेषु दृढबल-प्रभृतिभिर्विद्वद्भिः प्रतिसंस्कारेण जीर्णोद्धारः कृतस्तथा समयप्रभावेण नष्ट-

प्रायमायुर्वेदावयवं शल्यशालाक्यादिकं प्रति संस्कृत्य परिवर्ध्य च नवीन-मनुत्पन्नव्याधिजालं समावेश्य तदनुसारं निर्मितनवीनपाठ्यक्रमस्य सर्वत्र शिक्षणालयेषु प्रचालनं श्रेयस्करं भवेत् । एवं सत्यस्मदीयपाठ्यक्रमविषयः स्वल्पैरहोभिः समयानुसारी लोकोपकारी हृदयहारी च स्यादत्र किमु वक्तव्यम् । अस्माकं कार्यक्रमे या न्यूनता प्रतीयते सा चेयं तदैव दूरीभूता भवेत्, यदा वयं प्रतिविषयं योग्यान् छात्रान् कारयितुं सततं संलग्ना भवेम । यावद्वयं स्वसाहित्ये पूर्णश्रमतोऽष्टाङ्गसम्बन्धिविषयस्य पूर्णां प्रत्यक्षयोग्यां विशेषतश्च शल्यशालाक्यशस्त्रविदारणादिविषयस्य च समुन्नतिं न करिष्यामस्तावत् परेषां पाठ्यक्रमं दृष्ट्वा ज्ञास्यामो यदस्मत्साहित्ये न्यूनता वर्तते, परेषां च पूर्णतेति । परञ्चैतत् स्मर्तव्यं भवेद्यथाधुना वयमायुर्वेदस्य पठनपाठनं योग्यताशून्यं कीरादिपठनवत्कुर्महे, तदाप्रियमेव दशा वर्त्स्यत इति ।

अतो न्यूनताया मूलं विज्ञाय तच्छेत्तव्यम् । नहि पाश्चात्यविज्ञाने समुन्नतिर्निहिता वर्तते । पाश्चात्यैरपि परिगणितं विषयं विहाय किं नवीनं कृतम् । सर्वोऽप्यायुर्वेदविषय एव परिष्कृतः । परं विशेषता तु तत्र योग्यताया एव । शस्त्रावचारणपटबन्धनप्रक्षालनयन्त्रशस्त्रादिनिर्माणादिषु कृतभूरिश्रमाः कृतव्ययाश्च विशेषतः कृतयोग्याः सन्तीति लोके महत्वबुद्ध्या विलोक्यन्ते । वयं चाकृतयोग्या विशेषतश्च शल्यशालाक्येषु च, अतोऽस्मान् तत्र विषये न समाद्रियन्ते लोकाः ।

पाश्चात्यैः कल्पितं निखिलं सत्यमिति तु न वरम् । किमविक्रमशा-रभ्य पंचाशद्वर्षेभ्यः पूर्वं पाश्चात्यवैज्ञानिकानां गवेषणा, आधुनिकगवेषणातः सर्वथा पृथगेव, सा तु गतप्रायैव । सत्यं स्वपरिवर्तनशीलं भवति खलु । यथायुर्वेदविद्या सा ।सृष्टिप्रारम्भतश्चलिता, अद्यापि प्रचलति प्रचलिष्यति च । नहि तदीयसिद्धान्तेषु परिवर्तनं विलोक्यते । त एव वायुसूर्यसोमात्मानो वातपित्तकफा रोगारोग्यैककारणभूता अनुभूयन्ते ।
मान्याः !

एतदवश्यं सत्यम् । तदीयसिद्धान्ते वास्तविकता यत्र स्यात् सावश्यं संस्कृते संस्कृत्य संग्रहीतव्या विज्ञैः, मदीयोऽयं स्फुट आशयः । यत् पाश्चात्यैः स्वीकृतं तदस्माभिरपि ज्ञेयम्, तस्य च ज्ञानमस्मदीयतदीयविषयतुलनात्मक-ज्ञानविवृद्ध्यर्थं सामयिकज्ञानलाभाय च । अतस्तेषां शास्त्राणामनुवादोऽवश्य-मस्मदीयदेवभाषायां विधेयस्तदैव वास्तविकयाथातुलनायां प्रभवेम । एवं सर्वतः पर्यालोचनया नव्यार्षमिश्रितपाठ्यक्रमस्यावश्यकता नितरां वर्तमान-समये प्रतिभाति । न हि च तावत् तेन विनाऽयुर्वेदस्य सर्वांगीणता सामयिकता च संभाव्यते । नवीनपाठ्यक्रमविषये ये मदीयाः विचाराः सन्ति त इदानीं सूत्रत्वेन प्रस्तूयन्ते—

१—पाठ्यक्रमनिर्धारणाय यैर्यतितुपामेका पाठ्यक्रमनिर्धारिणि समितिः स्यात् ।

२—एका पाठ्यपुस्तकसम्पादिका समितिः ।

३—चरकसुश्रुतवाग्भटादिषु समागतविषयान् शोषधातुमलद्रव्यगुणाञ्जनपदध्वंसमानसशल्यशालाक्यादीन् पृथगशः पुस्तकरूपेण सविस्तरं प्रकाशयेत ।

विश्वविद्यालय;—

माननीयाः!

नवीनपाठ्यक्रमप्रचाराय लोककल्याणाय च शुभे रम्ये प्रदेशेऽत्रैव दिल्लीनगरे श्रीमन्तः सर्ववैद्यमहोदया आयुर्वेदविश्वविद्यालयं स्थापयन्तु । तत्रास्माकं प्रचलतु सर्वतः परिशुद्धः पाठ्यक्रमः तमनुसरन्तो योग्याः स्नातकाश्च संभवन्तु । अन्यथा जयपुरीया वाराणसेयाद्यास्वास्माकं पाठ्यक्रमं न स्वीकरिष्यन्ति । सर्वेषां स्वीयः स्वीयः पाठ्यक्रमो वर्तते । श्रीमन्तो विचारयन्तु आयुर्वेदविश्वविद्यालयमन्तरा किंयन्मूल्यमस्मद्विद्यापीठपरीक्षोत्तीर्णच्छात्राणाम् । विद्यापीठपरीक्षोत्तीर्णाश्छात्राः जयपुरपरीक्षायां प्रवेशं न लभन्ते न यू॰पी॰, सी॰पी॰ परीक्षायाश्च ।

अतो मया राजपूतानाप्रान्तीयपञ्चवैद्यसम्मेलने सभापतिपदादत्युच्चैरायुर्वेदविश्वविद्यालयस्य प्रस्तावोऽपोपि, सर्वसम्मतया स्वीकृतश्च सः, परं विविधकारणैरद्यावधि तथैवास्ते । अनुमानतः सन्त्येकत्रिंशत्कोटिपरिमिता जना भारते वर्षे । तत्र सर्वैरथवार्द्धैः सह वैद्यानां सम्बन्धो मास्तु पर चतुर्थांशैः समं तु सम्बन्धोऽस्त्येवेति निर्विवादम् । यदि ते वैद्यमहोदयाः स्वप्रभावेण तेभ्यो जनेभ्य आणकचतुष्टयमपि गृह्णीयुः, स्वयं च वैद्या दद्युस्तदा कोटिरूप्यकाणां संग्रहोऽवश्यमेव भविता नात्र शंकालेशोऽपि । परन्तु वैद्यमहाभागा व्यक्तिगतवैमनस्येन स्वार्थपरायणतया चैतत्कार्यं कर्तुं सन्नद्धा नाभवन्। अतो नहपो वैद्याः समालोचयन्ति यद्वैद्यसम्मेलनेन किं कृतं केवलं दिनद्वयं त्रयं वा मनोविनोदं कृत्वेमे निजनिकेतनमलंकुर्वन्ति । समाचारपत्रेषु निजनामप्रकाशमेव कार्यस्थाने स्थापयन्ति प्रतिवर्षं ददतु शुल्कं ददतु शुल्कमित्येव आह्वयन्ति । सत्यं, यस्य दृष्टिर्यावत् प्रसरति तावदेव सः पश्यति , परमियती वार्ता त्ववश्यमस्ति यद्वयं प्रभावशालिनोऽपि मनोभिलषितमायुर्वेदविश्वविद्यालयमद्यापि निर्मातुं न शक्नुमः । प्रतिदिनं राज्याधिकारिणो जनानुपालभामहे यद्राज्यमस्माकं साहाय्यं न करोति, परमस्माभिरपि क्रियात्मकं कार्यं किं क्रियते ? यदि सप्तत्रिंशद्वर्षाभ्यन्तरेऽस्माभिरपि स्वर्गीयपूज्यमालवीयमहाराजकृतहिन्दुविश्वविद्यालयस्येवायुर्वेदविश्वविद्यालयः स्थापितश्चेदभविष्यत् तदा कथं नादास्यन् राज्याधिकारिणोऽस्माक-

मायुर्वेदविद्यालयाय साहाय्यं, परमस्माभिरत्र ध्यानं न दत्तमियमस्माकं महती त्रुटिरभूत्। अस्तु, यदिकश्चिद्दिवामार्गभ्रष्टो रात्रौ गृहमागच्छेत्तदापि स भ्रान्तो न कथ्यते, अतोऽधुनापि संभूय प्रयतितव्यं येनायुर्वेदविश्वविद्यालयस्य स्थापना चिरेणैव कालेन स्यादिति। अन्यथाऽस्मद्विद्यापीठपरीक्षायाः किं महत्त्वं स्यादिति विमृशन्तु विमर्शकाः।

आवश्यकीयम्—

१—संस्कृतांग्रेजीभाषाविदो योग्या एव छात्रा भवेयुः, स्युर्नामसंख्यायां स्वल्पा परं योग्या एवाध्याप्याः।

२—भविष्ये ह्यायुर्वेदीयपरीक्षाः सर्वकारेण नियंत्रिताः स्युस्तदाऽप्यद्यावधि विद्यापीठीयपरीक्षोत्तीर्णा वैद्या अपि मानार्हाः।

३—तत्रोपस्थिते प्रतिवादे तन्निराकरणम्।

४—आयुर्वेदीयातुरालयः परिचारिकागृहम् प्रसूतिकागृहमित्यादीनां स्थापनं तत्रायुर्वेदसिद्धान्तानुसारेण व्यवस्थापनं च।

अनुसन्धानशाला—

महीयांसः

प्रगतिशालिनि समयेऽस्मिन् नात्राभिनिवेष्टव्यमस्माभिर्यदायुर्वेदः पूर्ण एव नात्रपरिवर्द्धनगवेषणे अपेक्षते यतो नहि ज्ञानसीमा क्वापि पूर्णा भवत्यतस्तद्विज्ञानमपि निःसीममेव। अयस्ते यावदुपलभ्यमानमायुर्वेदसम्बन्धिविज्ञानं तदेककाले युगपदेवर्षिभिः प्राप्तमासीदिति न मन्तव्यम्। तैरपि दिदृक्षुदृशा शनैः शनैरनुसंधायानुसंधाय च महान् ज्ञानराशिः संचितः। यं हि वयमद्यापि विकलाविकलतया कार्येऽधिकुर्महे, तेनापि चाभिमतं फलं प्राप्नुमः। पर कतिपयकारणैः स विज्ञानराशिस्तावानेव तन्न्यूनो वा तथैवावस्थितो नाग्रे परिवर्द्धितः। अस्तु यद्गतं तत्तु गतमेवाधुना तु सर्वैः सचेष्टैर्भवितव्यम्। विज्ञानस्य मूलभित्तिरनुसन्धानमेव भवति यतस्तदेव तद्मिव्यनक्ति एतस्मै समायस्यास्माभिः सर्वकारः प्रार्थनीय आयुर्वेदसम्बन्धिनी महती विज्ञानशालोद्घाटनाय।

अत्रानुसंधानीयं विषयं तु यद्यप्यनल्पमेव तथापि सर्वतः प्रथममावश्यकीयं विषयानुसन्धानमेव श्रेयः येन सर्वकारस्य जनतायाश्च धा, स्पष्टं विदितं भवेद्यदायुर्वेदः पूर्णरूपेण विज्ञानसम्मतः, इत्येतदर्थं सर्वतः प्रथमं तादृग्विधं वनौषधिजातं पूर्णश्रमेण गवेषणीयं येन पुरा महाभारतकाल एव योद्धॄणां मणाः सवर्णाः शल्यानिप्रयोगमात्रेणैव निर्गतान्याभूवन्।

श्रीमन्तः! एतत्त्ववश्यमवधातव्यं भवद्भिः, ये केऽपि वैद्या आयुर्वेदविषयिणीं विचित्रां रचनां रचयेयुस्ताहो आयुर्वेदोपकारिणीं चिरस्मरणीयां महतीं सेवां समुपस्थापयेयुश्चेत्तदा तेषां चिरस्मृतयेऽस्माभिर्धनराशिः संग्रहीतव्यस्तेन तेषां चिरस्मरणीयं किंचित् स्मरणीयम् करणीयम्।

सम्प्रति श्रीमतोऽभ्यर्थये, श्री शंकरदा शास्त्रिपदे महाभागाः यैः सर्वतः प्रथममायुर्वेदसम्मेलनं समुद्घाटितं, येन पूर्णतयाऽनल्पं वैद्यसंगठनं घटितमिति ते सर्वेषामेव संमानार्हास्तेषां चिरस्मरणाय स्मारकमपेक्षितमिति, तदर्थं वैद्यवर्गस्यैव मुक्तहस्तेन धनराशिर्देयः। एतदर्थं श्रद्धेय पं० श्री जगन्नाथप्रसादशुक्लमहाभागा धन्या यैरेतादृशो यत्नः प्रारब्धः।

वरेण्याः! ये ह्यायुर्वेदीयसाहित्यमभिनवरचनाभिः परिष्कुर्वते किं वा प्राच्यप्रतीच्यवैमत्यं परिहृत्य समन्वयन्ति च तेऽवश्यमस्माभिः संमाननीयाः प्रोत्साह्याश्च। अतोऽहं नवीनप्रतिसंस्कृतनिदानचिकित्सायास्तथा रसेन्द्रसारसंग्रहस्य टीकाद्वयस्य च निर्मातृभ्यः श्रीवनानन्दपन्तेभ्यस्तथा रामरक्षपाठकरमानाथद्विवेदिप्रभृतिभ्यश्च शतशो धन्यवादान् प्रयच्छामि तदुत्साहमभिनन्दामि। वैद्यनाथआयुर्वेदभवनेनाप्यायुर्वेदीयसाहित्यप्रकाशने बहूपकृतमिति तदपि धन्यम् परैरनुकरणीयं च।

उपसहारः—

आयुर्वेदपद्धतिमनुसरद्भिर्वैद्यैरितोऽवश्यमेवावधेयं, सर्वविदितं चाप्येतत्, यदितः किंचिदर्वाचीनकालेऽस्मदीयसर्वकारेण प्राणिनः कथं स्वस्थाः स्युः, के च तेषां स्वास्थ्यरक्षणोपाया इत्येतन्निश्चेतुं संयोजितैका समितिस्तया च सर्वकारसन्मुखेऽर्बुदमितव्ययवती जनरक्षणोपायस्यैका योजना समुपस्थापिता, परञ्चेयममितधनराशिसाध्येति मत्वा सर्वकारेणापरा परिषन्निर्मिता, यस्यां दश सदस्या आसन्। यत्र चैकमपि वैद्यमनवलोक्य खिन्नान्तःकरणवैद्यसमुदायस्य परमाग्रहेणात्र परिषदि सदस्यत्वेन पूज्य यादवजी शर्माणोपि गणिताः। एभिश्च महाभागैयुक्तिप्रमाणोपन्यासैरायुर्वेदमहत्त्वं यदा परिषदि प्रकाशितं तदा समित्यायुर्वेदः स्वल्पव्ययेनापि लोककल्याणकारीति कैश्चिदंशैः स्वीकृतम्।

अस्याश्च संसदः सदस्यैरंशतोऽप्यभिमतामायुर्वेदानुमोदिनीं योजनां पर्यालोच्य स्वतन्त्रेऽपि भारते पाश्चात्यप्रभावानुरागिभिस्तदीयसंस्कृतिसंस्कारैरेव देशस्य गौरवं गवेषयद्भिः स्वास्थ्याधिकारिभिर्नव्यैश्चास्याः सभायाः सदस्यैः कृतां योजनामुपेक्ष्य तृतीया समितिः संयोजिता। यया च त एवमाशासते, नव्यचिकित्सका एव यद्यायुर्वेदीयं कमपि विषयमपेक्षितं ज्ञास्यन्ति, तदा केवलं तमेवांशं द्वित्रिवर्षपूपदिश्यमानं यथा स्यात्तथा पाठ्यक्रमे करिष्यन्ति, येनैलोपैथिकचिकित्सया सहैवास्य प्रयोगो भविष्यतीति।

हन्त ! नैतावतापि सन्तुष्यन्ति ते, अस्यामपि योजनायां - यद्यायुर्वेदीयभेषजादि विदेशीभेषजापेक्षया स्वल्पलाभकारि स्यात्तदा तदपि तैस्त्यक्तव्यमेवेति कियान् कष्टदः कुठाराघातो वेदोपांगे ह्यायुर्वेदे ।

एतत्त भवतां विदितमेव यत् त्रिदोषसिद्धान्तमज्ञात्वा पाश्चात्या यद्यायुर्वेदीयभेषजं प्रयोक्ष्यन्ति तदा तत्र कुतः साफल्यम् ! एवं चानया योजनया स्वल्पेनैव समयेन शनैः-शनैः स्वयमेवायुर्वेदशास्त्रमुत्खातं स्यात् । अत आयुर्वेदस्य सत्यसेवां कामयमाना वैद्या आयुर्वेदस्य प्रचाराय प्रसाराय च संनद्धा भवन्तु । सम्प्रति पाश्चात्यसंस्कृतिसंस्कृतपुरुषैर्यानामायुर्वेदजगत्परितः प्रसरणम् । तेभ्यश्चायुर्वेदजगति तदीयविचारविद्युत्पतितुमुद्यतैवातः सर्वैः सम्भूय सर्वप्राणेनायुर्वेदं रक्षयन्तु । यद्यत्र वयमसफलास्तर्हि भारतस्यैव किं, अपितु विश्वस्य रत्नं लुप्तं भविष्यति । समयेऽस्मिन् रचनात्मककार्यकारिण एवाग्रे भविष्यन्ति ।

सभ्याः !

आयुर्वेदविद्भिः सर्वथेदं ज्ञातव्यं यत् सर्वकारेण द्वितीयां समितिमुपेक्ष्य तृतीया समितिः संयोजिता । एतेन स्पष्टं ज्ञायते यत् कीदृशोऽनुराग आयुर्वेदं प्रति सर्वकारस्येति । सर्वकारस्वास्थ्यविभागस्यायुर्वेदं प्रत्यदारताशून्येयं नीतिः नैव शोभनेति ।

परं चायमतीवमोदावहो विषयो यद् वर्तमाने समये राष्ट्रपतिपदमधिरूढा बाबू श्रीराजेन्द्रप्रसादमहोदयाः भारतीयसंस्कृतिसंस्कृताश्चातीव सुहृदयाः सन्ति आयुर्वेदाचार्यसीकरनिवासिप्रियप्रह्लादरायशर्मणा चिकित्सातानामेतेषां पिलानीनगरे चिकित्सासम्बन्धिपरामर्शायाहमेतैर्मिलितोऽस्मि । तेऽतीव गंभीरा मितभाषिणः सौम्याश्च । अतश्चाहं तर्कयामि विश्वसिमि च यदेते प्रदास्यन्त्यायुर्वेदीयचिकित्सायै राष्ट्रीयचिकित्सायाः प्रमुखपदाप्तये सार्थकारीं सहायताम् ।

यदि कृतेऽपि यत्ने सफला न भविष्यामस्तदापि न ह्यारा हेया, किन्तु सर्वैरेकीभूय सततं तादृशो यत्नोऽनुष्ठेयः येनायुर्वेदविरुद्विशालयो भवेदिति ।

माननीयाः ! श्रीमद्भिरिहागत्य स्वामूल्यं समयं प्रदायायुर्वेदजगत्प्रत्यनुरागस्य

पूर्णः परिचयः प्रदत्तस्तदर्थं धन्यवादाः । प्रार्थयामि परेशं यच्छीघ्रमेवोन्नतिं गच्छता राष्ट्रेणमहैवोन्नतिमायुर्वेदोपि प्राप्नुयात् । वैद्यराजश्रीओंकारप्रसादशर्माणस्त्वस्यमेव धन्यवादार्हाः, येषां प्रस्तावप्रभावेणेदं सम्मेलनं सम्पन्नं । विशेषतश्च तैर्भारतीयराजधान्यां सम्पादितमिति तेभ्यो हार्दिको धन्यवादः ।

सर्वेऽपि सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्॥
सत्यं शिवं सुन्दरम्

विद्यापीठ-सम्मेलन की दूसरी बैठक २१ फरवरी के मध्यान्ह बाद २ बजे महासम्मेलन की बैठक के साथ सम्मिलित रूप में हुई, जिसमें अनेक प्रस्ताव स्वीकार किये गये, जो कि महासम्मेलन के विवरण के अन्त में दे दिये गये हैं। केवल आयुर्वेद विश्वविद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव विद्यापीठ-सम्मेलन की पहिले दिन की बैठक में स्वीकार किया गया था। उसके अनुसार चन्दा जमा करने का कार्य महासम्मेलन की दूसरी बैठक में २० फरवरी को किया गया था, जिसका विवरण यथास्थान दिया जा चुका है। आयुर्वेद विद्यापीठ के गत वर्ष के आय-व्यय का ब्यौरा, सन्तुलन पत्र तथा आगामी वर्ष के आनुमानिक आय-व्यय पत्र भी स्वीकार किये गये। कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास के विद्यापीठ कार्यालय का वार्षिक कार्य विवरण उपस्थित किया, जो कि स्वीकार किया गया।
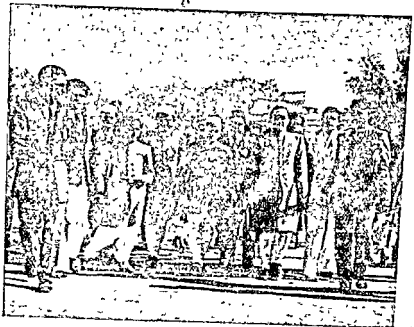
सूचना तथा ब्राडकास्ट के मन्त्री श्री दिवाकर प्रदर्शनी के उद्घाटन के लिये पधार रहे हैं।

निखिल भारतीय आयुर्वेद प्रदर्शनी

शिक्षाप्रद भव्य आयोजन

निखिल भारतीय आयुर्वेदमहासम्मेलन के अवसर पर सब से अधिक सुन्दर, भव्य, आकर्षक और शिक्षाप्रद आयोजन आयुर्वेद प्रदर्शनी के रूप में किया गया था। चांदनीचौक और रेलवे स्टेशन के बीच फुवारे के समीप गान्धीग्राउण्ड में बसाई गई आयुर्वेद नगरी के मुख्य द्वार में प्रवेश करते ही दर्शक को पहिले पहिल वृत्ताकार में बनाई गई प्रदर्शनी में से हो कर गुजरना पड़ता था और उसको आयुर्वेद की आधुनिक प्रगति की एक झांकी सहसा ही देखने को मिल जाती थी। प्रदर्शनी में जड़ी-बूटी, वनस्पति तथा औषधादि का बहुत सुन्दर प्रदर्शन किया गया था। हिमालय से कन्याकुमारी तक प्राप्त होने वाली अनेक दुर्लभ वनस्पतियां भी जहां-तहां से प्राप्त करके प्रदर्शित की गई थीं, अनेकों प्राचीन यन्त्र तथा शल्य क्रिया में काम आने वाले उपकरण भी रखे गये थे। अनेक भारत प्रसिद्ध रसायन शालाओं द्वारा निर्मित शास्त्रोक्त सिद्ध-औषधियों के नमूने भी प्रस्तुत किये गये थे। विशेषज्ञ विद्वान् आगन्तुक दर्शकों को सब वस्तुओं की जानकारी दे रहे थे। गोली, चूर्ण आदि बनाने के तरह-तरह के उपकरणों के अलावा रसौषधियों का भी खासा संग्रह था, जनता के आकर्षण के लिए स्वर्णवंग सरीखी रसौषधि आठ आना तोला बेची जा रही थी। आयुर्वेद इन्जेक्शनों का आविष्कार भी प्रदर्शित किया जा रहा था। त्रिदोष विज्ञान, पंच महाभूत तथा स्वास्थ्य शिक्षा के चार्ट जितने सुन्दर थे, उतने ही शिक्षाप्रद भी थे। आयुर्वेद ग्रन्थों का भी सुन्दर संग्रह किया गया था। ठीक मध्य में स्थापित की गई भगवान धन्वन्तरि की मनुष्याकार भव्य मूर्ति से प्रदर्शनी और भी अधिक आकर्षक बन गई थी। जामनगर की आयुर्वेदीय सोसाइटी की ओर से अनेक सुन्दर और उपयोगी वस्तुएं भेजी गईं थीं। इनमें एक सेनेटोरियम का भी नमूना था। औषध-निर्माण में काम आने वाली नवीनतम चालीस खरल भी दर्शनीय थे। श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन कलकत्ता द्वारा प्रस्तुत "त्रिदोष विज्ञान यंत्र" भी एक नवीन चीज थी, जिससे यह प्रदर्शित किया जाता था कि शरीर में त्रिदोष की वृद्धि क्यों होती है और उसका शमन औषधियों के प्रयोग से किस प्रकार किया जा सकता है? खाने-पीने की चीजों

की दूकानों या प्रदर्शनी में अभाव होने से केवल टहल कदमी करने वालों के लिए ऐसा कोई भी वाजाह आकर्षण न था इसलिए भी इस प्रदर्शनी को शास्त्रीय रूप प्राप्त हो कर आयुर्वेदीय दृष्टि से उसकी उपयोगिता कई गुणा बढ़ गई थी।

उद्घाटन समारम्भ

१६ फरवरी की सवेरे ६ बजे इस प्रदर्शनी के उद्घाटन समारम्भ के साथ ही महासम्मेलन प्रारम्भ हुआ समझना चाहिए। प्रदर्शनी समिति के अध्यक्ष श्रीयुत राजेन्द्रकुमारजी जैन ने भारत सरकार के सूचना तथा ब्राडकास्ट विभाग के मन्त्री श्री रंगराव रघुनाथ दिवाकर से प्रदर्शनी का उद्घाटन करने की प्रार्थना करते हुए निम्न लिखित भाषण दिया :—

आदरणीय अतिथि महोदय, माननीय वैद्यबन्धुओं और उपस्थित सज्जनो!

आयुर्वेद प्रदर्शनी के उद्घाटन के शुभ अवसर पर स्वागत समिति की ओर से मैं आप सब का हृदय से स्वागत करता हूं।

विज्ञान और कला के प्रदर्शन का क्या महत्व है—यह आप सभी भली प्रकार जानते हैं। इसलिए इस विषय में आपके सामने कुछ अधिक कहना मेरे लिए अनावश्यक है। आयुर्वेद के ग्रन्थों में अनेक प्रकार की औषधियों का वर्णन मिलता है। प्रत्येक वैद्य के लिए उनका और उनकी निर्माण विधि का ज्ञान परम आवश्यक है। आयुर्वेद जैसी महान चिकित्सा पद्धति को राज्य की ओर से जो सहयोग मिलना चाहिये था, विदेशी राज्य होने के कारण वह नहीं मिल सका और इसलिए यह विज्ञान उतनी उन्नति नहीं कर सका जितनी उसे करनी चाहिये थी। सौभाग्य से अब वह बात नहीं रही। स्वतन्त्र भारत में आयुर्वेद को राज्य का आश्रय मिलना ही चाहिए और मुझे विश्वास है कि वह अवश्य मिलेगा।

औषध निर्माण के लिए अनेक प्रकार की वनस्पतियों और खनिज पदार्थों तथा नाना प्रकार के यन्त्रों की आवश्यकता होती है। जब तक इन सबका पूर्ण परिचय न हो तब तक विशुद्ध औषधों का बनना बड़ा कठिन है। कई ऐसी महत्व पूर्ण समस्यायें भी हैं जिन पर हमें बड़ी गम्भीरता से विचार करने की आवश्यकता है। शास्त्रों में औषध निर्माण में काम आने वाली ऐसी अनेक वनस्पतियों का वर्णन है जिन्हें हम

माननीय श्री रंगराव रंगनाथ दिवाकर
(आपने आयुर्वेद प्रदर्शिनी का उद्घाटन किया था ।)

डाक्टर श्यामप्रसाद मुकर्जी

(आपने महासम्मेलन का उद्घाटन करने की कृपा की थी ।)

अभी तक निश्चित नहीं कर पाये हैं। भिन्न २ प्रान्तों में एक ही नाम से भिन्न २ रूप वाली वनस्पतियों का ग्रहण होता है। इस विषय में खोज और विचार करके निर्णय करना अत्यन्त आवश्यक है।

जब मैं देखता हूं कि भिन्न २ वैद्यों द्वारा बनाई गई एक ही औषध भिन्न भिन्न रूपों में मिलती है तो मुझे खेद होता है। अंग्रेजी दवाइयों को देखिये, कहीं की भी बनी हों, सब एकसी होंगी। मैं समझता हूं कि इस दिशा में भी हमें प्रयत्नशील होकर औषध निर्माण में एकरूपता लानी चाहिए।

आयुर्वेद संहिताओं में ऐसी औषधियों का भी उल्लेख मिलता है जो इस समय मिलती नहीं है। प्रकृति में उनका सर्वथा लोप हो गया हो—ऐसा मैं नहीं मानता। वास्तव में हम उनका परिचय खो चुके हैं। उनको फिर से खोज निकालना हमारे लिए बड़ा जरूरी है। उनके अलभ्य होने के कारण वैद्य लोग उनके स्थान पर अभाव द्रव्यों का ग्रहण करते हैं जिसके परिणाम स्वरूप औषधि ठीक २ नहीं बन पाती और उनका शास्त्रोक्त प्रभाव नहीं होता। जीवक की कथा आप में से बहुतों ने पढ़ी या सुनी होगी। महर्षि जीवक जिस समय अपना अध्ययन समाप्त कर के अपने आचार्य के पास गये तो उन्हें उनके आचार्य ने कहा कि जाओ चार कोस के भीतर से कोई ऐसी वनस्पति लाओ जिसका गुण या प्रयोग तुम्हें अभी तक मालूम न हो। जीवक ऐसी एक भी वनस्पति न ला सके। आज कितने वैद्य हैं जो जीवक की सी योग्यता रखते हैं? वैद्यों और औषध निर्माताओं को परस्पर सहयोग करके इस कमी को दूर करने का यत्न करना चाहिये।

आयुर्वेद सम्मेलन के साथ प्रदर्शनी के आयोजन का यही प्रयोजन होना चाहिए। प्रदर्शनी का कार्य अत्यन्त कठिन और व्ययसाध्य है। फिर भी वैद्य बन्धुओं, औषध निर्माताओं और स्थानीय कार्यकर्ताओं के सहयोग से जो कुछ आयोजन किया जा सका है वह आपके सामने है। उसमें त्रुटियों का होना सदा सम्भव है। आशा है आप उनकी ओर ध्यान न देंगे। अन्त में जिन व्यक्तियों तथा संस्थाओं ने इस महान् कार्य में किस प्रकार का योग दिया है उन सब का धन्यवाद करते हुए मैं श्री माननीय दिवाकर जी से प्रार्थना करता हूं कि वह अपने कर कमलों से इस प्रदर्शनी का उद्घाटन कर के हम सब को कृतार्थ करें।

श्री दिवाकरजी का भाषण

भारत सरकार के सूचना तथा ब्राडकास्ट विभाग के मन्त्री श्री रंगराव रघुनाथ दिवाकर ने प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए अंग्रेजी में निम्न लिखित भाषण दिया :—

I am here more on account of the insistence of Ayurvedic friends than on account of any qualification for the task which has been entrusted to me. Th y seem to have more confidence in me than myself and where I cannot trust myself, I thought I *should* trust my friends. I know now-a-days it does not require any special qualification for inaugurating a conference or an exhibition, because he who is to inaugurate has a very simple function to perform. He has neither any responsibility for organising the show nor for conducting the proceedings. He has simply to open, make a suitable speech and be done with the matter. But on account of the general interest I have in these matters, I have taken a more serious view of the duty that I have accepted under the present circumstances.

I do not wish to look upon the science of Ayurved and everything appertaining to it to as a protagonist or an adverse critic. I wish to look upon it as a practical layman who would like to judge things from the results that follow. Why should a man in the street, for instance, be partial to Ayurved, Allopathy, Homeopathy and the number of 'Pathies' that are current? Each one of them and the protagonists of all the different schools of thought, claim that they are panaceas for all the ills that the human body is heir to. It is a different matter that in spite of all of them claiming such great powers, humanity is suffering not only from the same old numerous diseases but numbers of them are being added on to the list almost daily. One wonders as to where the preventive or the curative powers of these different schools of medicine have gone. I do not want to question, however, their claim to cure; otherwise it would be difficult for me to explain the faith of the people in all these schools of medicine. The degree of faith may differ, but there is no doubt that every school does claim a respectable clientele However, I should like to judge things as a practical layman and would be justified in saying that results alone are the test and not any elaborate theory that may convince my brain. After all in these matters, it is the particular diseases that have to be cured and not my thinking power that has to be convinced.

Like many things in India, Ayurved is a very old science; or rather, an ancient science. It was not the less important because it consisted of knowledge about a healthy and long life. It was looked upon with equal importance as religion, philosophy, mysticism and yoga. The mere fact that it was called 'Veda' shows that it was' held in great respect. However, little respect a particular school of decadent philosophy might have had for the human body and the

earthy existence, there is no doubt that the human body as a general rule, was not only looked upon with great respect throughout the ages, but also as the prim ry instrument of the very practice of religion. "Shariram Adhya Khalu dharma sadhanam." This science along with a number of others flourished and progressed in India up to the 13th or 14 century possibly with a few ups and downs even before that. Many of those sciences were in the forefront and we led the world in many of them. But somehow and for many reasons, this science as well as some others ceased to progress. A certain stagnation seems to have hampered its further growth and since then there has been very little चालना or progress.

There is no doubt in my mind that even today with all the neglect and want of patronage, it is still catering to millions in India both in cities as well as in villages; it is, of course, doing so more in villages than in cities. In fact, it may even be said with great truth that for millions Ayurved is the only school of medicine that holds the key of relief. The very fact that this system of medicine is still alive after centuries of viccissitudes and non-recognition by the State, shows that it has a vitality and natural roots in this land. It is holding its own against other systems especially that of Allopathy which has come to stay in India and is today the most modern and the most progressive. Allopathy has the advantages of being today almost a world science and it is living and progressing in so far as it can boast of. New researches which naturally inspire great confidence, especially the surgery part of modern medicine and the deep knowledge of anatomy and physiology on which it is based, is unique and has no competitor in any other system of medicine. Modern medicine is also taking the fullest advantage of modern equipment and development in the science of light, electricity, chemistry and so on We must admit that so far as Ayurved is concerned it cannot boast of this progressiveness and it is here that what is old and true to experience has to take advantage of new discoveries in the light of modern science and experience, and bring it up to date What is called the 'scientific method' is the keynote of modern research That has to be applied to Ayurved as well. Then only can Ayurved not only stand competition but also be able to yield the best in it.

I am glad to know that the Chopra Committee which was instituted by the Government of India has come out with very useful and important recommendations as regards the development of Ayurved. If some of the recommendations, especially as regards research, are taken up, I am sure that a great step will have been taken in this regard. I am further glad to note that a small Committee is now sitting to see how the recommendations, especially as regards research, should be given shape and form. Those who are interested in the revivification of this ancient science are, I am sure, looking forth for the recommendations of this second Committee.

To my mind Ayurved has also two aspects; one the preventive and the other curative. I fear the preventive aspect of Ayur-

प्रयोग करता है। छोटी-मोटी बीमारियों में इनका प्रयोग और इनकी जानकारी बहुत उपयोगी हो सकती है। बच्चों के लिये माताएं इनका कितना प्रयोग किया करती थीं ? गृहविज्ञान का उसको एक अंग बनाना चाहिये। भस्म और मात्रायें भी आयुर्वेद का आवश्यक अंग हैं। इनकी अत्यल्प मात्रा के प्रयोग से मुझे ऐसा लगता है कि अणुशक्ति के प्रयोग के महत्व को आयुर्वेद में भी पूरा उतारा गया था। लेकिन, इन सबके निर्माण, प्रयोग तथा प्रभाव का एक स्टेण्डर्ड बनाना आवश्यक है। बिना इसके इनका पूरे विश्वास और भरोसे के साथ प्रयोग नहीं किया जा सकता। व्यापक शोध के सम्बन्ध में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। इसके बिना प्रगति असम्भव है। जब कि आज भी भारत के ७०—८० प्रतिशत लोग आयुर्वेद का ही प्रयोग करते हैं, तब इसमें आधुनिकता लाकर इसको और भी अधिक उपयोगी और व्यापक बनाया जा सकता है। उसका सस्तापन, सर्वसुलभता तथा गुणकारिता उसकी विशेषतायें हैं। यदि शोध द्वारा इसके ये गुण और भी बढ़ सकें, तो इसकी लोकप्रियता और भी बढ़ाई जा सकती है। मैं जानता हूं कि अनेक डाक्टर भी आयुर्वेद औषधियां काम में लाते हैं। रोग परीक्षा और शल्यक्रिया के आधुनिक साधन न होने पर भी अनेक औषधें ऐसी हैं कि उनका प्रयोग हर अस्पताल में किया जा सकता है। हम शोध के कार्य से आयुर्वेद का सम्मान बढ़ाने के साथ साथ आज के औषध भण्डार में भी कुछ अच्छी वृद्धि कर सकेंगे, जो भारत ही नहीं किन्तु सारे संसार के लिये उपलब्ध हो सकेगी।

इन्हीं के कारण हमारे देश को जगद्गुरु का पद एवं गौरव प्राप्त था। किसी भी कारण से यह प्रगति रुक गई।

मुझे इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि उपेक्षा तथा संरक्षण के अभाव के बावजूद भी आयुर्वेद आज भी शहरों तथा गांवों में लाखों की सेवा कर रहा है। निस्सन्देह, शहरों की अपेक्षा गांवों में उसकी सेवा अधिक है। यह असन्दिग्ध सचाई है कि लाखों के जीवन का सहारा तो केवल आयुर्वेद ही है। केवल यह सचाई कि सदियों की उपेक्षा और संरक्षण के अभाव में यह आज भी जीवित है, यह प्रगट करती है कि उसमें कोई तत्व है और उसकी जड़ें इस भूमि में गहरी जमी हुई हैं। अन्यों को विशेष कर एलोपैथी के मुकाबिले में वह टिका हुआ है, हालां कि एलोपैथी को भारत में जमाया गया है और उसको आधुनिक तथा प्रगतिशील भी माना जाता है। वह संसार-व्यापी भी है। उसमें होने वाली नयी शोध, विशेष कर चीरा-फाड़ी तथा शरीरज्ञान का तो मुकाबला किया ही नहीं जा सकता। प्रकाश, बिजली, रसायन आदि में होने वाले आविष्कारों का भी लाभ उसको मिल रहा है। यह मानना होगा कि आयुर्वेद की प्रगति रुक गई है और उसको आधुनिक अनुभव तथा विज्ञान के सहारे आधुनिक रूप देना ही होगा। तभी आयुर्वेद टिक सकेगा और अपना चमत्कार भी दिखा सकेगा।

मुझे यह जान कर प्रसन्नता हुई है कि चोपड़ा कमेटी ने आयुर्वेद के विकास के लिये अनेक सिफारिशें की हैं। मुझे यह जान कर भी प्रसन्नता हुई है कि एक और छोटी कमेटी उन सिफारिशों विशेषतः शोध कार्य के सम्बन्ध में विचार करने के लिये बिठाई गई है।

आयुर्वेद के भी रोग के निरोधक और निवारक दो रूप हैं। उसके निरोधक रूप पर विशेष ध्यान नहीं दिया जा रहा है। इस पर विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है। सम्भव है उसका निरोधक रूप धर्म और समाजशास्त्र में मिला लिया गया हो। फिर भी उनको आधुनिक रूप देकर मानव जीवन के लिये उपयोगी बनाया ही होगा। लोगों को यह बताना होगा कि ठीक सवेरे जल्दी उठने, दांत साफ करने, दैनिक स्नान करने, कपड़े बदलने, प्राणायाम, भोजन से पहिले आचमन करने, विशेष ऋतुओं में विशेष पदार्थ न खाने तथा कभी कभी उपवास करते रहने का निरोग तथा दीर्घ जीवन के साथ क्या सम्बन्ध है ?

प्रदर्शनी एक ठोस काम है। उसमें बहुतों की दिलचस्पी होना स्वाभाविक है। दवा से निदान अधिक महत्व का है। आयुर्वेद जड़ी बूटियों का मुख्यतः

प्रयोग करता है। छोटी-मोटी बीमारियों में इनका प्रयोग और इनकी जानकारी बहुत उपयोगी हो सकती है। बच्चों के लिये मातायें इनका कितना प्रयोग किया करती थीं ? गृहविज्ञान का उसको एक अंग बनाना चाहिये। भस्म और मात्रायें भी आयुर्वेद का आवश्यक अंग हैं। इनकी अत्यल्प मात्रा के प्रयोग से मुझे ऐसा लगता है कि अणुशक्ति के प्रयोग के महत्व को आयुर्वेद में भी पूरा उतारा गया था। लेकिन, इन सबके निर्माण, प्रयोग तथा प्रभाव का एक स्टेण्डर्ड बनाना आवश्यक है। बिना इसके इनका पूरे विश्वास और भरोसे के साथ प्रयोग नहीं किया जा सकता। व्यापक शोध के सम्बन्ध में कुछ अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। इसके बिना प्रगति असम्भव है। जब कि आज भी भारत के ७०—८० प्रतिशत लोग आयुर्वेद का ही प्रयोग करते हैं, तब इसमें आधुनिकता लाकर इसको और भी अधिक उपयोगी और व्यापक बनाया जा सकता है। उसका सस्तापन, सर्वसुलभता तथा गुणकारिता उसकी विशेषतायें हैं। यदि शोध द्वारा इसके ये गुण और भी बढ़ सकें, तो इसकी लोकप्रियता और भी बढ़ाई जा सकती है। मैं जानता हूं कि अनेक डाक्टर भी आयुर्वेद औषधियां काम में लाते हैं। रोग परीक्षा और शल्यक्रिया के आधुनिक साधन न होने पर भी अनेक औषधें ऐसी हैं कि उनका प्रयोग हर अस्पताल में किया जा सकता है। हम शोध के कार्य से आयुर्वेद का सम्मान बढ़ाने के साथ साथ आज के 'औषध भण्डार' में भी कुछ अच्छी वृद्धि कर सकेंगे, जो भारत ही नहीं किन्तु सारे संसार के लिये उपलब्ध हो सकेगी।

———

शास्त्रीय चर्चा परिषद

त्रिदोषवाद तथा कीटाणुवाद का समालोचनात्मक विवेचन

महासम्मेलन के अधिवेशन के साथ अनेक परिषदें करने की पुरानी परम्परा का परित्याग बड़ौदा में कर दिया गया था। इसलिये इस वर्ष दिल्ली अधिवेशन पर केवल एक ही शास्त्रीय चर्चा परिषद का आयोजन किया गया था। जबलपुर के सुप्रतिष्ठित वैद्य श्री भिकाजी विनायक डिग्वेकर एम० एस० सी० एल० बी० का "त्रिदोषवाद तथा कीटाणुवाद का समन्वयात्मक विवेचन" पर अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण, सारपूर्ण, गम्भीर भाषण अध्यक्ष-पद से हुआ। अनेक विद्वानों तथा प्रतिष्ठित वैद्यों ने भी इस विषय पर अपने विचार और अनुभव प्रकट किये। श्री डिग्वेकर के शोधपूर्ण भाषण की बहुत सराहना की गई। २१ फरवरी की सवेरे ६ बजे इसका आयोजन किया गया था। श्री डिग्वेकरजी का भाषण यहां दिया जा रहा है।

श्री डिग्वेकरजी का भाषण

नमो ब्रह्मप्रजापत्यश्विबलभिद्धन्वन्तरिसुश्रुतचरकप्रभृतिभ्यः।

मान्यवर वैद्यबन्धु तथा उपस्थित शास्त्रचर्चा परिषद् सदस्यगण,

आज बड़े सौभाग्य का दिन है कि इस निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ३०वें अधिवेशन के तत्वावधान में एक नितान्त महत्व के विषय पर शास्त्रचर्चा परिषद् का आयोजन किया गया है। आयुर्वेद चिकित्साशास्त्र की आत्मा ही त्रिदोष होने के कारण आज की चर्चा का विषय 'त्रिदोषवाद तथा कीटाणुवाद का समालोचनात्मक विवेचन' कितना गम्भीर तथा मूलग्राही है इससे आप जैसा विद्वत्समुदाय भली भांति परिचित है। ऐसे परिषद् के नियन्त्रण का कार्यभार स्वागत-समिति ने किस विचार से मेरे तुच्छ कन्धों पर डाला है, इसे समझने में मैं असमर्थ हूँ। समिति को इस सम्बन्ध में धन्यवाद देना अपना कर्तव्य समझते हुए मैं आशा करता हूँ कि आप महानुभावों के सहयोग से मुझे अपने कार्य में अवश्य ही सफलता प्राप्त हो सकेगी।

विषय का संविभाजन

आज के विषय का विवेचन तीन भागों में करना सुविधाजनक होगा:—

(१) त्रिदोष कौन से शारीर पदार्थ हैं इस विषय का निश्चय आयुर्वेदीय

ग्रन्थचतुष्टय के तथा सुप्रसिद्ध टीकाकारों के विवरणात्मक अवतरण देकर करना तथा प्रत्यक्ष शारीरात्मक विवेचन से उन त्रिदोषों का अस्तित्व सिद्ध करना।

(२) कीटाणु क्या पदार्थ है, इस विषय का अर्वाचीन शास्त्रों द्वारा तथा आयुर्वेदानुसार विवेचन करना।

(३) त्रिदोष तथा कीटाणुओं का परस्पर सम्बन्ध क्या है तथा इन दोनों पदार्थों का कार्यकारणभाव किस प्रकार सिद्ध हो सकता है, इसकी समालोचना करना।

इन तीनों विभागों के विवेचन में अनेक आयुर्वेदीय वाक्य उद्धृत करना आवश्यक होगा। उनका विवरण यदि विस्तारपूर्वक किया जाय, तो भाषण अति दीर्घ होगा। अतएव केवल एतद्विषयक शास्त्रचर्चा करने में सुविधा हो सके, ऐसे वाक्य दिग्दर्शनमात्र निर्दशित करने का विचार है।

प्रथम विभाग

'त्रिदोष कौन से शारीर पदार्थ हैं'

(१) शरीर ज्ञान का महत्व—

आयुर्वेद शास्त्र शरीर से सम्बन्ध रखने वाला शास्त्र होने के कारण चरकाचार्य शारीरस्थान अ० ६। १६ सूत्र में कहते हैं :—

शरीरं सर्वथा सर्वं सर्वदा वेद यो भिषक्।
आयुर्वेदं स कात्स्न्र्येन वेद लोकसुखप्रदम्॥

अतएव हमें प्रथमतः समग्र शरीर का सम्पूर्ण ज्ञान सम्पादन करना आवश्यक होता है।

(२) शरीर का स्वरूप

शरीर क्या पदार्थ है यह बात उसी अध्याय में वर्णित है।

शरीरं नाम चेतनाधिष्ठानभूतं पञ्चमहाभूतविकारसमुदायात्मकं समयोगवाहि। च. शा: ६—२।

शरीर एक समुदायात्मक अर्थात् मेलक वस्तु है। इस समुदाय का प्रत्येक विभाग प्रविभाग पञ्चमहाभूतात्मक है तथा चेतनाधिष्ठानभूत है। एवं शरीर का हर एक अंश जगत के अन्य पाञ्चभौतिक द्रव्यों के (matter) समान द्रव्य होते हुए भी सचेतन है, यही उसका वैशिष्ट्य है।

सेन्द्रियं चेतनं द्रव्यं निरिन्द्रियमचेतनम्। च० सू० १—४८।

इसी चेतन सेन्द्रिय द्रव्य को पाश्चिमात्य शास्त्रज्ञ Bio-physical matter ऐसी संज्ञा देते हैं। इस शब्द में Bio का अर्थ है चेतन तथा

physical का पाञ्चभौतिक एवं शरीर का घटन–फिर वह कितना ही सूक्ष्मतम विभाग क्यों न हो, चेतन द्रव्य है यह बात स्पष्टतया सिद्ध है।

(३) शरीर का मूल

इस समुदायात्मक शरीर में यद्यपि अनेकानेक सचेतन द्रव्य सदैव ही रहा करते हैं तथापि इन सबको बनाने वाले मूलभूत तेरह (१३) सचेतन द्रव्य हैं, जिनका विवरण शास्त्रकार ऐसा करते हैं :—

दोषधातुमलमूलं हि शरीरम्। सु० सू० १५—३
दोषाधातुमलामूलं सदा देहस्य। अ० हृ० सू० ११। १
इनमें से वायुःपित्तंकफश्चेति त्रयोदोषाः। अ० हृ० सू० १।
रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः सप्त।
मला मूत्रशकृत्स्वेदादयोऽपिच॥ अ० हृ० सू० १।

(४) धातुसंज्ञा का कारण—

तीन दोष, सप्त धातु तथा तीन मल मिलकर तेरह पदार्थ इस शरीर के मूलाधार सचेतन पाञ्चभौतिक द्रव्य हैं। इसी कारण इन तेरह ही पदार्थों को एक सर्वसाधारण धातुसंज्ञा आयुर्वेदीय ग्रन्थों में प्रयोजित की हुई है। शरीर-धारणाद्धातवः ऐसा इस संज्ञा का विग्रह है। यह प्रयोग अनेक सूत्रों में किया हुआ है। उदाहरणार्थ :—

त्रयोदोषा धातवश्च पुरीषं मूत्र एव च।
देहं सन्धारयन्त्येते। सु० उ० ६६—६।

परन्तु यहां पर महत्व का केवल एक और आधार उद्धृत करना आवश्यक है। चरक सूत्र० २८—३ विविधाशित पीतीय अध्याय में आचार्य लिखते हैं—

ते सर्वे एव धातवो मलाख्याः प्रसादाख्याश्च रसमलाभ्यां पुष्यन्तः स्वमानमनुवर्तते यथावयः शरीरम्।

इसकी टीका में चक्रदत्त लिखते हैं :—'मलाख्याऽपि स्वेदमूत्रादयः स्वमानावस्थिताः देहधारणाद्धातवो भवन्ति।

(५) दोष संज्ञा का कारण—

अतएव देहधारण क्षमता धर्म इन तीनों प्रकार के सचेतन द्रव्यों में समान होने के कारण ये समकक्षीय हैं। परन्तु इनमें कुछ विशेषता भी हैं जिसके कारण उन्हें भिन्न नाम दिये हैं। दोष संज्ञक तीन द्रव्यों में एक विशेष धर्म है, जो बाकी के दस में नहीं है। इन तीनों द्रव्यों के प्रमाण में जब अनेक बाह्य हेतुओं के कारण विषमता अर्थात् प्रमाणाधिक्य (increase) अथवा प्रमाणाल्पत्व

(११) दोषों के उत्पत्तिस्थान—

दोषों के उत्पत्ति के प्रधान स्थान तीन हैं कफद्रव्य का आमाशय, पित्त का पक्वामाशयमध्य तथा वात का पक्वाशय।

पक्वाशयः वातस्य। पक्वामाशयमध्यं पितस्य।
आमाशयः श्लेष्मणः। सु० सू० २१-६

वातपित्तश्लेष्माण एव देहसम्भवहेतवः। तैरेवाव्यापन्नैः
अधामध्योर्ध्वसन्निविष्टैः शरीरमिदं धार्यते। सु० सू० २१-३

(१२) महास्त्रोतस् के विभाग—

प्रत्यक्ष शरीर की ओर देखने से प्रतीत होता है कि अन्नविपाचन क्रिया का प्रधान स्थान महोस्त्रोतस् (Alimentary Canal) है जो एक लंबी नलिका मुख से प्रारम्भ होकर गुद तक फैली हुई है। इसके तीन प्रमुख विभाग हैं (१) आमाशय (Stomach) (२) पक्वामाशयमध्य अथवा ग्रहणी (Duodenum) तथा (३) पक्वाशय वा अन्त्र (intestines) मुख से प्रारंभ होकर आमाशय तक की अन्ननलिका केवल अन्न की चर्वण क्रिया करने में तथा अन्न के आमाशय में पहुंचाने के कार्य में उपयुक्त रहती है। इसी प्रकार अन्त्रों के अन्त का भाग केवल मल को बाहर फेंकने का कार्य करता है। परन्तु अन्न के विपाचन का मुख्य कार्य आमाशय में प्रारंभ होकर क्रमशः पक्वामाशय मध्य में होता हुआ अन्त्रों में पूर्ण होता है। तथा वहीं अन्न के सारभूत अन्नरसधातु का संपोशण (Absorption) भी होता है। इस दृष्टि से महा स्त्रोतस् के महत्व के तीन भाग ही क्रमशः कफपित्तवात द्रव्यों के उत्पत्तिस्थान हुआ करते हैं। उपरिनिर्दिष्ट वाक्यों में जो ऊर्ध्व, मध्य तथा अधः स्थानों का निर्देश है वह क्रमशः आमाशय, पक्वामाशयमध्य तथा पक्वाशयों के लिये ही नियोजित है।

(१३) दोषों के स्वरूप—

(अ) कफ का स्वरूप—

आयुर्वेद में कफदोष का स्वरूप इस प्रकार वर्णित है :—

स्निग्धः शीतो गुरुर्मंदः श्लक्ष्णोमृत्स्नः स्थिरः कफः। अ० हृ० सू० १

श्लेष्मा श्वेतो गुरुः स्निग्धः पिच्छिलः शीतएव च।
मधुरस्त्वविदग्धः स्याद्विदग्धो लवणःस्मृतः॥ सु० सू० २१—१५।

स्नेहशैत्यशौक्ल्यगौरवमाधुर्यस्थैर्यपैच्छिल्यमात्स्न्यानिश्लेष्मणः—
आत्मरूपाणि। च० सू० २०—१८।

मुख से प्रारम्भ होकर आमाशय तक की अन्तस्त्वचा का स्राव तथा मुखान्तर्गत लालाग्रन्थी, जिव्हा का आवारण आदि के स्रावों की ओर Secretions) ध्यान देने से प्रतीत होता है कि इन स्रावों में उपरिनिर्दिष्ट कफ दोष संज्ञक सचेतन द्रव्य के समग्र गुण दिखाई देते हैं। जिन असात्म्येन्द्रियार्थ संयोगादि कारणों से दोषों में विकृति उत्पन्न होती है उनका परिणाम शरीर के नासिकादि विभागों में रहनेवाली अन्तस्त्वचा पर तत्काल दृष्टिगोचर होता है। फुफ्फुसों की अन्तस्त्वचा परभी यह परिणाम होकर खांसो, श्वास, कफस्रावादि विकार होते हैं तथा उपरिनिर्दिष्ट गुण वाला विकृत दोष बाहर निकलते हुए प्रतीत होता है। साम्यावस्था में अर्थात् स्वस्थावस्था (Normal Condition) में जो इस स्राव का स्वरूप होता है उसी का वर्णन ऊपर किया हुआ है। विदग्ध अर्थात् विकृत कफ द्रव्य खारा (लवणः) हो जाता है किन्तु अविदग्ध मधुर होता है इसका अनुभव प्रत्येक व्यक्ति को होता ही है। अतः अन्तस्त्वचा का (Mucous Membrane) का स्राव ही कफदोष-संज्ञक सचेतन द्रव्य है यह बात प्रत्यक्षानुभव से निश्चित होती है।

(अ) १—क्लेदक कफ—

कफद्रव्य का सर्वसाधारण स्वरूप वर्णन करने के पश्चात् अब उसके जो पाँच प्रकार शास्त्र में वर्णन किये हुए है उनका विचार करें।

> अन्नसंघातक्लेदनात् क्लेदकः। अ० हृ० सू० १२।
> आमाशयःचतुर्विधस्याहारस्याधारः।
> स च तत्रोदकैर्गुणैः आहारः प्रक्लिन्नः सुखजरश्च भवति।
> माधुर्यात् पिच्छिलत्वाच्च प्रक्लेदित्वात्तथैव च।
> आमाशये सम्भवतिश्लेष्मा मधुरशीतलः। सु० सू० २१। १४

जब आहार मुख से अन्ननलिका द्वारा आमाशय में पहुँचता है तब आमाशय की दीवारों से (Gastric juice) संज्ञक द्रव्य विशेष प्रमाण में निकलता है। इसमें लग-भग सैकड़ा ९९ भाग जल होता है जिसके कारण अन्नसंघात का क्लेदन (गीला करने का कार्य) हुआ करता है। अतः इसे क्लेदक संज्ञा दी हुई है।

सुश्रुताचार्य आगे कहते हैं 'स तत्रस्थ एव स्वशक्त्या शेषाणां श्लेष्मस्थानानां शरीरस्य चोदककर्मणा अनुगृहं करोति'।

यही क्लेदक कफसंज्ञक सचेतन द्रव्य ही शरीर में उत्पन्न होने वाले इतर चार प्रकार के कफद्रव्यों को तथा शरीर में आवश्यक जलांश की भी पूर्ति

करता है। अतः आमाशयोत्पन्न यही महास्रोतसीय द्रव्य प्रमुख कफद्रव्य है।

कफनाशक प्रधान उपक्रम—

जब बाह्य करणों से इस शरीरगत कफ की वृद्धि होती है तब उसे शरीर से बाहर निकालकर तज्जन्य रोग न होने पावें इसलिये सबसे श्रेष्ठ उपाय चरकाचार्य ने सू० २० १६ में बताया है।

वमनं तु सर्वोपक्रमेभ्यः श्लेष्मणि प्रधानतमं मन्यन्ते भिषजः, तद्ध्यादित एवामाशयमनुप्रविश्य केवलं वैकारिकं श्लेष्ममूलं उर्ध्वमुत्क्षिपति, तत्रावजिते श्लेष्मण्यपि शरीरान्तर्गताः श्लेष्मविकाराः प्रशान्तिमापद्यन्ते, यथा भिन्ने केदार-सेतौ शालियवषष्टिकादीन्यभिष्यन्दमानान्यम्भसा प्रशोषमापद्यन्ते तद्विदिति।

इस विवरण से स्पष्टतया सिद्ध होता है कि कफ संज्ञक सचेतन पांच भौतिक द्रव्य का प्रमुख स्थान आमाशय ही है तथा उसमें उत्पन्न होने वाला (Gastric Juice) ही प्रमुख क्लेदक कफ है।

कफ का उदीरण--

ग्रहणी चिकित्साध्याय (च० चि० १५-६) में चरकाचार्य अन्नविपाचन क्रिया का वर्णन करते हुए कहते हैं:—

अन्नस्य भुक्तमात्रस्यषड्रसस्य प्रपाकतः।
मधुराद्यात्कफोद्भावात् फेनभूत उदीर्यते ॥६॥

इस सूत्र में 'उदीर्यते' शब्द बड़े महत्व का तथा प्रत्यक्ष विषयक विशेषार्थ द्योतक है। उदीर्यते इति उत्पद्यते ऐसा चक्रदत्त लिखते हैं। उदीरणं शब्द में उत् ईरणम् ऐसे पद हैं जिनका अर्थ 'आभ्यन्तर प्रेरणा से बाहर निकलने वाला' ऐसा होता है। अन्न मुख में पहुंचते ही आमाशय में क्लेदक कफ (Gastric Juice) का, आमाशयकी चारों ओर की दीवालों से, झिरने के सदृश बहाव होने लगता है ऐसा वर्णन आप पाश्चिमात्य शारीर क्रिया (Physiology) के ग्रन्थों में देख सकते हैं। इसी क्रिया का वास्तविक प्रात्यक्षिक विवरण हमें इस 'उदीर्यते' शब्द में प्राप्त होता है। तब कौन कह सकता है कि हमारे प्राचीन पूज्य ऋषियों ने प्रात्यक्षिक ज्ञान प्राप्त किये बिना ही यह विवरण अत्यन्त योग्य शब्दों में किया होगा?

एवं यह बात स्पष्ट है कि जिस कफ द्रव्य का विवरण स्निग्ध शीतादि गुणों द्वारा आचार्यों ने किया है वह द्रव्य प्रत्यक्षतया मुख से आमाशय तक की श्लेष्मलत्वचा के स्राव तथा क्लेदक कफ रूप में हम भलीभांति देख सकते हैं तथा अनुभव कर सकते हैं।

(अ) २ बोधक कफ—

इसका स्वरूप ग्रन्थों में ऐसा वर्णन किया गया है।

बोधको रसबोधनात् । अ० हृ० सू० १२ ।

जिव्हामूलकंठस्थो जिव्हेन्द्रियस्य सौम्यत्वात्सम्यग्रसज्ञाने वर्तते । सु० सू० २१—१४

रसनस्थः सम्यग्रसबोधनाद्बोधकः । अ० सं० सू० २०--

जिव्हा का बाह्य आवरण जिस श्लेष्मलत्वचा का बना हुआ है उससे यदि कफ का स्राव कम होने लगे तो मुंह सूखता है तथा रसज्ञान कराने वाले जिव्हांकुर अपना कार्य करने में असमर्थ होते हैं। अतः इस स्राव को बढ़ाने के लिये कफ से समानगुणी मिश्री घृतादि पदार्थों को मुख में धारण करना अथवा जिव्हा की त्वचा से मर्दन करने का उपाय प्रयोजित होता है। इसके विपरीत जब कफ वृद्धि के कारण मुंह में स्राव विशेष होता है तब कफ नाशक अर्थात् कफ के गुणों से विपरीत गुण वाले कालीमिर्च विभीतकादि द्रव्यों का प्रयोग किया जाता है।

(अ) ३ तर्पक कफ—

शिरःसंस्थोऽक्षतर्पणात् तर्पकः । अ० हृ० सू० १२ ।

शिरस्थश्चक्षुरादिन्द्रियतर्पणात्तर्पकः । अ० सं० सू० २० ।

शिरस्थःस्वेदतर्पजाधिकृतत्वादिन्द्रियाणामात्मनीर्येण अनुग्रहं करोति । सु० सू० २१-१४ ।

सिर के भीतर मस्तिष्क (brain) के चारों ओर रहने वाले इस द्रव्य के कारण नेत्रादि सब इन्द्रियों की तर्पण क्रिया चलती है जिससे उनकी कार्य-क्षमता बनी रहती है। इसी को (Cerebro-Spinal Fluid) कहते हैं। यह भी द्रव तथा जलप्रधान द्रव्य है।

(अ) ४ श्लेषक कफ—

सन्धिसंश्लेषणाद् श्लेषकः । अ० हृ० सू० १२ ।

पर्वस्थोऽस्थिसन्धिश्लेषात् श्लेषकः । अ० सं० सू० २० ।

सन्धिस्थस्तु श्लेष्मा सर्वसन्धि संश्लेषात्सर्वसन्ध्यनुग्रहं करोति । सु० सू० २१-१४ ।

अंगुलियों के पूर्व तथा शरीर के अस्थिसन्धियों के चारों ओर अभ्यन्तर भाग में कफस्राव कराने वाले सूक्ष्म त्वचा का आवरण रहा करता है जिसे (Synovial Membrane) ऐसी प्रत्यक्ष शारीर में संज्ञा है। इस त्वचा से

उत्पन्न होने वाला (Synovial fluid) संज्ञक स्राव द्रव होते हुए कफ के गुण धर्मों से युक्त होता है। वह ओंगन का कार्य करता है जिससे संधियाँ क्षीण नहीं होने पातीं। परस्पर संघर्ष के कारण संधियों में घर्षण क्रिया होकर उनको अपाय न हो सके यही इस द्रव द्रव्य का कार्य है चारों ओर संधियों को घेरे रहता है इसलिये (शिलप् ब्यालिंग ने) उसे श्लेषक संज्ञा दी है।

(अ) ५ अवलंबक कफ—

उरःस्थस्त्रिकसन्धारणमात्मवीर्येणान्नरससहितेन हृदयावलम्वनं करोति। सु० सू० २१-१४।

सतूरस्थः स्ववीर्येण त्रिकस्यान्नवीर्येण च सह हृदयस्य च...... अवलम्वनादवलम्वक इत्युच्यते। अ० सं० सू० २०।

फुफ्फुसों की अन्तस्त्वचा, श्वासनलिका का अन्तरावरण (Mucous Membrane) तथा फुफ्फुसों का द्विस्तरात्मक वाह्यवरण (Plurea) इन सबसे जो स्राव झिरपते रहते हैं उनके गुण धर्म ऊपर वर्णन किये हुए कफ द्रव्य के सदृश हैं इनमेंजलांश अधिक रहता है। तब कास, श्वास, त्यादि विकार उत्पन्न होते हैं। अन्न रस जब अन्त्रों से संशोषित होकर हृदय द्वारा फुफ्फुसों में शुद्ध होने के लिये जाता है तब उस रस में यदि कफ दोष संज्ञक द्रव्य का कुछ अधिकांश रहा हो तो वह फुफ्फुस की प्राणापान वायुओं की लेन-देन के रासायनिक क्रिया में (intake of Oxygen and out put of Carbonic Acid) अलग कर दिया जाता है। इस प्रकार हृदय में शुद्ध रस पहुंचा कर हृदय की क्रिया का योग्य संचालन (अवलंबन) करने वाले होने से उसे अवलंबक संज्ञा दी हुई है। इसको (Pleural Fluid) तथा (Mucous Secrection) कहते हैं।

इस प्रकार पंचभेदात्मक कफ द्रव्य का विवरण संक्षेपतः समाप्त हुआ। इस विषय में अभी अनेक बातें स्वस्पष्ट करना है परन्तु विस्तार भय से इस विषय को यहीं समाप्त कर अब पित्त संज्ञक सचेतन द्रव्य का प्रत्यक्ष करने का प्रयत्न करें।

(ब) पित्तका स्वरूप—

आयुर्वेद में पित्तदोष का स्वरूप इस प्रकार वर्णित है—

पित्तं सस्नेहतीक्ष्णोष्णं लघुविस्रं सरंद्रवम्। अ० हृ० सू० १

पित्तं तीक्ष्णं द्रवं पूति नीलं पीतं तथैवच।
उष्णं कटुरसं चैव विदग्धं चाम्लमेवच॥ सु० सू० २१-११

औष्ण्यं तैक्ष्ण्यं द्रवमनतिस्नेहो वर्णश्च शुक्लारुणवर्ज्यो
रसौ च कटुकाम्लौ पित्तस्यात्मरूपाणि। च० सू० २०-१४।

मुख से प्रारम्भ होकर आमाशय के अन्त तक का महास्रोत का विभाग समाप्त होने पर पक्वाशय को प्रारम्भ होता है। इस पक्वाशय के प्रारंभिक दस इंच लम्बे विभाग को पक्वामाशय मध्य अथवा ग्रहणी ऐसी आयुर्वेद शास्त्र में संज्ञा दी हुई है। पाश्चिमात्य शारीर शास्त्र में इसको (Duodenum) कहा है। यकृत् (Liver) तथा अग्न्याशय (Pancreas) नामक दो बड़े ग्रन्थियें के स्राव एकत्र मिल कर एक नलिका द्वारा इसी पक्वामाशय मध्य संज्ञक विभाग में आकर टपकते रहते हैं। इस मिश्र स्राव का वर्ण हरा तथा पीला (शुक्लारुणवर्ज्य) होता है। उसका गन्ध किञ्चित् सड़ी हुई मछली का (विस्रः—आमगन्धः), तथा रस खट्टा तथा चिरपिरा (रसौच कटुकाम्लौ) होता है। प्रत्यक्षानुभव से निश्चित किये हुए पाश्चिमात्य ग्रन्थों में यह वर्णन पाया जाता है। यह द्रव्य तीक्ष्ण (जलमिश्रित तेजाब के समान कार्य करने वाला) द्रव (पतला) तथा किंचित् स्नेहयुक्त चिकनाहट लिया हुआ होता है। अतः यही सचेतन द्रव द्रव्य पित्त दोष है यह निश्चित होता है।

(ब) १—पाचकपित्त—

पित्त द्रव्य का सर्वसाधारण स्वरूप वर्णन करने के पश्चात् अब उसके जो पांच प्रकार शास्त्र में वर्णित हैं उनका विचार करें। प्रथमतः पाचक पित्त का विवरण देखें। अष्टाङ्ग हृदय में इसका वर्णन बड़ा ही सुन्दर तथा विवेचनात्मक किया हुआ है।

> पित्तं पञ्चात्मकं तत्र पक्वामाशयमध्यगम् ।
> पंचभूतात्मकत्वेऽपि यत्तैजसगुणोदयात् ॥
> त्यक्तद्रवत्वं पाकादिकर्मणाऽनल शब्दितम् ।
> पचत्यन्नं विभजते सारकिट्टौ पृथक्तयो ॥
> तत्रस्थमेव शेषाणां पित्तानामप्यनुग्रहम् ।
> करोति बलदानेन पाचकं नाम तत्स्मृतम् ॥ अ० हृ० सू० १२ ।

इस अवतरण से निम्न बातों का निश्चय होता है—

(१) यह पित्त द्रव्य पक्वामाशय मध्य में आता है (मध्यगम्) अर्थात् किसी दूसरे स्थान से आकर टपकता है।

(२) यह पाञ्चभौतिक द्रव्य है। केवल शक्ति या सूक्ष्म द्रव्य नहीं।

(३) इस द्रव्य में तैजस गुण का उदय (आधिक्य) होने के कारण इसने अपना द्रवत्व धर्म त्याग दिया है। अष्टाङ्ग संग्रह में इस विषय का विस्तार ऐसा है। अ० सं० सू० २० ।

तेजो गुणोत्कर्षात्त्वपितसोमगुणं ततश्च त्यक्तद्रवस्वभावम् ।

द्रव द्रव्य का स्वभाव होता है कि जिस अन्य द्रव्य के साथ वह मिश्रित होता है, उसे वह केवल पतला करता है, जैसे ऊपर वर्णन किया हुआ क्लेदक कफ। परन्तु यह पित्त संज्ञक द्रव्य द्रव अर्थात पतला होते हुए भी इसने अपने द्रव धर्म का त्याग कर तेजोगुणोत्कर्ष के कारण पाकादि कर्म करने का तैजसीय द्रव्य का कार्य अंगीकृत किया है। इसीसे उसे अनल अथवा अग्नि एवं पाचकाग्नि संज्ञा दी जाती है। उदाहरणार्थ कोई भी अम्ल (तेजाब), क्षाराम्ल (Hydrochloric Acid) अथवा गंधकाम्ल (Sulphuric Acid) एक शीशी में रखा हुआ आप देखें तो वह एक द्रव द्रव्य आपको प्रतीत होगा। परन्तु इसका एक बूंद भी कपड़े पर या अपनी शरीर-त्वचा पर आप डालें तो कपड़ा तत्काल जल जायगा तथा आपको त्वचा काले वर्ण की होकर तीव्र जलन पैदा होगी। ऐसे द्रव द्रव्य को क्या आप त्यक्तद्रव स्वभाव न कहेंगे ? तथा उसमें तेजोगुण का उत्कर्ष होने के कारण उसे अग्नि संज्ञा न देंगे ? यही इस पाँच भौतिक द्रव को द्रव्य की वास्तविक स्थिति आचार्यों द्वारा अत्यन्त मार्मिक शब्दों में यहाँ वर्णित की हुई पाई जाती है। ऐसा हृदयंगम वर्णन प्रत्यक्षात्मक ज्ञान के अभाव में कौन कर सकेगा ?

(४) यही पाचक पित्त आगे वर्णन किये हुए अन्य चार प्रकार के पित्तों की पूर्ति अपने बल-दान से करता रहता है, एवं इसी द्रव्य द्वारा उनकी पुष्टि होती है। अर्थात् महास्रोत के गृहणी विभाग में टपकने वाला यही पित्त संज्ञक सचेतन द्रव द्रव्य शारीरिक प्रमुख पित्त है।

पित्त नाशक प्रधान उपक्रम—

जब अनेक बाह्य कारणों से इस प्रमुख पित्त की वृद्धि (increase) होती है तो उसको शरीर से बाहर निकालकर तज्जन्य व्याधियाँ न होने पावें इसलिये चरकाचार्य सब से श्रेष्ठ उपाय बताते हैं।

विरेचनंतु सर्वोपक्रमेभ्यः पित्ते प्रधानतमं मन्यन्ते भिषजः तद्ध्यादित एव पक्वामाशयमध्यमनुप्रविश्य केवलं वैकारिकं पित्तमूलमपकर्षति. तत्रावजिते पित्तेऽपि शरीरान्तर्गताः पित्तविकाराः प्रशान्तिमापद्यन्ते, यथाऽग्नौ व्यपोढे केवलमग्निगृहशीतीभवति तद्वदिति ।

इस विवरण से स्पष्ट होता है कि पित्तदोष का प्रमुख एवं मूल स्थान गृहणी ही है तथा उसमें टपकने वाला (bile) तथा (Pancreatic Juice) का मिश्रण ही पाचक पित्त संज्ञक सचेतन द्रव्य है।

पित्त का उदीरण—

अन्न में आमाशयगत क्लेदक कफ का मिश्रण होने के पश्चात् जब वह महास्रोत में आगे जाने लगता है तब पक्वामाशयमध्य में इसी पाचक पित्त संज्ञक सचेतन द्रव्य का उदीरण होता है यह सिद्धान्त चरकाचार्य गृहणीचिकित्साध्याय में स्पष्ट करते हैं। आप लिखते हैं—

परन्तु पच्यमानस्य विदग्धस्यामलभावतः
आशयाच्च्यवमानस्य पित्तमच्छामुदीर्यते । च. चि. १५-१०

यहाँ पर फिर 'उदीर्यते' शब्द की योजना है। अर्थात् यह द्रव्य अन्य स्थान से प्रेरित होकर उस पक्वामाशयमध्य में टपकता है। पाश्चिमात्य शारीरक्रिया विज्ञान में (Physiology) बताया हुआ है कि जब अन्न पक्वामाशय मध्य में आने लगता है उसी समय यकृत तथा आग्न्याशय के स्राव विशेष जोरों में होकर गृहणी में आने लगता है। जब अन्न वहाँ नहीं होता तब यकृत् का स्राव एक पित्ताशय (Gall Bladder) संज्ञक थैली में एकत्रित होता रहता है। आवश्यकतानुसार वह गृहणी में उडेल दिया जाता है। अर्थात् यहाँ भी उदीर्यते शब्द का प्रयोग अत्यन्त सूचक तथा प्रत्यक्षानुभव का निदर्शक है।

एवं जिस प्रकार महोस्रोतसान्तर्गत क्लेदक कफ समग्र कफों को पुष्टि देने वाला है उसी प्रकार महास्रोतसांतर्गत पाचक पित्त भी शरीरगत अन्य चार पित्तों को पुष्ट करने वाला सचेतन प्रत्यक्ष द्रव्य है।

(च) २ रञ्जक पित्त—

यत्तु यकृत्प्लीन्होः पित्तं तस्मिन्रंजकोऽग्निरितिसंज्ञा, सरसस्य रागकृदुक्तः । सु० सू० २१-१०।

रञ्जकोरसरञ्जनात् । अ० हृ० सू० १२—

अन्नरस की फुप्फुसों में शुद्धि होने के पश्चात् भी वह श्वेत वर्ण का ही रहता है। उसमें जब यकृत तथा प्लीहा से उत्पन्न होने वाले अन्य स्राव मिलते हैं तब उसको रक्तवर्ण प्राप्त होता है। इस सिद्धान्त को आधुनिक शास्त्रज्ञ भी आज मान रहे हैं। हमारे ऋषियों ने उसे ३००० वर्ष पूर्व निश्चित कर लिया था इससे उनके संशोधक बुद्धि का परिचय होता है। चोपडा समिति के तत्वावधान में जो पूना कान्फ्रेन्स बुलाई गई थी उसकी रिपोर्ट के अनुसार इसे (Homatopoetic Principle in the Liver) कहा है।

(ब) ३ साधकपित्त—

यत्पित्तं हृदयस्थं तस्मिन्साधकोऽग्निरिति संज्ञा ।
सोऽभिप्रार्थितमनोरथसाधनकृदुक्तः । सु० सू० २१-१० ।

हृदयस्थं बुद्धिमेधाभिमानोत्साहैरभिप्रेतार्थसाधनात्साधकम्।
अ० सं० २०।

आधुनिक शास्त्रज्ञों को अभी इसका ठीक पता नहीं है। पूना परिषद् ने इसे (Harmones) कहा है।

(व) ४ आलोचक पित्त

यद्दृष्ट्यांपित्तं तस्मिन्नालचकोऽग्निरितिसंज्ञा। सरूपग्रहणाधिकृतः—
सु० सू० २१-२०।

दृष्टिस्थं रूपलोचनाच्चालोचकम्। अ० सं० २०।

इसे पूना परिषद् ने (Rhodopsin or Visual Purple of the Retina) कहा है।

(व) ५ भ्राजक पित्तः

यत्तु त्वचि पित्तं तस्मिन्भ्राजकोऽग्निरितिसंज्ञा। सोऽभ्यङ्गपरिषेकावगाहावलेपनादीनां क्रियाद्रव्याणां पक्ताछायानांच प्रकाशकः सु० सू० २१-१०।

त्वकस्थं त्वचो भ्राजनाभ्द्राजकम्। अ० स० २०।

इस पित्त का अस्तित्व अनुमान प्रमाण द्वारा निश्चित किया जाता है। जिस प्रकार पाचक पित्त अन्न का विपाचन करके संशोषण योग्य रस को शरीर में उत्पत्ति करता है यह तत्व प्रत्यक्ष प्रमाण से सिद्ध है उसी प्रकार अभ्यङ्गादि द्वारा शरीर पर रगड़ा हुआ तैलादि पदार्थ शरीर में प्रविष्ट होकर अपने तीक्ष्णादि गुण दिखाते हैं तब अवश्य ही उस द्रव्य का संशोषण शरीर में होना चाहिये। किसी न किसी आग्नेय द्रव्य से संयोग हुए बिना संशोषण कार्य नहीं हो सकता। अतः जिस अग्नि से संयोग होकर तैलादि द्रव्य शरीर में अपना परिणाम करते हैं वही भ्राजकाग्नि है।

इस प्रकार पञ्चात्मक पित्त का विवरण संक्षेपतः किया गया।

पित्त तथा कफ दोष शरीरज प्रत्यक्ष सचेतन द्रव्य हैं यह बात अब बहुधा सब आयुर्वेदज्ञों को मान्य हो रही है। परन्तु वात दोष भी इन्हीं दो द्रव्यों के समान शरीरज प्रत्यक्ष सचेतन द्रव्य है या नहीं इस विषय में अभी शंका बनी हुई है। अतः इस सम्बन्ध का विवेचन विशेषरूप में करना आवश्यक है।

क—वात का स्वरूप

आयुर्वेद में वातदोष का वर्णन इस प्रकार किया हुआ है—

तत्र रूक्षो लघुः शीतः खरःसूक्ष्मश्चलोऽनिलः अ० हृ० सू० १

रूक्षः शीतो लघुः सूक्ष्मश्चलोऽथविशदः खरः। च० सू० १-५६

रौक्ष्यं शैत्यं लाघवं गतिरमूर्तत्वमनवस्थितत्वं चेतियायो रात्मरूपाणि।......। तं शरीरावयवमाविशत्...। च० सू० २०-१२।

अव्यक्तो व्यक्तकर्मापि रूक्षः शीतो लघुः खरः।

आशुकारी मुहुश्चारी पक्वाधानगुदालयः॥ सु० नि० १-५६

इन वचनों में रेखांकित शब्दों के अर्थ टीकाकारों से उद्धृत करना आवश्यक है—

(१) सूक्ष्मः—इतिसूक्ष्मस्रोतः सञ्चारि (अरुणदत्तः)

(२) अमूर्तत्वम्—इति अदृश्यत्वम् (चक्रदत्तः)

(३) अनवस्थम्—इतिचलत्वमाचम (चक्रदत्तः)

(४) अव्यक्तः—इति अदृश्य मूर्तिः (डल्हना)

वातदोष वायवीयद्रव्य ही है—

आयुर्वेद में जो गुरुमंदादि बीस गुण वर्णन किये हुए हैं वे सब पांचभौतिक द्रव्यों में रहा करते हैं। पार्थिवादि द्रव्यों का विवरण भी इन्हीं गुर्वादि गुणों द्वारा किया हुआ है। इनमें वायवीय द्रव्य का विवरण ऐसा है—

सूक्ष्मरूक्षखरशिशिरलघुविशदं स्पर्शबहुलमीषत्तिक्तं विशेषतः कषायमिति वायवीयम्। सु० सू० ४१-४ (४)।

इस वर्णन से आप देख सकते हैं कि वायवीय द्रव्य के तथा वातदोष के गुण शब्दशः एक ही वर्णन किये हुए पाये जाते हैं। तब वातदोष वायवीय द्रव्य नहीं है ऐसा किस आधार पर कहा जा सकता है?

हवा से वातदोष के गुणों की तुलना—

वातकलाकलीयाध्याय (च० सू० १२) में शरीर के बाह्य के संचार करने वाले वायु के अर्थात् हवा (Air) के कुपित तथा अकुपितावस्था के कार्यों का वर्णन किया हुआ है। इस हवा में हमें वायवीय द्रव्य के एवं वात दोष के सम्पूर्ण गुण स्पर्शनेन्द्रिय द्वारा अनुभव सुलभ होते हैं। हवा में स्निग्धता (चिकनाहट) का पूर्ण अभाव है अतः वह रूक्ष है। एक ही आकार के (Volume) ठोस (Solid) तथा द्रव्य (Liquid) द्रव्यों से हवा हलकी है अतः वह लघु है। हवा में जलांश (Water Vapour) रहने का कारण वह स्वभावतः ठंडी अथवा शीत है। वेगवान हवा का त्वचा को स्पर्श होते ही उसके खरत्व का ज्ञान स्पष्टतया होता है। सूक्ष्म से सूक्ष्म रन्ध्र में हवा का प्रवेश तत्काल होता है इस से वह सूक्ष्मः स्रोतः संचारि अतः सूक्ष्म है।

किसी भी पूर्णतया रिक्त (Vacuum) स्थान में हवा का अत्यन्त सूक्ष्म अंश छोड़ दीजिये। वह तत्काल समग्र रिक्त स्थान में फैल जाता है। इस धर्म को पदार्थ विज्ञान शास्त्र (Physics) में (Diffusion) कहते हैं। अतः हवा चल है। हवा में जब तक अन्य किसी द्रव्य का संमिश्रण नहीं हो तब तक वह हवा साफ रहती है अतः स्वभावतः विशद (स्वच्छ) है

अतएव वायवीय द्रव्य के सम्पूर्ण गुण हवा में हैं। वातदोष का वर्णन भी अक्षरशः इन्हीं गुणों द्वारा शास्त्रज्ञों ने किया हुआ होने के कारण निश्चय होता है कि शरीरान्तर्गत वातदोषसंज्ञक सचेतन द्रव्य भी हवा के समान वायुद्रव्य (Gaseous Substance) ही होना चाहिये।

वातविषयक प्रश्न से वायवीयद्रव्यत्व का निश्चय—

वातकलाकलीयाध्याय में वायु का स्वरूप निर्णय करने के उद्देश से एक प्रश्न पूछा गया है—

कथं चैनमसंघातवंतमनवस्थितमनासाद्य प्रकोपणप्रशमननानि प्रकोपयन्ति प्रशमयन्तिवा ?

यह वायुद्रव्य (१) असंघातवान् (२) अनवस्थित तथा (३) अनासाद्य है। यहां असंघातवंतमिति पित्तश्लेष्मावदवयवसंघातरहितम् ऐसा चक्रदत्त लिखते हैं। अर्थात् पित्त तथा श्लेष्मा ये दोनों द्रव्य ऐसे हैं कि उनके अवयव अथवा परमाणु (Molecules) एक दूसरे से जुटे हुए रहते हैं जैसा किसी भी गाढ़े या पतले द्रव्य को किसी कांच के पत्र में रखने से प्रतीति होती है। परन्तु यह वायुद्रव्य ऐसे अवयवसंघात से रहित है अर्थात् इसके परमाणु अत्यन्त विरल होते हैं जैसे किसी भी वायुरूपद्रव्य की (Gaseous Substance) की स्थिति (Diffusion) धर्म से प्रतीत होती है। उसी बात को अनवस्थितमिति चलस्वभावम् इस व्याख्या से स्पष्ट किया है। वायुरूप द्रव्य ऊपर नीचे एवं दसों दिशाओं में फैल सकता है किन्तु घन तथा द्रव ऐसे नहीं फैल सक्ते अतः इसे चल कहा है। तीसरे अनासाद्य शब्द की व्याख्या 'चलत्वेनातिविडावहत्वेनेति मन्तव्यम्' ऐसी चक्रदत्त ने की हुई है। अर्थात् इस वायुरूप द्रव्य का आसादन एवं बुद्धि गम्यत्व सरलता से न होने का कारण यही है कि यह चल अर्थात् चंचल है स्थिर नहीं है। तथा इसके अवयव अनिविड अर्थात् एक दूसरे से जुटे हुए (Viscous) नहीं हैं जैसे कि किसी भी वायुरूप द्रव्य के नहीं होते।

वातद्रव्य का अमूर्तित्व—

अमूर्त शब्द का अर्थ मूर्तिरहित एवं आकारहीन (Formless) ऐसा किया जाने का संभव टीकाकारों का ध्यान में अवश्य आया। अतएव अव्यक्त

तथा अमूर्त दोनों का स्पष्टीकरण अदृश्यत्वम् इस शब्द से दोनों भिन्न टीकाकारों (डल्लन तथा चक्रदत्त) ने किया है यह बात विशेष ध्यान में रखने योग्य है। अर्थात् यह द्रव्य नेत्रेन्द्रियगोचर नहीं है परन्तु आकार रहित नहीं है साकार है अतएव इन्द्रियगोचर है। आधुनिक, पदार्थविज्ञान शास्त्र का अध्ययन करने से अवगत होता है कि बहुलांश वायुरूपद्रव्य जो शरीर के भीतर पाये जाते हैं उदाहरणार्थ उज्जन (Oxygen) नत्रजन (Nitrogen) कर्बवायु (Carbolic Acid Gas) आदि सब अदृश्यमूर्ति हैं। दृष्टिगोचर नहीं होते, परन्तु स्पर्शनेन्द्रिय गोचर अवश्य हैं। अतएव आयुर्वेदीय वातद्रव्य इन में कौन से हैं इनका विचार करें।

क (१) अपानवायु

अपानवात का उत्पत्तिस्थान—

अपान का मूलार्थ गुदद्वार है। अपानोऽपानगः ऐसा अष्टांगहृदयकार लिखते हैं। अर्थात् जिस वात का निःसरण गुदद्वारा होता है उसे अपान शब्द नियोजित है। अब यह अपान से निकलनेवाला वात द्रव्य शरीर में किस स्थान में उत्पन्न होता है इसका विचार करें।

ग्रहणीचिकित्साध्याय में अन्न विपरिणमन क्रिया का विवरण चरक में किया है। उसमें से कफ तथा पित्तद्रव्यों की उत्पत्ति महोस्रोत में कहां होती है इसका विवेचन अ (१) तथा ब (१) विभागों में कर चुके हैं। उसके आगे आचार्य लिखते हैं :—

पक्वाशयंतुप्राप्तस्य शोष्यमाणस्य वन्हिना।
परिपिण्डित पक्वस्य वायुः स्यात्कटुभावतः॥ च० चि० १५-११

आमाशय में क्लेदक कफ का तथा पक्वामाशयमध्य में पाचक पित्त का अन्न में मिश्रण होने के पश्चात जब यह अन्न पक्वाशय में पहुँचता है तब वहां उसका सम्पूर्ण विपाचन कार्य समाप्त होकर उसी स्थान में सूक्ष्म स्रोतसों द्वारा सारभूत अन्नरस (Chyle) का संशोषण कार्य आरम्भ होता है। यह साररस दूध के समान श्वेत तथा द्रव द्रव्य होने के कारण विपाचितान्न में से जब यह द्रव पदार्थ अलग हो जाता है तब वह अन्न परिपिण्डित अथवा घन रूप (गाढ़ा) रह जाता है। इस संशोषण क्रिया में क्लेदक कफ पाचकपित्तादि द्रव द्रव्यों के रासायनिक परिणाम (Chemical Action) के कारण एक वायु रूप द्रव्य उत्पन्न होता है, जिस प्रकार सोडा में कोई अम्ल मिलाने से Carbonic Acid Gas नामक वायु बनता हुआ हम अनुभव करते हैं।

आधुनिक शारीरक्रिया विज्ञान द्वारा ज्ञात होता है कि हम लोग जो शाक, धान्य, शिम्बी आदि वानस्पत्य (Vegetable) आहार करते हैं उनमें Starch, Glucose, Lactose, आदि द्रव्य होते हैं। उन पर महास्रोत में उत्पन्न होने वाले अनेक स्रावों (Secretions) का रासायनिक संस्कार होकर जो शकृत् में परिणत होनेवाले अनेक द्रव्य बनते हैं उसी रासायनिक क्रिया में (Carbon Dioxide) नामक एक वायुरूप द्रव्य उत्पन्न होता है। इस विषय के रसायनशास्त्रीय समीकरण (Chemical Reaction Equation) उद्धृत करके मैं आपका बहुमूल्य समय नहीं लेना चाहता। जिन महाशयों को उनकी आवश्यकता हो उन्हें उस विषय से परिचित कराया जा सकता है। इसी वायु को अपान वायु संज्ञा दी हुई है।

यह वायुद्रव्य रासायनिक क्रिया का फलस्वरूप द्रव्य होने के कारण आचार्यों ने उपरिनिर्दिष्टवचन में 'वायुःस्यात्' ऐसी सार्थक शब्दयोजना की हुई है। कफ तथा पित्तद्रव्यों की उत्पत्ति को 'उदीर्यते' शब्द का प्रयोग तथा वायु की उत्पत्ति को 'स्यात्' शब्द का प्रयोग बड़ा अन्वर्थक है। कफ तथा पित्त द्रव्य अन्य ग्रंथियों से स्वयं बाहर निकलते (Secrete) हैं किन्तु वायु द्रव्य रासायनिक संस्कार (Chemical Reaction) के फलस्वरूप उत्पन्न होता है यह भेद स्पष्ट करने के लिये भिन्न शब्द योजना की गई है। इस पर से आचार्यों की सूक्ष्मदृष्टि तथा उत्पत्ति प्रकारों के भेद का याथातथ्य वर्णन का परिचय होकर उनके सम्बन्ध की आदर बुद्धि वृद्धिगत होती है।

वातविषयक अशास्त्रीय विचारधारा—

महास्रोतसान्तर्गत कफ तथा पित्त द्रव्य शरीर में उदीरित होते हैं अतः उन्हें पाश्चिमात्य शास्त्रीय (secretions) संज्ञा योग्य ही है। परन्तु ये उदीरित द्रव्य हैं अतः वात द्रव्य भी उदीरित द्रव्य होना ही चाहिये इस प्रकार का अशास्त्रीय आग्रह 'महासम्मेलन पत्रिका' में प्रसिद्ध लेखों में पाया जाता है। यह विचारधारा किसी भी शास्त्रीय आधार पर अधिष्ठित न होने के कारण उसकी उपेक्षा करना ही योग्य होगा।

अपान वायु का कार्य—

यह अपान वायु (Carbonic Acid Gas) जब तक योग्य प्रमाण (Normal) में उत्पन्न होता रहता है तब वह धमनी चक्र (Nervous-System) को सुस्थिति में रखता है तथा धमनियों के कार्यों को भली भांति चलाता है। वालर (Waller) नाम के संशोधक ने इस वायु के धमनीचक्र पर होने वाले परिणाम के विषय में संशोधन किया है।

He (waller) finds that the effect of carbonic acid in jarge doses is to cause a dimunition and finally the disappearance of the activity of the nerves while small doses of carbonic acid increase the action currents.

इस वायु के धमनीचक्र पर होने वाले परिणामों के कारण ही इस वायु के संपूर्ण कार्य धमनीचक्र के कार्य हैं। अतएव चरक सू० १२८ में वर्णन किये हुए 'वायुस्तंत्रयंत्रधरः- प्रवर्तकश्चेष्टानामुच्चावचानां- आयुषोऽनुवृत्ति प्रत्ययभूतो भवत्यकुपितः इत्यादि सब धमनीचक्र के कार्य तथा

तंचलः। उत्साहाच्छ्वासनिःश्वासचेष्टावेगप्रवर्तनैः।
सम्यग्गत्याच धातूनामक्षाणां पाटवेन च ॥
अनुगृण्हात्यविकृतः। अ० हृ० सू ११-२

इस सूत्र में वाग्भट ने वर्णन किये हुए कार्य वायु के कार्य इस दृष्टि से वर्णित हैं। जिस प्रकार राज्यकारभार चलाने वाले कार्यकर्ताओं (Officers) पर नियन्त्रण राजा का होता है उसी प्रकार इस धमनीचक्र पर नियंत्रण इसी वायु का होता है।

वृद्ध अपानवात नाशक प्रधान उपक्रम—

जब अनेक वाह्यकारणों से तथा मिथ्या आहार से इस अपानवायु की उत्पत्ति विशेष प्रमाण में होकर उसकी वृद्धि होती है तब उसे शरीर से बाहर निकालने का सब से श्रेष्ठ उपाय चरकाचार्य सू० २०-१३ में दिखाते हैं—

आस्थापनानुवासनं तु खलु सर्वभोपक्रमेभ्यः वातेप्रधानतमं मन्यन्ते भिषजः। तद्धि आदित एव पक्वाशयमनुप्रविश्य केवलं वैकारिकं वातमूलं छिनत्ति। तत्रावजितेऽपिवाते शरीरान्तर्गताः वातविकाराःप्रशान्तिमापद्यन्ते, यथावनस्पतेमूले छिन्ने स्कन्धशाखावरोहकुसुमफलपलाशादीनां नियतो विनाशस्तद्वत्।

प्रिय वैद्यबन्धुओ, आस्थापनानुवासन वस्तिद्वारा जिस वृद्धवात का पक्वाशय से नाश होता है ऐसा आचार्य यहां कहते हैं यह क्या मन आत्मा के समान अमूर्तद्रव्य होगा? यदि नहीं तो 'तत्रवायुः सदा सूक्ष्मःअप्रत्यक्षः विद्युच्छक्तिवदतीन्द्रियः' यह विधान कहां तक शास्त्रसम्मत हो सकता है? क्या विद्युच्छक्ति के भी रूक्ष लघु शीतादिगुण कहीं वर्णन किये हुए हैं?

अपानवायु ही सब शारीरवातविकारों का मूल है। अतएव उस कुपित वात द्रव्य को यहीं से शरीर के बाहर करना योग्य है।

वातद्रव्य की प्रशंसा—

इसी कारण वस्ति चिकित्सा ही संपूर्ण चिकित्सा है ऐसा हम आस्थापना नुवासन का महत्व चरक में वर्णन किया है (च०सि० १-३८, ३६)

शाखागताः कोष्ठगताश्चरोगा मर्मोर्ध्वसर्वावयवांगजाश्च ।
ये सन्ति तेषां नहि कश्चिदन्यो वायोःपरं जन्मनिहेतुरस्ति ॥
विण्मूत्रपित्तादिमलाशयानां विक्षेपसंहारकरः सयस्मात् ।
तस्यातिवृद्धस्य शमाय नान्यद्वस्तिविना भेषजमस्ति किंचित् ॥
तस्माच्चिकित्सार्धमितिब्रुवन्ति कृत्स्नांचिकित्सामपिवस्तिमेके ।

वास्तिचिकित्सा का महत्व—

रोग उत्पन्न करने में पक्वाशयगत अपान वात द्रव्य का इतना महत्व होने के कारण ही वातकलाकलीयाध्याय (च०सू० १२) में इसको 'सुखासुखयो र्विधाता...वायुस्तेभगवानिति' इन शब्दों में प्रशंसा की हुई है। तथा इस प्रशंसा से चिकित्साशास्त्र में क्या लाभ हो सकता है ऐसा प्रश्न उपस्थित करके योग्य उत्तर भी दिया है।

मरीचि कहते हैं—'यद्यप्येवमेतत् किमर्थस्यास्यवचाने विज्ञानेन सामर्थ्यमस्ति भिषग्विद्यायां भिषग्विद्यापधिकृत्येयं कथा प्रवृत्ता इति'। प्रश्न का उत्तर मननीय है।

वायोर्विद उवाच—'भिषक् पवनमतिबलमतिपरमतिशीघ्रकारित्व मात्ययिकं चेन्नानुनिशम्येत, सहसाप्रकुपितमतिप्रयतः कथमग्रेभिरक्षितुमभि-धास्यति प्राग्रेवैनमत्ययभयात् वायोर्यथार्था स्तुतिरपि भवत्यारोग्याय...परमायुः प्रकर्षाय चेति'

इससे स्पष्ट है कि भगवान्, विष्णु, विभु इत्यादि विशेषण केवल स्तुतिरूप हैं जिनसे शरीरान्तर्गत वातद्रव्य के शक्ति का पूर्ण परिचय हो सके

इस प्रकार महास्रोतसांतर्गत पक्वाशय में उत्पन्न होने वाले अपान संज्ञक वात द्रव्य का विस्तृत विवरण किया। अब बचे हुए चार वातों का संक्षेप में दिग्दर्शन करें।

(क) प्राणवायु—

वायुर्यो वक्त्र संचारी सप्राणो नाम देहधृक्। सु० नि० १-१३।

उच्छ्वास द्वारा जिस बाह्यवायु (हवा) को हम मुख और नासिका से भीतर प्रवेश कराते हैं वही प्राणवायु है। इसमें ओज्जन (Oxygen) का प्रमाण विशेष रहता है जो प्राण रक्षण के लिये परमावश्यक द्रव्य है।

प्राणायामक्रिया में एकनामिकारंध्रद्वारा जिस वायु को ऊपर की ओर खींचते हैं उसे प्राण संज्ञा है तथा जो दूसरे नासिका रंध्र द्वारा छोड़ते हैं उसे अपान संज्ञा है। कारण यही है कि प्राण वायु में उज्जन का प्रमाण अधिक होता है और छोड़े हुए वायु में अपान अथवा (Carbon-di-oxide) कर्बवायु का इसी से गीता में कहा है :—

प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ। गीता अ० ६

अर्थात् नासाभ्यन्तरचारी अपान तथा पक्वाशयगत अपान दोनों एक ही प्रकार के वायु हैं निदान कर्ब वायु का अस्तित्व दोनों में अवश्य है।

इसी प्रकार (क) ३ उदान (क) ४ व्यान तथा (क) ५ समान भी कोई विशेष मिश्रण के वायु हैं जिनका विवरण किसी अन्य समय दिया जायगा।

पूना कमेटी की रिपोर्ट—

चोपडा समिति के तत्वावधान में पूना में जो त्रिदोष विषयक निर्णय करनेवाली परिषद् आमंत्रित की गई थी उसने अपने निर्णायक विवेचन में पांच प्रकार के कफ तथा पित्त कौन से द्रव्य हैं इसका दिग्दर्शन तो अवश्य किया है। परन्तु पांच प्रकार के वात कौन से द्रव्य हैं इस विषय में मौन धारण किया है यह बात ध्यान में रखने योग्य है। इस देश के आयुर्वेदीय रत्न यदि ऐसे महत्व के विषय की उपेक्षा करें तो आयुर्वेद की उन्नति किस प्रकार होगी ?

(१५) दोष विषयक उपसंहार

दोष संज्ञक मूल पदार्थों के विषय में नीचे लिखी हुई बातें ऊपर के विवरण में निश्चित की गईं।

(१) त्रिदोष पांचभौतिक सचेतन द्रव्य हैं।

(२) शरीर से उत्पन्न होते हैं।

(३) अन्न पर रासायनिक संस्कार (Chemical Action) करने के पश्चात अन्न का विभाजन प्रसादसंज्ञक रसरक्तादिधातु एवं किट्टसंज्ञक मलाख्य धातुओं में करते हैं।

(४) योग्य प्रमाण में इनकी उत्पत्ति होती रहे तो वे अन्न रस में मिश्रीभूत होकर रसरक्त संवहन के साथ शरीर के सूक्ष्मातिसूक्ष्म स्रोतसों में संचार करते हुए शरीर का धारण पोषण करते हैं तथा अपने अपने द्रव्यगत प्रभाव के कारण शरीर को स्वस्थ रखते हैं।

(५) यदि कालबुद्धिन्द्रियार्थों के हीनमिथ्यातियोगों के कारण इनके उत्पत्ति के प्रमाण में न्यूनाधिक्य होता है तो वे रोग उत्पन्न करते हैं।

कुपितानां हि दोषाणां शरीरे परिधावताम्।
यत्र संगस्तु स्ववैगुण्या द्व्याधिस्तत्रोपजायते ॥ सु० स० २४-१०-
व्यानेनरसधातुर्हि विक्षेपोचितकर्मणा।
युगपत्सर्वतोऽजस्रं देहे विक्षिप्यते सदा ॥ ३६
क्षिप्यमाणः खवैगुण्याद्रसः सज्जति यत्रसः।
करोति विकृतिं तत्र खे वर्षमिव तोयदः ॥ ३७
दोषाणामपि चैवं स्यादेकदेशप्रकोपणम्। च. चि० १५-

(६) जिस प्रकार सत्कार्यवाद के अनुसार वटवृक्ष का हर एक अवयव पत्ते, फल, त्वचा, जटा आदि-वटवृक्ष के बीज में प्रारम्भ से रहा करता है, उसी प्रकार पिता के शुक्र में तथा माता की रज में वात पित्तकफ संज्ञक तीनों सचेतन द्रव्य भी अन्य दस धातुमलों के बीज के साथ रहा करते हैं। जिस प्रमाण में मातापिता के शरीरों में इन द्रव्यों का अस्तित्व होगा, उसी प्रमाण में (Proportion) उनके शुक्रशोणितों में भी इन दोष संज्ञक द्रव्यों का अस्तित्व होगा। अतएव गर्भ के शरीर में भी इसी मिश्रीभूत प्रमाण में वातपित्त कफ रहेंगे। इसी से वाग्भटाचार्य कहते हैं—

शुक्रार्तवस्थैर्जन्मादौ विषेणेवविषक्रिमेः।
तैश्च तिस्रः प्रकृतयो ····· । अ. हृ सू० १ ।

(७) शरीर में दोष द्रव्यों का कार्य चक्रवत् चलता है।

संतत्याभोज्यधातूनां परिवृत्तिस्तु चक्रवत्।

अन्न महास्रोत में जाते ही क्रमशः आमाशय में कफ, ग्रहणी में पित्त तथा पक्वाशय में वात द्रव्यों की उत्पत्ति होती है। इन द्रव्यों का संस्कार अन्न पर होकर रसरक्तादि धातुएं बनती हैं। रसरक्त का संचार समग्र शरीर में होकर शरीर के अवयवों में जहां जिस वस्तु की कमतरता होती है वहां उसकी पूर्ति होती है। अवयव पुष्ट होने के पश्चात् जब दुबारा अन्न महास्रोत में आता है तब उन्हीं अवयवों से पुनश्च कफपित्तवात द्रव्यों की उत्पत्ति होती है।

विविधाशीतपीतीयाध्याय (च. सू० २८) में तथा गृहणी दोष चिकित्साध्याय (च. चि. १५) में चरक ने यह विषय अत्यन्त विवेचनपूर्ण पद्धति से वर्णन किया है। विस्तारभय से यहां उद्धृत नहीं किया जा सकता।

एवं त्रिदोष क्या पदार्थ हैं तथा रोगोत्पत्ति से उनका क्या सम्बन्ध है इस प्रथम विभाग का साधार विवरण समाप्त हुआ। अब कीटाणु क्या पदार्थ हैं इस सम्बन्ध में विवेचन करें।

द्वितीय विभाग
'कीटाणु क्या पदार्थ हैं'

कीटाणुवाद

(१) अणुवीक्षण यंत्र की खोज से लाभ—

जिस प्रकार अणुबांब (Atom Bomb) के आविष्कार के कारण आज संसार की युद्ध विषयक परिस्थिति में विलक्षण परिवर्तन हो रहा है उसी प्रकार अणुवीक्षणयन्त्र (Microscope) की खोज के कारण लगभग तीन शताब्दि पूर्व व्याधिविषयक निदान की पद्धति में आधुनिक चिकित्साशास्त्र में (Modern Medical Science) एक नया प्रकरण प्रारंभ हुआ। इस यन्त्र द्वारा किसी भी सूक्ष्म वस्तु का प्रतिबिम्ब (Image) २०० से १००० गुने तक बड़ा देखने का साधन शास्त्रज्ञों की प्रत्यक्षज्ञान शक्ति बढ़ाने में समर्थ हुआ।

(२) जीव सृष्टि विषयकनियम —

'जीवो जीवस्य जीवनम्' यह सृष्टि का नियम है। विशाल प्राणी छोटे प्राणियों को भक्षण करके अपना जीवन चलाते हुए हम देखते हैं। साथ ही यह भी देखा जाता है चींटी के समान अत्यन्त छोटे परन्तु असंख्य जीव यदि एक त्रित होकर किसी कार्य में जुट जाते हैं तो हाथी समान बड़े प्राणी का भी प्राणनाश करने में समर्थ होते हैं। इसी अनुभव को सन्मुख रखकर शास्त्रज्ञों ने विचार किया कि उपरि निर्दिष्ट नियम सूक्ष्म सृष्टि में भी पाये जाते हैं या नहीं इसका निर्णय किया जाय। इसी उद्देश से अणुवीक्षण यन्त्र द्वारा शरीर के सूक्ष्मातिसूक्ष्म विभाग का अवलोकन करना प्रारम्भ हुआ। तदनुसार ही आज उपलब्ध होने वाले सूक्ष्म तथा स्थूल शारीरशास्त्र(Anatomy) एवं शारीरक्रिया विज्ञान शास्त्र (Physiology) के प्रचण्ड ग्रंथों ने हमारा ज्ञान संवर्धित किया है।

(३) कीटाणु क्या वस्तु है—

इसी विशाल ज्ञान का महत्व का अंग कीटाणुवाद है जब किसी जीव धारी प्राणी में लक्षण समुच्चय द्वारा कोई व्याधि प्रतीत होने लगती है तब

उसके रक्त (Blood) निष्ठीविका (Sputum) मूत्र (Urine) मल (Faeces) आदि शरीर पदार्थों के सूक्ष्म अंशों का अवलोकन करने से उनमें से किसी एक पदार्थ में विशिष्ट प्रकार के कीटाणु दिखाई देते हैं जो विभिन्न व्याधियों में विभिन्न आकार के हुआ करते हैं। विशिष्ट लक्षणात्मक एक ही व्याधि जब अनेक रुग्णों में देखी जाती है तब उसके विशिष्ट शरीर विभागांश के सूक्ष्मांश में उसी एक प्रकार के कीटाणु अणुवीक्षणयंत्र द्वारा दृष्टिगोचर होने के कारण यह अनुमान होता है कि उस विशिष्ट लक्षण-व्याधि के वही कीटाणु मूलतः निदान (कारण) रूप हैं। उदाहरणार्थ यदि ज्वर, कास तथा रक्तसंसृष्ट कफनिष्ठीवन। (ज्वरकासासृगामयैः) इन तीन समुच्चयात्मक लक्षणों से युक्त व्याधि से पीडित अनेक रुग्णों की निष्ठीविका का अवलोकन अणुवीक्षणयंत्र द्वारा किया जावे तो उनमें एक ही प्रकार के विशिष्टाकार के लम्बे जन्तु पाये जाते हैं। अतएव निश्चित निदान किया जाता है कि वे सब ही रुग्ण राजयक्ष्मा संज्ञक (T. B. of the lungs) एक ही व्याधि से पीडित हैं। इसी प्रकार संशोधन द्वारा अनेक व्याधियों के कीटाणुओं की निश्चिती की गई है। तथा इन सब व्याधियों के समुदाय में (Bacterial Diseases) अन्तर्भूत किया जाता है। ये कीटाणु अनेकविधि संसर्ग द्वारा एक जीव से दूसरे जीव में भी प्रवेश कर जाते हैं अतः उनसे उत्पन्न व्याधि को संक्राम रोग (Infectious Diseases) संज्ञा भी दी जाती है।

(४) कीटाणु विषयक शंका—

संशोधनद्वारा यदि मानवीशरीर में होने वाले हर एक व्याधि का विशिष्ट कीटाणु निश्चित किया जा सकता तो अवश्यमेव सर्व व्याधि कीटाणुजन्य ही हैं ऐसा निश्चय होकर उस विषय में वाद या प्रश्न ही उपस्थित न होता। परन्तु शास्त्रज्ञों को आज जो साधन उपलब्ध हैं उनके द्वारा कई व्याधियों के कीटाणुओं का खोज बड़े परिश्रम पूर्वक करते हुए भी अभी सफलता प्राप्त नहीं हुई है। अतएव यह सिद्धान्त अभी केवल इनेगिने रोगों के निदान के सम्बन्ध में सीमित है। तथापि तद्विषयक संशोधकों का यही विश्वास है कि शास्त्रीय उपकरणों का क्रमशः विकास होने के पश्चात् जब हम एक वस्तु की प्रतिबिम्बाकृति दस हजार गुनी देख सकें तो हर एक व्याधि के कीटाणु निश्चित हो सकेंगे।

(५) कीटाणुवाद पर आक्षेप—

काल के उदर में आगे क्या होने वाला है इससे हमें आज कोई सम्बन्ध नहीं है। परन्तु जो परिस्थिति आज है उससे निश्चित होता है कि यह

कीटाणुवाद एक-परिसीमितवाद है जिसके अनुसार कीटाणु केवल कुछ रोगों में किसी एक रुग्णावस्था में कारणीभूत प्रतीत होते हैं। उन इनेगिने व्याधियों में भी व्याधि के पूर्व रूप में तथा रूप की प्रारम्भावस्था में जब लक्षण समुच्चय द्वारा तथा अन्य उपायों से उस व्याधि का निश्चय किया जा सकता है तब उन कीटाणुओं का अस्तित्व शरीर में होता ही है यह निश्चित रूप में सिद्ध नहीं किया जा सकता। अतएव इस वाद के सम्बन्ध में जो अनेक आक्षेप हैं उनका क्रमशः दिग्दर्शन करें।

(अ) न्यायशास्त्र के अनुसार दो पदार्थों में कार्य कारण सम्बन्ध तब ही निश्चित होता है जब उनमें सदैव व्याप्ति दिखाई जा सके तथा अव्याप्ति दोष न हो। उदाहरणार्थ इन्फ्लुएन्ज़ा (वातश्लेष्मज्वर) का कारण इन्फ्लुएन्ज़ा कीटाणु (Influenza bacilus) तब ही कहा जा सकेगा जब जहां जहां इस व्याधि के लक्षण दिखाई देते हों वहां इस रोग से पीडित मनुष्य की निष्ठीविका (Sputum) या नासिका के स्राव में निश्चय से इस कीटाणु का अस्तित्व सिद्ध हो सके। परन्तु प्रत्यक्षानुभव कुछ और ही पाया जाता है।

यह बात निश्चित हो चुकी है कि कई रुग्ण जिनका लक्षण द्वारा (Clinically) इसी व्याधि का निदान किया जाता है उनकी श्लेष्मा में इन्फ्लुएन्ज़ा कीटाणु का कहीं नाम तक नहीं दिखाई देता। तथा कई स्वस्थ मनुष्य ऐसे पाये जाते हैं कि जिन के नासिका या गले के स्राव में इन कीटाणुओं के झुण्ड के झुण्ड पाये जाते हैं, परन्तु उन्हें इस व्याधि का कोई भी लक्षण नहीं देखने में आता। अतएव ये कीटाणु रहते हुए व्याधि का अभाव तथा न रहते हुए व्याधि का अस्तित्व इस प्रकार की अव्याप्ति जब अनुभव की जाती है तब कीटाणु ही रोग का कारण है यह किस प्रकार निश्चित किया जाय ?

(ब) क्षय एक ऐसी व्याधि है कि उसका उपचार पूर्व रूप में तथा प्रथमावस्था (First Stage) में करना ही आवश्यक होता है। क्षय की प्रारम्भावस्था में क्षय कीटाणु नहीं दिखाई देते। जब वह व्याधि पूर्ण षड्रूप अथवा एकादशरूप धारण कर लेती है तब श्लेष्म परीक्षा में यह कीटाणु दिखाई देने लगते हैं। तब तक व्याधि असाध्य स्थिति में पहुंचती है। फिर इस विज्ञान से लाभ ही क्या हुआ ? यह कीटाणु ही कारण होता तो वह प्रारम्भावस्था में ही दिखना चाहिये। अतएव व्याधि प्रथम से रहते हुए किसी एक विशिष्टावस्था में ही कीटाणु की उत्पत्ति होती है यही मानना पड़ेगा। कीटाणु देखने पर व्याधि के विषय में निश्चय होता है इसमें

सन्देह नहीं। इस व्याधि विनिश्चय (Confirmation) की दृष्टि से चिकित्सा कार्य सुकर हो सकता है यह बात मान्य है परन्तु जब यह ज्ञान असाध्य स्थिति प्राप्त होने के पूर्व हो सके तो उससे लाभ उठाया जा सकता है। इसी कारण सर जेम्स मेकेन्ज़ी के समान बड़े शास्त्रज्ञ इस कीटाणु-वाद पर अवलम्बित निदान पद्धति पर (Laboratory Methods) विशेष निर्भर न रहते हुए लक्षणात्मक (clinical Methods) निदान पर रोग-निदान करने की शिफारिस करते हैं।

(क) मंथरज्वर(Typhoid) यदि कीटाणु जन्य ही है तब ज्वर का प्रारम्भ होते ही रक्त में कीटाणु दृष्टि-गोचर होना चाहिये। फिर इस व्याधि के निदान के लिये एक सप्ताह या अधिक समय तक ज्वरवेग का अनुबंध (Continuity of fever) देखने की क्यों आवश्यकता होती है।

(ग) कीटाणुरोग का कारण न होते हुए रोग की किसी एक विशिष्ट अवस्था में उनकी उत्पत्ति होती है। इसी कारण सर जेम्स गुडहार्ट से प्रसिद्ध प्रतिधन्वंतरि कहते हैं:— 'Pathology is still shifting. We have not yet reached finality. Even bacteria are probably results and not causes.

(६) क्षेत्रबीजवाद—

इस कीटाणु-वाद के सम्बन्ध से एक दूसरा वाद भी उपस्थित होता है। वह है क्षेत्र-बीज-वाद। शरीर रूपी क्षेत्र ऐसा है कि स्वस्थवृत्त का अवलंबन करके इसको सुस्थिति बनी रहे तो इसमें रोग-बीज चाहे जिस मार्ग से प्रवेश करे उस बीज की वृद्धि न हो सकेगी। देखने में आता है कि कई मनुष्यों के रक्त, निष्ठीविका, मूत्रादि में अनेक व्याधियों के कीटाणु सूक्ष्म प्रमाण में कई वर्षों तक रहा करते हैं परन्तु रोग उत्पन्न नहीं कर सकते। परन्तु दिन चर्यादि नियमों का उल्लंघन होते ही व्याधिप्रादुर्भाव होता है। ऐसी अवस्था में रोग का कारण क्षेत्र कहा जावे अथवा कीटाणु। यदि कीटाणु है तो क्षेत्र सुस्थिति में रहते हुए रोगप्रादुर्भाव क्यों नहीं हुआ? दूसरे कीटाणु इतने सूक्ष्म हैं कि उनका शरीर से सम्बन्ध चाहे जब हो सकता है। अतएव क्षेत्र को सुस्थिति में रखकर रोगप्रादुर्भाव न होने देना ही साध्य हो सकेगा।

(७) आयुर्वेद में कीटाणुवाद का स्थान—

आयुर्वेद के अनुसार संपूर्ण रोगों के दो विभाग किये जाते हैं:—

द्विविधापुनः प्रकृतिरेषामागंतु निज विभागात्। च० सू० २०-३।

ये भेद प्रकृति अर्थात् प्रत्यासन्न कारण पर निर्भर हैं।

(१) मुखानि तु खल्वागन्तोर्नखदशनपतनाभिचारुभिशापा त्रिषगाभि-घातव्यधबन्धनवेष्टनपीडनरज्जुदहनशास्त्राशपिभूतोपसर्गादीनि।

(२) निजस्यतु मुखं वातपित्तश्लेष्माणां वैषम्यम्।

च० सू० २०-४ इसमें आगन्तु रोगों के जो अनेक कार दिये हुए हैं उन्हीं में एक कीटाणु संज्ञक कारण का भी अन्तर्भाव भूतोपसर्ग में हो सकता है कारण ये कीटाणु आधुनिक विचार परपरा के अनुसार शरीर से बाहर रहने वाले अनक द्रव्यों के संसर्ग से शरीर द्रव्यों मे तथा विभिन्न शारीरावयवों में प्रवेश करते है तथा शारीरद्रव्यों पर अपना निर्वाह तथा संख्या वृद्धि करते हैं। उदाहरणार्थ प्लेग के कीटाणु चूहे से उस पर बैठने वाले पिस्सू के रक्त में आते हैं। यही पिस्सू जब वहा से उड़ कर मनुष्य को काटता है तब उस के रक्त से मनुष्य में पहुंच कर व्याधि उत्पन्न करते हैं। क्षय तथा वातश्लेष्म ज्वर के कीटाणु कफ के संसर्ग से तथा श्वासोच्छ्वास द्वारा शरीर पर आक्रमण करते हैं। विशुचिका कीटाणु पानी अथवा सड़े फल या मिठाई द्वारा मानवी शरीर में पहुचते हैं। अर्थात् कीटाणु जन्य व्याधि आगंतुविभाग में ही अंतर्भूत होती है।

सूत्र में 'भूतोपसर्गादीनि' के स्थान में 'भूतोपसर्गकीटाणवादीनि' कहने में कोई आपत्ति न होगी।

त्रिदोषसिद्धान्तानुसार आगन्तु तथा निज रोग में चिकित्सा की दृष्टि से बहुत सूक्ष्म भेद है।

आगन्तुर्हि यथापूर्वं समुत्पन्नः जघन्यं वातपित्तश्लेष्मणां वैषम्यमापादयति, निजेतु वातपित्तश्लेष्मणः पूर्वं वैषम्यमापद्यन्ते जघन्यं व्यथाभमिनिर्वर्तयन्ति।

यद्यपि आगन्तु व्याधियों में पीड़ा प्रथम होती है, दोषवैषम्य पश्चात् होता है तथापि वह वैषम्य पीड़ा के अव्यवहित बाद ही होने के कारण चिकित्सा की दृष्टि से दोष वैषम्य हटाकर दोषसाम्य उत्पन्न करने का कार्य दोनों में समान है।

इस विचार से देखा जाय तो कीटाणुवाद आयुर्वेद शास्त्र के रोगकारणों का एक छोटा सा प्रविभाग कहा जा सकता है। आगंतुरोगों के बीसों कारणों में एक यह भी है इसके अतिरिक्त उसे विशेष महत्व नहीं है।

संक्रामक रोगों का कीटाणु आयर्वेद में परंपरा से मान्य किया है।

प्रसंगाद्गात्र संस्पर्शान्निःश्वासात्सहभोजनात्।
सहशय्यासनाच्चापि वस्त्रमाल्यानुलेपनात्॥
कुष्ठं ज्वरश्च शोषश्च नेत्राभिष्यन्द एव च।

औपसर्गिक रोगाश्च संक्रामन्ति नरान्नरम्॥ सु० नि० ५। ३२।
इस सूत्र में जो औपसर्गिक रोगों के संक्रमण किया है वह इसी कारण कि इन व्याधियों के सूक्ष्म कीटाणु तत्संसर्ग द्वारा एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में प्रवेश करते हैं।

(८) आयुर्वेद का अंतिम सिद्धान्त—

रोग का कारण कुछ भी हो तथा रोग निज हो अथवा आगंतु हो सब का परिणाम तात्काल दोष विकृति में होता है तथा चिकित्सा भी इसी दोष विकृति का नाश से करनेवाली करना होती है। अतएव इस कीटाणुवाद की ओर आयुर्वेद इतने महत्व से नहीं देखता जितना कि आधुनिक चिकित्साशास्त्र।

आयुर्वेदीय चिकित्सा के लिये जो बातें आवश्यक होती हैं वे ये हैं।

तस्माद्विकारप्रकृती रधिष्ठानान्तराणिच।
बुद्ध्वा हेतुविशेषांश्च शीघ्रं कुर्यादुपक्रमम्॥
द्रव्यं देशं बलं कालमनलं प्रकृतिंवयः।
सत्वसात्म्यं तथाहारमवस्थाश्च पृथग्विधाः॥
सूक्ष्मसूक्ष्माः समीक्ष्यैषां दोषौषधनिरूपणे।
यो वर्तते चिकित्सायां न स्खलति जातुचित्। अ. हृ. सू०

इनमें विकार प्रकृति (अर्थात् दोषवैषम्य) जानते ही रोग का नाम न समझे तो भी चिकित्सा की जासकती है यही आयुर्वेदशास्त्र का महत्व का सिद्धान्त है। फिर कीटाणुज्ञान की आवश्यकता कहां?

(९) त्रिदोष तथा कीटाणुओं का सम्बन्ध

कीटाणुवाद के (ग) आक्षेप में सर जेम्स गुडहार्ट महोदय ने जो शंकायुक्त कथन किया है वही आयुर्वेदानुसार निश्चित सम्बन्ध दोष तथा कीटाणुओं में है। आप कहते हैं कि Bacteria are probably results and not causes. आयुर्वेद कहता है कि Bacteria are ersults and not causes. त्रिदोष तथा कीटाणुओं का सम्बन्ध यही है। कीटाणु कार्य (result) हैं, त्रिदोष विकृति कारण है। प्रथम त्रिदोष वैषम्य पश्चात् कीटाणु। दोषवैषम्य के किसी एक विशेष आगामि क्रियाकाल में कीटाणु उत्पन्न होते हैं। जिस प्रकार कुपित दोष अन्त में मलभूत होकर शरीर से बाहर फेंके जाते हैं इसी

प्रकार दोष वैपम्य के किसी एक अवस्था में कीटाणु रूप त्याज्य वस्तु शरीर में उत्पन्न होती है।

बहुतांश कीटाणुजन्य व्याधियों में ज्वर अवश्य होता है। आयुर्वेदीय चिकित्सा का 'ज्वरादौलंघनंकुर्यात्' मूल सूत्र है। इस आदेश का कारण यही है कि बहुतेक व्याधियां साम (आमयुक्त) होती हैं। लंघन के कारण आम का पाचन होता है। तथा आम के कारण उत्पन्न होनेवाले एवं वृद्धि को प्राप्त होनेवाले कीटाणुओं का नाश होता है। लंघन से कीटाणु उत्पन्न होने तक की दोषवैपम्य की अवस्था ही नहीं आने पाती। अतः त्रिदोष सिद्धान्त की तुलना में कीटाणुवाद उपेक्षणीय है।

अंत में इस शास्त्रचर्चा परिषद् की सफलता के लिये आवश्यक प्रार्थना करके भाषण समाप्त करता हूँ।

सहनाववतु। सहनौ भुनक्तु। सहवीर्यं करवावहै। तेजस्विनावधीत-मस्तुमाविद्विषावहै॥

समानीव आकूतिः समानाहृदयानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथावः सुसहासति॥

आयुर्वेद अनुसन्धान परिषद

अध्यक्ष का महत्वपूर्ण भाषण

निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के अवसर पर १६ फरवरी के प्रातःकाल ८ बजे से १२ बजे तक मद्रास के केप्टिन श्री जी० निवासमूर्ति बी० ए० बी०एल० एम० बी० एण्ड सी०एम० वैद्यरत्न की अध्यक्षता में आयुर्वेद अनुसंधान परिषद् का भी अत्यन्त महत्वपूर्ण अधिवेशन हुआ, जिसका उद्घाटन मद्रास के डा० सी० जी० पंडित ने किया था। विभिन्न प्रान्तों से पधारे हुये प्रमुख विद्वान् वैद्यों ने इसमें भाग लेकर इसको प्रतिनिधियों के लिए बहुत उपयोगी बना दिया। आयुर्वेद के अष्टांग स्वरूप की उन्नति की लिये क्रियात्मक प्रस्तावों पर उनके अत्यन्त विवेचनात्मक तथा विश्लेषणात्मक भाषण हुये। डा० जी० एस० पंडित और अध्यक्ष श्री निवासमूर्ति के भाषणों के अलावा सौराष्ट्र के स्वास्थ्य विभाग के डायरेक्टर डा० प्राणजीवन मेहता, मद्रास के वैद्य डा० लक्ष्मीपति, बम्बई के वैद्यरत्न श्री शिवशर्मा, राजस्थान के स्वास्थ्य विभाग के डिप्टी डायरेक्टर वैद्यरत्न श्री प्रतापसिंहजी, कलकत्ता के कविराज बैजनाथसिंह, हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस के कविराज शिवदत्तजी शुक्ल, श्री अत्रिदेवजी आयुर्वेदालंकार, कलकत्ता के श्री भागीरथजी स्वामी आयुर्वेदाचार्य, जबलपुर के कविराज श्री दिव्येकरजी आयुर्वेदाचार्य, बेगूसराय (बिहार) के कविराज श्री रामरक्षजी पाठक, पीलीभीत के कविराज श्री विश्वनाथजी द्विवेदी, जबलपुर के कविराज श्री मनीषीजी आयुर्वेदाचार्य तथा झांसी के श्री रघुनाथ ...यक धुलेकर आदि ने अपने विचार प्रगट किये। प्रायः सभी ने आयुर्वेद के मूलसिद्धांतों का वैज्ञानिक विवेचन किया और आयुर्वेद के प्रति अनुसंधानात्मक प्रवृत्ति को जागृत करने पर जोर दिया। आयुर्वेद की वर्तमान चिकित्सा पद्धति के साथ आयुर्वेद की तुलनात्मक व्याख्या करते हुए मानव जीवन के लिए उसकी उपयोगिता और उपादेयता पर प्रकाश डाला। वैद्यरत्न श्री शिवशर्माजी ने आज के पाश्चात्य चिकित्सकों को आयुर्वेद के प्रति अनुसंधानात्मक प्रवृत्ति अपनाने के सम्बन्ध में सलाह देते हुए उनसे निषेधात्मक प्रवृत्ति और नकारात्मक दृष्टिकोण छोड़ने की अपील की। अन्य वक्ताओं ने आयुर्वेद द्वारा ग्रंथों में दी जानेवाली सेवा का उल्लेख करते हुए औषध निर्माण के सम्बन्ध में अनेक उपयोगी सुझाव उपस्थित किये।

उद्‌घाटनकर्ता का भाषण

पिछले वर्षों से आयुर्वेद के प्रति लोगों की बढ़ती हुई दिलचस्पी और आत्मीयता की एक झांकी को हम देख रहे हैं और लोगों की यह भी तीव्र इच्छा है कि आयुर्वेद की चिकित्सा पद्धति को दृढ़ आधार पर पुनर्जीवित किया जाय। पर मैं यह अनुभव करता हूँ कि असली मुद्दों पर ध्यान न देकर और अनेक मामलों में व्यर्थ का विवाद उठाया गया है, जिसमें पक्ष-विपक्ष में परस्पर विरोधी विचार बहुत तीव्रता के साथ प्रगट किये गये हैं। वैद्यों के सम्बन्ध में भी ऐसी ही विचारधारा से काम लिया गया है, फिर भी यह सन्तोषजनक है कि आयुर्वेद के सम्बन्ध में ठोस आधार पर अनुसंधान करने के सम्बन्ध में न केवल वैद्यों में किन्तु आधुनिक चिकित्सा पद्धति के आधार पर डाक्टरीय पेशे में लगे हुये लोगों और साधारण जनता में भी सर्वथा एक मत है। आयुर्वेद के सम्बन्ध में अनुसन्धान करने के लिये एकमत होते हुए भी यह किस प्रकार किया जाय, के बारे में सब एक मत नहीं हैं।

अनुसन्धान क उद्देश्य के संबन्ध में भी कोई विशेष मतभेद नहीं है सब यह चाहते हैं कि सदियों पुरानी इस पद्धति को संदेहास्पद स्थिति से ऊपर उठाया गया है और उसके मूलभूत सिद्धान्तों को वैज्ञानिक रूप दिया जाय, जिससे कि उसे आज कल के वैज्ञानिक भी स्वीकार कर सकें। इसी उद्देश्य से चोपड़ा कमेटी ने अनुसन्धान के सम्बन्ध में कुछ निश्चित-ब्योरा भी उपस्थित कर दिया है। जैसे कि साहित्यिक अनुसन्धान, क्लीनीकल अनुसन्धान और रासायनिक अनुसंधान आदि। हमारे सामने समस्या यह है कि इन सब भिन्न-भिन्न मामलों में अनुसन्धानका काम कैसे किया जाय और उनमें एकरूपता कैसे लाई जाय। यदि मैं कुछ सुझाव पेश करने का साहस कर सकूं तो मैं यह कह सकता हूँ कि क्लीनीकल अनुसन्धान के सम्बन्ध में हमें अपने सब प्रयत्नों का केन्द्रीय करण करना चाहिये। जब हम साहित्यिक अनुसंधान के सम्बन्ध में बात करते हैं तो हमारा मतलब केवल इतना ही नहीं होना चाहिये कि आयुर्वेद के सम्बन्ध में प्राप्त समस्त पुस्तकों का संपादन किया जाय, जिनमें कि हस्त लिखित वे ग्रन्थ भी शामिल किये जाय जो कि सामान्यलोगों को प्राप्त नहीं हुए हैं। साहित्यिक अनुसन्धान का लक्ष्य यह होना चाहिये कि साहित्य में निहित उन व्यावहारिक अनुभवों को नया रूप दिया जाय, जिससे कि जो लोग इस काम में लगें वे उससे लाभ उठाकर उन अनुभवों को क्रियात्मकरूप दे सकें और उसके सम्बन्ध में नई शोध कर सकें। पथ्यापथ्य के सम्बन्ध में भी इसी ढंग से अनुसन्धान किया जाना चाहिये। आयुर्वेद में पथ्यापथ्य पर विशेष जोर दिया गया है और उसको

पूर्णता तक पहुँचा दिया गया है। पौष्टिक भोजन के विज्ञान के सम्बन्ध में जो प्रगति की गई है, हमारे भोजन में अत्यन्त स्वल्प मात्रा में भी जो रासायनिक तत्व हैं उनके अध्ययन पर तथा हमारे स्वास्थ्य पर वे तत्व जो प्रभाव डालते हैं उस पर भी विशेष ध्यान दिया गया है और आयुर्वेद में जो कुछ भी कहा गया है, उसको आधुनिक विज्ञान में नया रूप देने का प्रयत्न किया गया है। दूसरे शब्दों में साहित्यिक अनुसंधान, क्लीनीकल अनुसंधान और पथ्यापथ्य सम्बन्धी अनुसंधान सब एक साथ किया जाना चाहिये और विशेषज्ञों के एक सुयोग्य वर्ग को यह काम सौंप देना चाहिये, जो कि सब मिलकर काम कर सकें। जब कि बीमारियों के सम्बन्ध में इस प्रकार अनुसन्धान किया जायगा तब आयुर्वेद के मूलभूत सिद्धान्तों को समझने के लिये एक रास्ता बनाया जा सकेगा और इस पर प्राप्त किया गया अनुभव सभी के काम का हो सकेगा। तब आयुर्वेद के विद्यार्थियों के अध्ययन के लिये पुस्तकें तयार करना भी कुछ कठिन न रहेगा।

क्लीनीकल अनुसंधान से रासायनिक अनुसंधान करना भी सरल हो जायगा। पुराने समय में कच्ची औषधों के संबंध में किया जाने वाला अनुसंधान आयुर्वेद के मूलभूत सिद्धांतों से प्रथक् रहने के कारण उतना उपयोगी नहीं हो सका। एक औषध का परिणाम उससे सर्वथा भिन्न हो सकता है, जो कि उसमें शामिल तत्वों के अलग-अलग प्रयोग का होना सम्भव है। इस सिद्धांत को हमें स्वीकार करना ही होगा। इसलिये औषध के सब प्रकार के क्लीनीकल प्रयोग, जो कि प्राचीन ग्रन्थों के अनुसार किये जाएंगे उनके परिणामों की परीक्षा तो हमें करनी ही होगी। इन औषधों के उपयोग के परिणाम जानलेने के बाद हमें रासायनिक शोध का अगला काम भी करना होगा, जिससे कि हम यह जानसकें कि वह परिणाम प्रधानता औषध के किन तत्वों के कारण है और हम उस औषध में अधिक सुधार करने के उपायों को भी स्वीकार कर सकें। ऐसा करने के लिये समय भी बहुत अनुकूल है। क्योंकि इस समय हमें भौतिक और रासायनिक अनुसंधान करने के साधन उपलब्ध हैं, जो कि पहले उपलब्ध नहीं थे। बहुत आसानी से सारा काम भिन्न भिन्न रसायन शालाओं और अनुसंधान केन्द्रों में बांटा जा सकता है।

चोपड़ा कमेटी ने भी क्लीनीकल अनुसंधान के सम्बन्ध में ऐसी ही कुछ टिप्पणियां की हैं, उसमें कहा गया है कि "यह तथ्य हमारे सामने है कि अनेक बीमारियों ने अपना रूप उस समय से बदल दिया है और उसके बाद से कई नई बीमारियां भी जबकि चरक, सुश्रुत और वाग्भट ने उनका उल्लेख किया

है। कुछ पुरानी बीमारियां देश, काल, परिस्थिति तथा रोगी की अवस्था और उसकी सामाजिक स्थिति के अनुसार अपना स्वरूप बदलती रही हैं। रोग के निदान और चिकित्सा करने के पुराने तरीकों तथा सिद्धांतों और उनके स्वरूप को बताने के तरीकों का नये सिरे से अध्ययन करना होगा। वर्तमान समय की जानकारी के अनुसार उनको घटाना या बढ़ाना होगा। पुराने समय के निदान और उपचार के उपायों की युक्ति संगत व्याख्या करनी होगी। ऐसा करने से अनेक संदेह तथा आशंकाएं फिर दूर हो जायेंगी।''

सुयोग्य कार्यकर्ताओं द्वारा जिनमें कि आधुनिक चिकित्सा, आयुर्वेद तथा अन्य चिकित्सा पद्धतियों के विशेषज्ञ भी शामिल होंगे, किया गया पुरानी चिकित्सा पद्धतियों का अध्ययन अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। इस अध्ययन से वर्तमान समय में चिकित्सा पद्धति में कीगई आधुनिक प्रगति को भी शामिल किया जा सकेगा। चोपड़ा कमेटी के शब्दों में यदि कहूं तो इस प्रकार से हम प्राचीन आयुर्वेद विज्ञान में जो कुछ भी अच्छाई है उसका उपयोग सारे मानव समाज की भलाई के लिये बिना किसी अपवाद के कर सकेंगे।

मुझे आशा है कि इन सब बातों पर अपने विचार विनिमय में आप पूरा ध्यान देंगे। मुझे पूरा विश्वास है कि अपने सुयोग्य अध्यक्ष के नेतृत्व में आप इन सब का पथ प्रदर्शन कर सकेंगे, जो कि आयुर्वेद के सम्बन्ध में ठोस आधार पर अनुसंधान करने के कार्य में दिलचस्पी रखते हैं।

कैप्टन निवासमूर्ति का अध्यक्ष-भाषण

अध्यक्ष-पद से आपने जो अत्यन्त विद्वत्तपूर्ण भाषण अंग्रेजी में दिया था, उसका हिन्दी-उल्था यहां दिया जा रहा है :—

औषधीय अनुसन्धान सभी वैद्यक संस्थाओं एवं वैद्यों का साधारण कार्य होना चाहिए। औषधीय अनुसन्धान के विषय में सर्वप्रथम एवं सबसे आवश्यक रूप से जोर इस बात पर दिया जाना चाहिए कि केवल उन्हीं विशेष संस्थाओं एवं व्यक्तियों का ही कार्य नहीं समझा जाना चाहिए जिन पर "अनुसंधानशाला" "अनुसन्धान अधिकारी" आदि विशेष मुहरें लगी हों; बल्कि वह सभी वैद्यक संस्थाओं तथा वैद्यों का साधारण कार्य होना चाहिए।

भारत में औषधीय अनुसन्धान की वर्तमान दशा पर राय प्रकट करते

हुए भोर समिति ने कहा है कि पाश्चात्य देशों में औषधीय अनुसन्धान मुख्यतः विश्वविद्यालयों, वैद्यक कालिजों एवं शिक्षक-अस्पतालों के विभिन्न विभागों द्वारा किया जाता है। वास्तव में, अनुसंधान ऐसी सभी संस्थाओं में हुआ करता है और उनका साधारण कार्य समझा जाता है। आमतौर पर देखा जाय, तो भारत के वैद्यक कालिजों में औषधीय अनुसन्धान की तरफ शायद ही ध्यान दिया जाता है, या बिलकुल ही नहीं दिया जाता। इस समय सबसे बड़ी कमी, वैद्यक कालिजों के विभिन्न विभागों में संगठित अनुसन्धान का अभाव ही है। जबकि ये ही ऐसी संस्थायें हैं जो अनुसन्धान केन्द्र स्थापित करने के लिए अनुकूल एवं अत्यन्त वांछनीय सुविधायें प्रदान कर सकती हैं। ये बातें पाश्चात्य (एलोपैथिक) औषधों के अनुसन्धान के सम्बन्ध में कही गयी थीं। यदि भारतीय औषधियों के अनुसन्धान को ऐसी फटकार सुनने से बचना है, तो हमें चाहिए कि भोर समिति द्वारा बतायी गई मुख्य कमी को अपने वैद्यक शिक्षालयों में शुरू से ही न होने दें और भारतीय औषधियों के अनुसंधान को अपने वैद्यक स्कूलों, कालिजों, अस्पतालों व अन्य विभागों का चिकित्सालय एवं उससे सम्बन्धित विभागों का नियमित कार्यक्रम बनावें। दूसरे शब्दों में औषधीय अनुसन्धान, औषधीय शिक्षण एवं औषधीय (वैद्यक) चिकित्सा, इन तीनों को एक ही मौलिक इकाई के आवश्यक एवं परस्पर अवलंबित अंगों के रूप में संगठित किया जाना चाहिए, ताकि इन सभी अंगों में काम करने वाले लोग एक दूसरे के निकट संपर्क में, लाभदायक सम्बन्ध कायम रखते हुए कार्य कर सकें और साथ ही साधारण एवं असाधारण व्यक्तियों के वैयक्तिक एवं सामाजिक जीवन तथा आवश्यकताओं से भी घनिष्ठ सम्बन्ध कायम रख सकें। इस तरह सुगठित संगठन के वातावरण ही में हमारे छात्रों, अध्यापकों, वैद्यों एवं अन्य सम्बन्धित लोगों के जीवन में वैज्ञानिक अन्वेषण की मनोवृत्ति तथा सामाजिक सेवा की उत्साही भावना अपने आप, अनायास ही पनप सकती है, जिसके फलस्वरूप अनुसन्धान की आदत तथा अनुसन्धान का दृष्टिकोण बढ़ सकता है। जहां भी कार्यकर्ता सदा अनुसन्धान की दृष्टि से काम करते हों, जहां अनुसन्धान की मनोवृत्ति से भरे हुए वातावरण में छात्रों को कम से कम चार या पांच वर्ष तक शिक्षण दिया जाता हो और जनता में सुस्वास्थ्य बढ़ाने तथा अस्वस्थ एवं रुग्ण लोगों की चिकित्सा करने की समस्याओं पर बड़ी ही सावधानी एवं लगन के साथ ध्यान देने के वातावरण में जहां छात्रगण कार्य करते हों, ऐसे ही स्थानों में अनुसन्धान का वह उचित वातावरण प्राप्त हो सकता है जिसका उत्तम परिणाम निकल सके।

औषधीय अनुसन्धान की उन्नति में साधारण चिकित्सक का कार्य

औषधीय अनुसन्धान के सम्बन्ध में इधर कुछ समय से साधारण चिकित्सकों में एक तरह की हीन-भावना पायी जाती है। प्रयोगशालाओं के विशेषज्ञों के अन्वेषणों को औचित्य से अधिक महत्व देनाही इस हीन-भावना का कारण है। मुझे डर है कि कुछ अन्य चिकित्सकों की तरह भारतीय औषधियों का प्रयोग करने वाले कई चिकित्सक इस गलत धारणा में पड़े हुए हैं कि 'अनुसन्धानशाला' कहलाने वाली बहुसाधन सम्पन्न संस्थाओं में चूंकि वो काम नहीं करते, और चूंकि विशेषज्ञता सूचक "अनुसन्धान आचार्य" अथवा 'अनुसन्धान अधिकारी' की उपाधि उन्हें प्राप्त नहीं है, इसलिये वे अनुसन्धान कार्य नहीं कर सकते। परन्तु यह एक प्रदर्शनीय तथ्य है कि साधारण चिकित्सकों के रूप में खासकर रोगियों के अनुसन्धान एवं निरीक्षक औषधियों के सम्बन्ध में वे औषधीय अनुसन्धान की बहुमूल्य सेवा कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में आधुनिक औषधीय अनुसन्धान के दिग्गज माने जाने वाले, स्वर्गीय सर जेम्स के मैकेन्जी के उन व स्फूर्तिदायक शब्दों की तरफ ध्यान आकृष्ट करना चाहूँगा जो उन्होंने साधारण चिकित्सकों को सम्बोधित करते हुए कुछ वर्ष पूर्व कहे थे :—

"अनुसन्धान के चिकित्सालय-सम्बन्धी पहलुओं के सम्बन्ध में— खासकर इस दिशा में साधारण चिकित्सकों को प्राप्त होनेवाले अवसरों पर विचार करते समय, मुझे प्रयोगशाला की प्रणाली की सीमितता पर प्रकाश डालना ही होगा। सम्भव है मेरी बातों से ऐसा प्रतीत हो कि मैं उनके महत्व की अवहेलना कर रहा हूं। पर यह मेरा उद्देश्य नहीं है। प्रयोगशाला की पद्धति के महत्व को जितना मैं मानता हूं उतना और कोई नहीं मानता और मुझे उनसे जितनी सहायता मिली है, शायद किसी अन्य चिकित्सक को उतनी सहायता नहीं मिली होगी। प्रयोगशाला की प्रणालियों के अन्ध भक्तों से कहीं अधिक मैं उनके मूल्य को समझता हूं। अपने अनुभव के बल पर जहां मैं इनके मूल्य को समझने में समर्थ हुआ हूं वहां उनकी सीमितता को समझने में भी समर्थ हुआ हूं।

आज जो तथ्य-संकलन किया जाता है वह पचास वर्ष पहले किये गये तथ्यसंकलन से तनिक भी अधिक सहायक नहीं है। मैं जानता हूं कि इस विचार का प्रतिवाद किया जायेगा। क्योंकि ऐसा विश्वास किया जाता है कि वैद्य -शास्त्र ने वह महान प्रगति की है कि जिसके फलस्वरूप ऐसे चिन्हों व लक्षणों का अब पता लगाया जाता है जिनको पहले कभी पहिचाना नहीं गया

था। इस तरह यह वैद्य जिसने प्रयोगशाला में जीव-रसायन सम्बन्धी शिक्षाएं प्राप्त किया हो, अपने नोट्स में किसी द्रव्य पदार्थ की रासायनिक रचना का भी विवरण जोड़ लेता है। दूसरा वैद्य जिसने रक्त का अध्ययन किया हो, अपने तथ्य-संकलन में अपने विशेष ज्ञान का परिचय अवश्य देगा। यदि उसने कीटाणुशास्त्र का अध्ययन किया हो तो उसके रेकार्ड में उक्त द्रव्य में पाये गये विभिन्न कीटाणुओं का वर्णन होगा। इसी तरह रक्त चाप सम्बन्धी तथ्यों तथा इलेक्ट्रोकार्डियोग्रेम्स का विवरण उन विषयों के विशेषज्ञों के रेकार्डों में पाये जायेंगे। प्रत्येक वैद्य इस विश्वास से अपने परिश्रम को सार्थक मानता है कि इन तथ्यों का संकलन करके वह मानवीय ज्ञान-राशि को बढ़ा रहा है, जबकि वास्तव में वह अस्तव्यस्त विवरणों के उस असम्बद्ध समूह को ही बढ़ा रहा है जो आज वैद्य शास्त्र को अन्धकारमय एवं भ्रमपूर्ण बनाये हुए हैं। ...... ऐसी कोई भी यांत्रिक या प्रयोगशाला की प्रणाली नहीं है जिसकी उपयोगिता अत्यन्त सीमित साबित नहीं हुई हो। समय समय पर ऐसे किसी आश्चर्यजनक अन्वेषण की घोषणा की जाती रही है जो चिकित्सालय के औषधोपचार पर क्रान्तिकारी प्रभाव डालने वाला बताया जाता है। इससे बड़ी बड़ी आशायें जागृत होती हैं। पर समय बीतने पर जब प्रत्येक अन्वेषण की उपयोगिता ठीक ठीक समझी जाती है तो यह पता चलता है कि आखिर उसकी उपयोगिता अत्यन्त सीमित है।

उपयोगिता के इस पहलू पर प्रकाश डालने के लिये हम यह विचार करें कि औषधीय अनुसन्धान यहां सफल हुआ है। सभी तरह के अनुसंधान का सर्वोच्च ध्येय रोगों का निवारण (निरोध) है। यदि हम उन उदाहरणों को देखें जहां यह उद्देश्य पूर्ण हुआ है तो हम एक ही जैसी परिपाटी को देखते हैं। प्रत्येक अवसर पर चिकित्सालय के प्रेक्षक ने अपने विशेष तरीकों को काम में लाते हुए, पहल की है। रोगी में वह रोग के लक्षणों को देखता है और उन लक्षणों को इस तरह अलग करता है जिससे वह रोगों के भिन्न भिन्न प्रकारों को पहिचानने में समर्थ होता है। इन लक्षणों को वह रोग के शुरू में ही पहिचान लेता है ताकि वह यह भी समझने में समर्थ होता है कि किन परिस्थितियों में रोग होता है या बढ़ता है। इसके बाद वह रोग के निरोध की व्यवस्था करने में समर्थ होता है। टाइफाइड, बादे - फिरंग (सिफिलिस) आदि रोगों की यही कहानी है। कुछ अवसरों पर जैसे कि मलेरिया एवं उससे सम्बन्धित रोगों के विषय में हुआ—वह अपनी जांच को इतना आगे बढ़ा नहीं पाता और अपनी शक्ति की सीमितता को पहिचानते हुए वह उस कार्य को प्रयोगशाला के कार्य-

कर्त्ता के हाथों सौंप देता है। हमारा विवेक कहता है कि यही संक्षेप में यह क्रम है जिसका प्रत्येक रोग के विषय में अनुसरण किया जाना चाहिए। पर आजकल चिकित्सालयों के ऐसे प्रेक्षक मिलते कहां हैं? लोगों में यह मूर्खतापूर्ण धारणा उत्पन्न हो गई है कि जिन प्रणालियों को अपना कर चिकित्सक ने अनुसन्धान में हमें बढ़ाया वे इतनी आसानी से समझ में आ जाती हैं कि उनपर विचार करना आवश्यक नहीं है और उनकी पहिचान इतनी आसानी से हो जाती है कि उनकी विशेष जांच करने की आवश्यकता नहीं है। इससे बड़ी गलतफहमी कभी नहीं हुई होगी। हम जानते हैं कि कीटाणु-सम्बन्धी सूक्ष्मज्ञान से सुपरिचित होने के लिए कई वर्ष परिश्रम करना पड़ता है। रोगों के प्रारंभिक लक्षणों को पहिचानने का शिक्षण किसी को देने में उससे भी अधिक समय लगता है। रोगी से समझदारी के साथ प्रश्न करने के लिए कई वर्षों का अनुभव आवश्यक होता है। रोगियों के जवाबों को ठीक ठीक समझने में समर्थ होने के लिए उससे भी कई वर्ष अधिक अनुभव चाहिए। औषधीय अनुसन्धान में चिकित्सालय के प्रेक्षक का कार्य क्या है, यह बात आजकल अनुभव नहीं की जाती है। इसके फलस्वरूप वैद्यशास्त्र के मुख्य ध्येय रोग निवारण को प्राप्त करने में अलंघ्य बाधायें उपस्थित हो जाती हैं। यदि रोगी के प्रारंभिक चिन्हों को नहीं समझा जाय तो उन परिस्थितियों का ज्ञान नहीं हो सकता जो इस रोग के आक्रमण के लिए अनुकूल होती हैं या उसके कारण होती हैं। मुझे यह इतने साधारण विवेक की बात मालूम होती है कि जब अधिकारीगण इसे नहीं समझ पाते तो मुझे आश्चर्य होता है। जब इस तथ्य को समझ लिया जाय तो अगला प्रश्न यह है कि रोग के प्रारम्भिक पर्वों को देखने तथा उसके लिये अनुकूल परिस्थितियां क्या होती हैं यह समझने का अवसर किसको प्राप्त होता है। ऐसा व्यक्ति एक ही है और वह है साधारण चिकित्सक।

चिकित्सालय का अनुसंधान व्यक्तिगत दृष्टि से

एक और तथ्य यह भी है कि प्रत्येक नये रोगी की शिकायत से हमें *कुछ नयी एवं मूल्यवान बात मालूम हो सकती है, बशर्ते कि हम प्रत्येक रोगी* के रोगका अध्ययन व्यक्तिगत दृष्टिकोण से करें। स्वस्थ लोगों में प्रत्येक व्यक्ति में कुछ विशेषता ऐसी अवश्य होती है जिसके सहारे हम जुड़वां बच्चों तथा समान रूप रंग वाले लोगों तक को अलग अलग पहिचानने में सफल हो जाते हैं। ठीक इसी तरह अस्वस्थ अवस्था में भी दो व्यक्तियों की एक जैसा दशा नहीं होती, चाहे वे एक ही रोग के रोगी क्यों न हों। प्रत्येक रोगी के

कुछ विशेष लक्षण शारीरिक एवं मानसिक होते हैं। अनुभवी वैद्य इनको पहिचान लेता है और प्रत्येक रोगी के लक्षणों का विशिष्ट रूप से अध्ययन करके दवा-दारू, पथ्य आदि चिकित्सा प्रणालियों में तदनसार आवश्यक रद्दो-बदल कर लेता है। इस तरह व्यक्तिगत दृष्टिकोण से रोगों का अध्ययन करने में हम जितने सफल होंगे, रोगों की चिकित्सा में भी हमें उतनी ही सफलता प्राप्त होगी। प्रत्येक रोगी के मर्ज का निरन्तर अध्ययन करने का अभ्यास बराबर बनाये रखने के ही द्वारा ऐसी विशेषज्ञता प्राप्त की जा सकती है। आरम्भ में काफी ध्यान पूर्वक और परिश्रम के साथ इस अभ्यास को निभाना होगा, परन्तु कुछ समय बाद अनायास ही, अपने आप ऐसा करने का स्वभाव बन जायेगा। यदि प्रत्येक चिकित्सक अपने प्रत्येक रोगी के रोग सम्बन्धी तथ्यों का नियम पूर्वक उल्लेखन व संकलन करने का अभ्यास डालले, तो शीघ्र ही वह अपने (केस-रिकार्डो) संकलित तथ्यों के महत्व पर विचार करने की स्थिति में होगा और वैद्यशास्त्र की प्रगति में मूल्यवान हाथ बंटा सकेगा। यदि ऐसे तथ्यों को वैद्यों का पत्रिकाओं में प्रकाशित किया जाय या वैद्यसम्मेलनों में विचारार्थ वैज्ञानिक पत्रों के रूप में प्रस्तुत किया जाय अथवा अन्य किसी उचित ढंग से प्रकाश में लाया जाय तो निश्चय ही उनसे बड़ा लाभ होगा। औषधीय ज्ञान की प्रगति एवं औषधीय अनुसन्धान की उन्नति में साधारण चिकित्सकगण जिन तरीकों से मूल्यवान एवं विशिष्ट भाग ले सकते हैं, उनमें एक अत्यधिक लाभदायक मार्ग यह भी है।

इस बात के उदाहरण कई मिलते हैं कि यदि हमारे चिकित्सकगण उपरोक्त प्रकार से चिकित्सालय की जांच एवं अनुसन्धान की सच्ची भावना से समस्याओं पर दृष्टि डालें तो नये रोगों का भी इलाज सफलतापूर्वक किया जा सकता है कुछ वर्ष पहले जब महामारी और इनफ्लुएंजा जैसे संक्रामक रोग भारत में पहली बार फैलने लगे तो आयुर्वेद- चिकित्सकगण, त्रिदोषीय औषधिप्रणाली तथा रोगोपचार- पद्धति के आधार पर नयी दवायें तैयार करने में सफल हुये थे। ये दवायें कमसे कम उतनी सफल अवश्य हुई थीं जितनी कि अन्य वैद्य प्रणालियों द्वारा तैयार की गई दवायें। स्वर्गीय वैद्यरत्न पंडित डा० गोपालाचार्लु ने महामारी (प्लेग)के इलाज के लिये "हैमदी पानयम्" तथा "शतधौतघृतम्" नाम की दवायें तैयार की थीं जो आम जनता द्वारा विशेष वरदान मानी गई थीं और बहुत से वैद्यों द्वारा काम में लाई गई, जिनमें एलोपैथ(पाश्चात्य प्रणाली के वैद्य) भी शामिल थे। इनफ्लुएन्जा के इलाज के लिए पंडित गोपालाचार्लु ने "चरकवटी" के नाम से जो दवा तैयार की थी

उसको भी लोगों ने उसी तरह् वरदान माना था। चिकित्सालयों में केवल नये रोगों का ही अनुसन्धान हो और उनके लिये उपचार ईजाद किये जायें इतना ही काफी नहीं है। प्राचीन रोगों का भी बाह्य प्रभाव समय समय पर, देश-देश में तथा व्यक्तियों की स्थिति, उनके सामाजिक वातावरण आदि के अनुसार भिन्न भिन्न होता जाता है। जब जब जैसी जैसी बातें सामने आयें तब तब उनका अध्ययन करना तथा उनके अनुसार रोग के उपचार एवं पथ्य में परिवर्तन करना हमारा कर्त्तव्य होगा। प्रत्येक रोग के इलाज के लिए प्राचीन ग्रन्थों में निहित तथा परम्परागतरूप से ज्ञात बहुत सी विख्यात औषधियों, उपचारों एवं पथ्यों में से हमें केवल उन्हीं को चुनना होगा जो चिकित्सालय के अनुसन्धान के आधार पर वर्तमान पीढ़ी के लिए सबसे अधिक सन्तोषजनक सिद्ध हुए हों। इन क्षेत्रों में अनुसन्धान के लिए विस्तृत रूप से चिकित्सालयों के विवरण एकत्र करने होंगे और परिणामों से उनकी तुलना करनी होगी। भारतीय आयुर्वेदिक परिपाटी में प्रचलित प्राचीन चिकित्सा प्रणालियों (जिनमें पथ्य आदि भी शामिल हों)का अनुसन्धान ऐसी संस्थाओं में किया जाना वांछनीय होगा, जहां भारतीय एवं पाश्चात्य वैद्यों के पारस्परिक सहयोग की सुविधायें हों। चिकित्सालयों में आनेवाले रोगियों की चिकित्सा का कार्य आयुर्वेदिक चिकित्सा के हाथ में हो, जबकि विशेषरूप से चुने गये पाश्चात्य वैद्य - एलोपेथिस्ट (यदि ये भारतीय वैद्यशास्त्र का भी ज्ञान रखते हों तो अच्छा होगा) चिकित्सा सम्बन्धी तथ्य संकलन के कार्य में सहयोग दें और प्रत्येक रोगी के रोग- लक्षण, इलाज, दैनिकप्रगति आदि का विस्तृत एवं प्रामाणिक विवरण दर्ज करते रहें। बाद में ये विवरण ऐसी भाषा में प्रकाशित किये जावें जिससे पाश्चात्य वैद्यशास्त्र के अनुयायी भी यदि चाहें तो उससे लाभ उठा सकें।

औषधशास्त्रीय अनुसंधान

चिकित्सालय के अनुसन्धान से औषधशास्त्रीय अनुसन्धान के लिये हमें मूल्यवान पथप्रदर्शन प्राप्त होगा। प्रत्येक रोग के लिये शास्त्रों में तथा परम्परागत रूप से जो प्रसिद्ध औषधियां निर्धारित की गई हैं उनमें से केवल ऐसी औषधियों को चुनने में उससे हमें सहायता मिलेगी जो आजकल की परिस्थितियों में वर्तमान पीढ़ी के लोगों की शारीरिक दशा के अनकूल सिद्ध हुई हों। इससे एक बड़ा लाभ यह होगा कि शास्त्रों व परंपरागत अनुभव के आधार पर कई पीढ़ियों से प्रचलित असंख्य औषधियों व चिकित्सा प्रणालियों में से मनमाने ढंग से कुछ

को चुनकर उनके अनुसन्धान में समय एवं शक्ति व्यर्थ करने के बजाय, जैसे कि आजकल किया जाता है, हम चिकित्सालय के अनुसन्धान की कसौटी पर खरी उतरनेवाली कुछ उपयोगी औषधियों एवं चिकित्साप्रणालियों का रासायनिक एवं औषधीय अनुसन्धान लाभदायकरूप से कर सकते हैं। भारतीय वैद्यकला की वर्तमानपरिस्थिति में औषधशास्त्रीय अनुसन्धान को चिकित्सालय के अनुसन्धान का अनुगामी होना चाहिए, यद्यपि अन्य प्रकार की परिस्थितियों में औषधशास्त्रीय अनुसन्धान अग्रगामी एवं पथप्रदर्शक हो सकता है।

परन्तु औषधशास्त्रीय अनुसन्धान कार्य करने वालों को "वर्तमान विज्ञान" पत्र के जुलाई १६४६ के अंक के अग्रलेख में (भारतीय विज्ञान परिषद्, बंगलूर के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रसायन-विभाग द्वारा किये गये परीक्षणों के आधार पर) की गयी निम्न उक्तियों पर ध्यान देना चाहिए :—

रसायन की दृष्टि से इस बात पर विचार करते समय यह देखकर आश्चर्य होता है कि आयुर्वेदगण कितनी बहुसंख्यक एवं विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक वस्तुओं को औषधियों के रूप में सफलतापूर्वक काम में लाते हैं। सदियों के निरीक्षण के आधार पर रोगचिकित्सा सम्बन्धी जो मूल्यवान एवं विशाल ज्ञान आयुर्वेद को प्राप्त है, उसी के फलस्वरूप यह सम्भव हो सका है। पाश्चात्य वैद्यप्रणाली में भारतीय औषधियों का प्रयोग करने का प्रचार करने वाले लोग, इसमें से कुछ औषधियों का "सक्रिय सार" निकाल कर उसे प्राकृतिक औषधि के स्थान पर काम में लाया करते हैं। यह तरीका कुछ समय तक चलता रहा। पर शीघ्र ही यह खतरनाक साबित हो गया, क्योंकि अक्सर यह देखा गया कि औषधियों से निचोड़े हुए सार में मूल औषधि के प्रभाव का लेशमात्र भी नहीं होता। जैसे कुमारी ईरानी ने 'कुल्थी' बीजों के सम्बन्ध में हाल में निर्दशित किया था। एक प्राकृतिक औषधि के जो अंश उसकी रोग-निवारण-शक्ति के कारण होते हैं, वे तथा कथित सार तत्वों से कहीं भिन्न एवं अत्यधिक मिश्रित अवस्था में हो सकते हैं।

अतः आयुर्वेदिक औषधियों के स्थान पर उनके तथा कथित क्रियात्मक सार को प्रयुक्त करने का प्रश्न खतरे से भरा है। देशीय औषधियों का अनुसन्धान करते समय, उनसे निकाले गये सार या निचोड़ का परीक्षण चिकित्सालयों में साथ साथ करने की उचित व्यवस्था की जानी चाहिए।

चोपड़ा कमेटी की रिपोर्ट के प्रथम भाग में पृष्ठ १४४ पर से उद्धृत निम्न उक्ति में भी ऐसी ही चेतावनी दी गयी है:-पाश्चात्य वैद्यशास्त्र प्रत्येक

औषध के कार्य की व्याख्या उसके रासायनिक तत्वों के रूप में करने का प्रयत्न करता है, जैसे आलकलाइडज ग्लूकोसाइडज, आवश्यक तैल, जीवघातक कीटाणु (anti Toxic Hormones) इत्यादि। जब कि भारतीय वैद्यशास्त्र प्रत्येक औषध के कार्य पर संपूर्ण रूप से दृष्टि डालता है। भारतीय वैद्यशास्त्रज्ञों की धारणा यह है कि किसी संपूर्ण औषध का कार्य उसमें निहित तत्त्वों के अलग अलग कार्यों से अक्सर भिन्न होता है। इस धारणा में काफी सत्य है। रेवरेंड पादरी केयस तथा डा० के एस. म्हास्कर, एम. डी. डी. एस. सी. ने हाफकैन इंस्टीट्यूट में जो अनुसन्धान किया था, वह इस धारणा की पुष्टि करता है। उनका कथन यह है रासायनिक प्रयोगशालाओं में अनुसन्धान करने के द्वारा औषधियों के चिकित्सामूलक तत्त्वों का पता लगाना असम्भव है कोई प्राणि सम्बन्धी या जड़ी-बूटी सम्बन्धी औषध शरीर के लिए लाभदायक है या हानिकारक, इस बात का निश्चित निरूपण तभी किया जा सकता है जब उसका नैसर्गिक रूप में प्रयोग किया जाय जैसे आयुर्वेदिक शास्त्रों में विहित है। ऐसी औषधों सम्बन्धी अनुसन्धान मानवीय चिकित्सालयों में ही मुख्यतः होना चाहिए या कम से कम प्राणी शास्त्र प्रयोगशालाओं में किया जाना चाहिए। डा० म्हास्कर ने आगे कहा, प्रायः सभी विख्यात औषधियां जिनका रासायनिक प्रयोगशालाओं में अनुसन्धान किया गया, रोग निवारक कार्यों के लिये एकदम अनुपयुक्त सिद्ध हुई। यह इसलिए नहीं कि वस्तुतः वे ऐसी थीं। अपितु इसलिए कि उन पर रासायनिक परीक्षण किया गया।

रासायनिक तत्व-अनुसन्धान

इसके बाद आयुर्वेदिक, सिद्ध एवं यूनानी वैद्यों द्वारा काम में लाये जाने वाले भस्मों, सिन्दूरों, चूर्णों, कट्ट, कुश्ते आदि का अनुसन्धान करने की आवश्यकता है, जो रासायनिक तत्वों की अमूल्य सम्पत्ति से भरे पड़े हैं। इस क्षेत्र पर अनुसन्धान का पदार्पण अभी तक नहीं हुआ है। उदाहरणतः कौन यह जानना नहीं चाहेगा, कि चन्द्रोदय या मकरध्वज में कौन से ऐसे तत्व हैं जिनके कारण यह ऐसे रसायन व अमृत हो सके हैं, जबकि उनकी रासायनिक समवस्तुओं—सलफाइड आफ मर्क्युरी (Sulphide of Mercury) का हमारे अधिकृत पाश्चात्य औषधिकोष में कहीं जिक्र नहीं किया गया है? अणुमध्य-भौतिक शास्त्र, रसायनशास्त्र, जीव-भौतिक-शास्त्र, जीव-रसायन-शास्त्र एवं औषध-शास्त्र की प्रणालियों के सहारे इन आकर्षक क्षेत्रों में जांच आरम्भ करना सम्भव हो सकता है जिनका कि अनुसन्धान इससे पहले कदापि नहीं हुआ है।

साहित्यिक अनुसन्धान व अन्य सम्बन्धित बातें

इसके आगे हम साहित्यक एवं उससे सम्बन्धित अन्य बातों के अनुसन्धान पर विचार कर सकते हैं। चिकित्सकों एवं अनुसन्धान करने वाले के प्रयोग के लिए उपलब्ध वैद्य-विषयक अभी बहुत कुछ करना बाकी है। अब जो पांडुलिपियां मौजूद हैं उनकी समझदारी के साथ खोज करके बहुत से वैद्य-ग्रन्थों को ढूंढ़ निकालना है। प्रत्येक विषय पर रचित जितने भी ग्रन्थ उपलब्ध हैं, उन सबको बटोरना होगा और प्रकाशित करना होगा ताकि सभी चिकित्सकों को समय पर शंका-निवारणार्थ देखने के लिए प्राप्त हो सकें। खासकर ऐसे लोगों के लिए, जो पोषक-पदार्थ, रोगी के पथ्य, घरेलु दवाइयां, स्वास्थ्य-शिक्षा, स्वास्थ्य-वर्धन, आदि विषयों के अनुसन्धान में लगे हैं, ऐसे ग्रन्थों का संकलन एवं प्रकाशन अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। इन सब का मूल-स्रोत होगा, साहित्यिक अनुसन्धान। मैंने चोपड़ा-कमेटी को जो स्मृति-पत्र पेश किया था, और जो उक्त समिति की रिपोर्ट के द्वितीय भाग के पृष्ठ ३६३ से ३६८ तक प्रकाशित किया गया है, उसमें मैंने इन विषयों पर विस्तार पूर्वक विचार किया है। अतः यहां पर उनके बारे में और अधिक विचार करने का इरादा नहीं रखता।

औषधों की परख और स्तर निर्धारण

औषधों की परख तथा औषधियों एवं बनी बनायी दवाओं का स्तर-निर्धारण, जांच का एक ऐसा विषय है, जिसकी तत्काल छानबीन शुरू करना लाभदायक होगा। प्राचीन समय में औषधियों व जड़ी-बूटियों को चिकित्सक गए स्वयं ही लाते थे। पर आजकल की परिस्थितियों में अक्सर ऐसा होता है कि चिकित्सक लोग बाजार में मिलनेवाली औषधियों को ले आते हैं। ऐसी बाजार की चीजें हमेशा असली या उच्चकोटि की नहीं होतीं। अतः प्रत्येक मूल धातु की पहिचान करने और उचितरूप से सुयोजित जड़ी-बूटी की खेतियों एवं वनस्पति-उपवनों की स्थापना करने के लिए औषधी-पहिचान-अनुसन्धान शुरू करने की बड़ी आवश्यकता है। यदि हम उन जड़ी-बूटियों एवं औषधियों का स्तर-निर्धारण करने में समर्थ हो जायें, जिनको मिलाकर हम अपनी दवायें तैयार करते हैं, तो आयुर्वेदिक औषध-सूची में उल्लेखित बनी-बनायी दवाओं के स्तर-निर्धारण का मार्ग साफ हो जाता है। हमारी आयुर्वेदिक संस्थाओं के वैद्य-विशारदों के अलावा, आधुनिक विज्ञान एवं आधुनिक वैद्य-शास्त्र की संस्थाओं में काम करने वाले वनस्पति-शास्त्रज्ञों, रासायनिकों जीव-रासायनिकों तथा अन्य वैज्ञानिकों का सामूहिक सहयोग इस कार्य के लिए

आवश्यक है। एक छोटे पैमाने में यह कार्य तिरु अनन्तपुरम (Trivandrum) विश्वविद्यालय में हो रहा है।

प्राचीन ज्ञान को आधुनिक विज्ञान की भाषा में प्रतिपादितकरना

अनुसन्धान का अगला विषय यह है कि प्राचीन ज्ञान को आधुनिक विज्ञान की भाषा में कैसे प्रतिपादित किया जाय और ऐसी पाठ्य-पुस्तकें कैसे तैयार की जायें जो आधुनिक परिस्थितियों के अनुकूल हों भारत के तथा विश्वभर के आजकल के बुद्धिमान् लोग आयुर्वेद की ज्ञानराशि के मूल्य को ठीक ठीक आंकने में तभी सफल हो सकेंगे जब उसे जहां तक सम्भव हो, आधुनिक विज्ञान की भाषा मे व्यक्त किया जाय। हमारे सुविख्यात वैज्ञानिक श्री जगदीशचन्द्र वसु के महान आविष्कारों से ही इसका ज्वलन्त उदाहरण मिलता है। अपने अतिसूक्ष्म एवं प्रामाणिक यन्त्र साधनों के सहारे उन्होंने यह निदर्शित करके संसार को आश्चर्य चकित कर दिया था कि चेतन प्राणियों और तथा कथित जड़ वस्तुओं (पौधों आदि) में बाहरी उत्प्रेरणा की जो प्रतिक्रिया होती है वह इस कदर हूबहू एक जैसी होती है कि जिससे यह बात प्रमाणित होती है कि प्रकृति के इस जड़ एवं चेतन रूपी संसार को एक ही *प्राणशक्ति* अनुप्राणित करती है। परन्तु श्री जगदीशचन्द्र वसु सदा यह उद्घोषित किया करते थे कि उनके आविष्कारों में कोई नवीनता नहीं है; प्रत्युत हजारों वर्षों पूर्व हमारे पूर्वजों ने गंगातट पर जिस दिव्यज्ञान का बोध कराया था, उनका आविष्कार, उसका एक अंशमात्र है। और सचाई भी यही है। फिरभी, चूंकि श्री वसु ने प्राचीन ज्ञान के सत्य का निदर्शन आधुनिक वैज्ञानिक परिभाषा में तथा आधुनिक यंत्र साधनों के सहारे किया था, इस कारण आधुनिक मानव समाज भी उसकी सत्यता का ऐसा कायल हो सका जैसे कि प्राचीन विवेक भण्डार से सुपरिचित भारतीय सज्जन भी उससे पहले नहीं हुए थे। श्री वसु के प्रयत्न से प्राचीन ज्ञान को मानों नये ही प्राण प्राप्त हुए जिससे वह हमारे मस्तिष्कों में एक सजीव सत्य बनकर छा गया। हम उसे अपनी बहुमूल्य बपौती के रूप में सुरक्षित एवं समादृत करने लगे। यदि सुयोग्य तत्वान्वेषीगण समझदारी के साथ अनुसन्धान करें तो न जाने कितने सत्यरत्नों को विस्मृति के अन्धकार से ज्ञान के प्रकाश में लाया जा सकेगा। प्रकृति का पंचभूत सिद्धान्त और प्रकृति एवं मस्तिष्क के परस्पर सम्बन्ध के सिद्धान्त ऐसे ही हैं। हमारे सिद्धान्त के अनुसार पंचभूतों, पंचतन्मात्राओं एवं पंचेन्द्रियों में पारस्परिक सम्बन्ध कल्पित किया गया है जो यह सिद्ध करता है कि हमारे भौतिक विज्ञान, जीव-विज्ञान एवं मनोविज्ञान, मौलिक रूप में एक ही सत्य की विभिन्न शाखायें हैं, जिनको एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता और जो साथ ही साथ

विकसित होती हैं। हमारे त्रिदोषीय शरीर-विज्ञान, रोग विज्ञान एवं चिकित्सा-विज्ञान (Paysiology Pathology & Therapeutics); द्रव्य-गुण वीर्य-विपाक प्रभव औषध-विज्ञान; हमारे सांख्य योग-मनोविज्ञान के सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रूप; वेदान्त की प्राण (यानी जीवमूत्र सम्बन्धी) धारणा तथा मनुष्य को आत्मन् या एक ऐसी शक्ति समझना जो अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय एवं आनन्दमय कोशों के द्वारा काम करती है न कि केवल अन्नमय कोश द्वारा ही। जो आधुनिक शरीर-विभाग-विज्ञान द्वारा शव के रूप में टुकड़ों में काटा जाता है और जो आधुनिक शरीर-विज्ञान द्वारा सजीव पुरुष के ही समान माना जाता है; ये सब बातें ऐसी हैं जिनमें खोज करना अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होगा। हमारे सामने खोज के लिये यह विशाल क्षेत्र पड़ा है जिसमें अमूल्य निधियां भरी पड़ी हैं। इस कार्य में हमें तेजी से आगे बढ़ना होगा। इसके साथ ही हमें नयी पाठ्य पुस्तकें तैयार करनी होंगी जिनमें भारतीय एवं पाश्चात्य वैद्य-विज्ञान के आवश्यक मौलिक सिद्धान्तों का समावेश किया जाय। इन दोनों कार्यों में हम जितनी शीघ्र प्रगति कर सकेंगे उतनी ही जल्दी भारतीय एवं पाश्चात्य वैद्यशास्त्रों को एक संयुक्त एवं संपूर्ण शास्त्र के रूप में समन्वित करने का हमारा उद्देश्य पूरा हो सकेगा। आजकल पाश्चात्य विज्ञान-जगत् में जो नयी नयी खोज की जा रही है, उसके फलस्वरूप प्राचीन ज्ञान और आधुनिक विज्ञान एक दूसरे के निकट आते दिखाई देते हैं। इससे यह आशा प्रदीप्त हो उठी है कि यदि हम प्राचीन ज्ञान एवं आधुनिक विज्ञान के विशेषज्ञों द्वारा सम्मिलित रूप से परस्पर सहयोग के साथ अनुसन्धान की व्यवस्था करें तो उससे विज्ञान को और खासकर वैद्यशास्त्र को बहुत ही बड़े लाभ हो सकते हैं। उदाहरणार्थ मैं यहां पर एक या दो ऐसे क्षेत्रों का उल्लेख करूंगा, जैसे भौतिक विज्ञान एवं मनोविज्ञान के क्षेत्रों का अनुसन्धान।

भौतिक-विज्ञान के प्रश्न पर विचार करते समय, पिछले कुछ वर्षों से मैं आधुनिक भौतिक-विज्ञान के "क्वान्तम" (मात्रा) सिद्धान्त एवं हमारे पंचतन्मात्रा-सिद्धान्त के बीच पारस्परिक सम्बन्ध होने की सम्भावना पर विचार करता रहा हूं। क्योंकि 'तन्मात्रा' शब्द में ही (quantum) यानी मात्रा का निश्चित आभास मिलता है। पर हमारे लिए एक ही प्रकार के क्वान्तम या 'फोटोन' का होना पर्याप्त नहीं है जो हमारी आंखों में प्रवेश करता है, आंखों की नसों से सम्पर्क स्थापित करता है और हमें देखने या दृष्टिगोचर वस्तु से परिचित होने में समर्थ बनाता है। हमें अपनी पांचों इन्द्रियों के विषयों का—यानी, शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गन्ध का—बोध कराने के लिए कुल पाँच क्वांतमों या मात्राओं की आवश्यकता होती है।

क्योंकि हमारे आयुर्वेदज्ञों की धारणा यह है कि हमारी प्रत्येक कर्मेन्द्रिय में जिस प्रकार का पंचभौतिक तत्त्व विद्यमान हो, जब उसकी सूचना पर मस्तिष्क ध्यान देता है तब हमारी इन्द्रिय-क्रिया का बोध उसके अनुरूप ही होता है। हम एक वस्तु को अपनी आंखों से देखते हैं, क्योंकि हमारी चक्षु-इन्द्रिय में तेज रूपी पंचभौतिक तत्त्व विद्यमान है जिससे उसकी प्रधान तन्मात्रा (प्रकाशरूपी फोटोनों की राशि) हमारी आंखों में प्रवेश करती है और वहां की नसों से सम्पर्क स्थापित करती है; ये नसें हमारे मस्तिष्कों को दृश्य वस्तुओं से प्राप्त होने वाले प्रकाश की सूचना देती हैं, और तब हम, जो कि दर्शक हैं, दृश्य वस्तुओं का बोध प्राप्त करते हैं। हमारी अन्य इन्द्रियों की भी यही बात है। इसलिए जीन्स को हम अपने प्राचीन आयुर्वेदज्ञों की ही परम्परा का मान सकते हैं जब वह अपनी पुस्तक (The new Background of Science, 1943 Edition page12) में लिखता है—"आम तौर पर हम कह सकते हैं कि हम बाह्य जगत का बोध उन छोटे से नमूनों द्वारा कर पाते हैं जो हमारी कर्मेन्द्रियों के सम्पर्क में आते हैं। बाह्य-जगत् जड एवं शक्ति का समावेश है। इस बाह्य जगत के नमूनों में अणु और फोटोन (तेज कण) होते हैं।" पर, जैसे मैंने ऊपर कहा है आयुर्वेदज्ञों के लिए एक ही क्वान्तम (मात्रा,—फोटोन—का उल्लेख करना पर्याप्त नहीं होगा। इसके अलावा, शब्द तन्मात्रा, स्पर्श-तन्मात्रा, रसतन्मात्रा, और गन्धतन्मात्रा की भी आवश्यकता होती है। आधुनिक विज्ञान की प्रगति के फलस्वरूप यदि हम इन तन्मात्राओं के बारे में भी रूपतन्मात्रा (Photon) की ही तरह उस सम्बन्ध में आयुर्वेद के जन्मदाता आचार्य चरक के उस सूत्र के आधुनिक विज्ञान की परिभाषा में व्याख्या कर सकेंगे, जो चरक-संहिता के सूत्रस्थान नामक आठवें अध्याय में पाया जाता है।

इसके बाद हम मनोविज्ञान अनुसन्धान पर विचार कर सकते हैं। मनोविज्ञान, खासकर फ्राइड, ऐडलर, जंग, मैकडोवगल, ह्यूलिंग जैक्शन तथा अन्य आधुनिक मनोवैज्ञानिकों द्वारा प्रतिपादित वैद्य-मनोविज्ञान, पश्चिम के लिए एक नया ही शास्त्र है। पर यहां पूर्व में, वह एक अत्यन्त प्राचीन एवं सुप्रतिपादित शास्त्र रहा है, सैद्धान्तिक शिक्षा के रूप में भी और मौलिक अनुशासन के (जो कि वास्तव में व्यावहारिक मनोविज्ञान ही है) रूप में तथा चिकित्सा के क्षेत्र में भी यहां मनोविज्ञान व्यवहृत किया जाता रहा है। मानवीय प्रवृत्तियों के विभिन्न स्तर, मानसिक प्रवृत्तियों के शारीरिक स्वास्थ्य पर तथा मनुष्यों के रोगों पर प्रभाव की कल्पना आदि जो बातें आयुर्वेदिक मनोविज्ञान में सिखलायी गयी हैं, वे इस समय हमारी ज्ञानवृद्धि में बड़ी सहायक सिद्ध हो सकती हैं।

व्यावहारिक मनोविज्ञान से हमारी अनुसन्धान-प्रणाली के दृष्टिकोण में जो अमूल्य सहायता व दिग्दर्शन प्राप्त हो सकता है, उसका भी यहां हम उल्लेख कर सकते हैं। आधुनिक विज्ञान में अनुसन्धान करने वाले लोग, इन्द्रियों की सीमित पर विजय पाने के लिये सूक्ष्मदर्शी, दूरबीन, स्फुरणदर्शी (Spectroscope), हृदयगति-निरीक्षक (Cardiograph) आदि यन्त्रसाधनों से बाह्य सहायता प्राप्त करते हैं। परन्तु प्राचीन आयुर्वेदज्ञ एवं अन्य वैज्ञानिकगण बाह्य साधनों से सहायता नहीं लेते थे, बल्कि योग तथा अन्य शास्त्रों में निर्धारित कुछ अभ्यासों के सहारे अपनी आन्तरिक कर्मेन्द्रियों की शक्ति को बढ़ा लेते थे। ऐसा करने की प्रणालियाँ गुरु द्वारा शिष्य को सिखलायी जाती थीं। इससे अन्वेषक इन्द्रियां (जिनमें मन भी छठी इन्द्रिय के रूप में शामिल था) इतने परिपूर्ण रूप से विकसित हो जाती थीं कि परमाणु से लेकर परमहत्त्वत्वक कोई वस्तु ऐसी नहीं होती थी जो उनकी पहुंच के बाहर हो। कुछ समय पहले तक ऐसी शक्तियों का दावा करना कोरा मनगढ़न्त समझा जाता था। पर आजकल पश्चिम के कुछ प्रगतिशील विचारक एवं वैज्ञानिक परीक्षकगण ऐसी शक्तियों का विवेकपूर्वक अध्ययन कर रहे हैं। अतः अब उनको यथार्थरूप से समझने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। ऐसा प्रतीत होता है कि आधुनिक विज्ञान अब इस सत्य को मानने लगा है कि मनुष्य में कुछ ऐसी शक्तियां अवश्य हैं जो मन से श्रेष्ठतर हैं। ड्यूक विश्वविद्यालय, अमरीका के मनोविज्ञान के प्रोफेसर डा० जे. बी. राइन ने विशुद्ध वैज्ञानिक तरीकों से अनुसन्धान करने के बाद यह निदर्शित किया है कि मन से परे कुछ शक्तियां हैं। "इन्द्रियातीत प्रेक्षण" "अति प्रेक्षण शक्ति" (Ultra Pernspective Faculty) "मन की नयी सीमायें" "अदृष्ट दर्शन" (Clairnoyance) आदि के वर्णन में डा० राइन ने इस मनोतीत शक्ति के अस्तित्व को निदर्शित किया है। वैद्यशास्त्र के लिए नोबेल पुरस्कार विजेता डा० ऐलेक्सीस कारेल ने इस तथ्य को माना है कि अन्तः प्रेरणा (Intution) अनुसन्धान का एक साधन हो सकती है। "मनुष्य, वह अज्ञात प्राणी" शीर्षक अपनी पुस्तक में उन्होंने लिखा है कि वैज्ञानिक लोग दो भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं—तार्किक एवं प्रेरणा प्रेक्षक (Logical and Initiative) विज्ञान अपनी प्रगति के लिए इन दोनों प्रकार के मस्तिष्कों के निकट आभारी है।" अन्तः प्रेरणा वह शक्ति है जो मन से और बुद्धि से परे है। विवेकी लोग इस शक्ति को बढ़ाने में प्रयत्नशील रहते हैं जब कि पुस्तकीय पण्डितगण उसके बारे में तर्क-वितर्क करते रहते हैं। आधुनिक विज्ञान में प्रेक्षण और परीक्षण की जिन प्रणालियों द्वारा सत्य का अनुसन्धान

एवं निर्धारण किया जाता है. आयुर्वेद एवं अन्य प्राचीन विज्ञानों के आचार्य-गण भी मुद्दत से उन्हीं प्रणालियों का अवलम्बन करते रहे हैं । इनको वे प्रत्यक्ष एवं अनुमान-प्रमाण कहते थे। साथ ही उन्होंने एक और श्रेष्ठतर प्रणाली के अस्तित्व को भी माना था, जो उन दोनों में व्यवहृत हो सकती है जो आजकल के साधारण मानव की पंचेन्द्रियों की पहुंच के बाहर के हैं। यह बड़े ही सन्तोष की बात है कि परीक्षणात्मक एवं प्रेरणात्मक इन दोनों प्रणालियों को, तथा भारतीय वैद्य शास्त्रीय अनुसन्धान में इन दोनों की उपादेयता को चोपड़ा समिति ने अपनी रिपोर्ट में मान्यता दी है।

उपस्थित साधनों का संचय

वैद्यक शिक्षा, वैद्यक चिकित्सा एवं वैद्यक अनुसन्धान को उन्नत करने और बढ़ाने का एक सर्वोत्तम एवं अत्यन्त लाभदायक मार्ग यह है कि भारतीय एवं पाश्चात्य वैद्यशास्त्रों की वर्तमान संस्थाओं के साधनों को एकत्रित किया जाय। मद्रास, बम्बई, तिरुअनन्तपुरम, बंगलूर, मैसूर, कोचीन, पूना, कलकत्ता, लखनऊ, दिल्ली, तथा भारत के कई अन्य स्थानों में भारतीय एवं पाश्चात्य वैद्यशास्त्र के शिक्षणालय एवं चिकित्सालय हैं जो अलग अलग, एक दूसरे से कार्यात्मक सम्पर्क बनाये बिना काम कर रहे हैं। यदि हम ऐसी व्यवस्था कर सकें जिससे पाश्चात्य वैद्य संस्थाओं के कार्यकर्ता एवं साधन भारतीय वैद्य-विद्यालयों के छात्रों को पाश्चात्य वैद्यशास्त्र का व्यावहारिक-शिक्षण देने के काम में लाये जायें और इसी तरह भारतीय वैद्य-संस्थाओं के कार्यकर्ता एवं साधन पाश्चात्य वैद्य-शिक्षणालयों के छात्रों को भारतीय वैद्यशास्त्र का साधारण ज्ञान प्रदान करने में सहायक हों तो अनुसन्धान के लिए सुयोग्य कार्यकर्ताओं को तैयार करने का सब से सुगम, लाभदायक एवं मितव्ययितापूर्ण उपाय यही होगा। भारतीय एवं पाश्चात्य वैद्यशास्त्रों का संयुक्त एवं एकीकृत समन्वय प्राप्त करने का हमारा अन्तिम ध्येय भी तभी पूरा हो सकेगा। हमारे भारतीय वैद्यशिक्षणालयों में मुख्यतः भारतीय वैद्यशास्त्र की और गौण रूप से पाश्चात्य वैद्यशास्त्र की शिक्षा साथ साथ होने की व्यवस्था की जा सकती है। इसी तरह हमारे पाश्चात्य वैद्य-शिक्षणालयों में मुख्यतः पाश्चात्य वैद्य-शास्त्र की तथा गौण रूप से भारतीय वैद्यशास्त्र की शिक्षा दी जा सकती है। वर्तमान पाठ्यक्रमों में उचित परिवर्तन करने से उपरोक्त प्रकार से दोनों वैद्यशास्त्रों की शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था हमारे स्कूलों वैद्यक संस्थाओं में की जा सकती है। ऐसी व्यवस्था करने से अध्यापकों, साधनों, आपरेशन हालों, प्रयोगशालाओं आदि की संख्या को अनावश्यक रूप से बढ़ाने की आवश्यकता नहीं रहेगी। साथ ही, भारतीय एवं पाश्चात्य

वैद्यशास्त्रों के अनुयायी एक दूसरे के निकट संपर्क में रह कर, मिल-जुलकर काम कर सकेंगे जिससे उनमें इस समय प्रचलित परस्पर विरोधी भावनायें मिट जायेंगी। दोनों एक दूसरे को समझने लगेंगे। वैद्यशास्त्र एवं वैद्यानुसंधान के हित में ही नहीं, अपितु साधारण जनता के हित की दृष्टि से भी ऐसा पारस्परिक सहयोग अत्यन्त वांछनीय है। क्योंकि इससे साधारण जनता को यह आश्वासन प्राप्त होगा कि भारतीय एवं पाश्चात्य वैद्यशास्त्र में जो भी अच्छी विशेषतायें हैं, उनको लोगों के रोगों एवं पीड़ाओं के निवारणार्थ काम में लाया जायेगा।

ऐसी बातों पर विचार करते समय मुझे विख्यात वैद्यशास्त्रज्ञ कर्नल कौलज आई० एम० एस० के, जिन्होंने कलकत्ता मेडिकल कालेज के समशीतोष्ण प्रदेशीय औषधशास्त्र के आचार्यपीठ को कई वर्ष तक अलंकृत किया था, वे शब्द याद आते हैं, जो भविष्यवाणी से प्रतीत होते हैं। स्वर्गीय कर्नल कौलज ने कई वर्ष पूर्व कहा था—"प्राचीन आयुर्वेद को आधुनिक सांचे में ढाला जाय और उसमें नये प्राण फूंके जायें तो वह भारत का ही राष्ट्रीय वैद्यशास्त्र नहीं रहेगा, बल्कि संसार की अन्तर्राष्ट्रीय वैद्य प्रणाली की भी उन्नति में महत्वपूर्ण रूप से हाथ बंटायेगा"

यह भविष्यवाणी, आज हो या कल, कार्यरूप में परिणत होगी ही। क्या हम आशा करें कि वह कल के बजाय आज ही कार्यरूप में परिणत हो जायगी।

निबन्ध परिषद

शास्त्र-चर्चा परिषद के सम्बन्ध में निबन्धपरिषद् का भी आयोजन किया गया था। इसमें यक्ष्मा, हृदय तथा शल्यक्रिया पर कुछ निबन्ध पढ़े गये थे। राजवैद्य श्री नन्दकिशोरजी जयपुर, श्री विश्वनाथजी द्विवेदी पीलीभीत, वैद्यरत्न श्री प्रतापसिंहजी उदयपुर और श्री रामरत्तजी पाठक बेगूसराय इसके परीक्षक थे। राजयक्ष्मा पर श्री राधाकृष्णजी उपाध्याय और श्री आनन्दगिरीजी शास्त्री के लेख उत्तम रहे। हृदय रोग पर श्री गणेशदत्तजी आयुर्वेदाचार्य का लेख उत्तम रहा।

अन्य विविध आयोजन

पारितोषक-प्रदान

श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा, दिल्ली ने पांच सौ रुपये आयुर्वेद महासम्मेलन के संस्थापक श्री शंकरदाजी पदे शास्त्री के स्मारक में स्थापित किये गये कोष के लिए प्रदान किये थे। उसी के आधार पर इस पारि-

तोषक की घोषणा की गई थी। इसके लिए निम्न सात रचनायें प्राप्त हुई थीं। (१) शरीरक्रिया विज्ञान, (२) कौमारभृत्य, (३) शिरोरोग विज्ञान, (४) पदार्थ विज्ञान, (५) राजयक्ष्मा चिकित्सा, (६) हमारे भोजन की समस्या और (७) भारतीय जीवाणुविज्ञान। इनके लिये निर्णायक थे कविराज हरिरंजन मजूमदार, आचार्य श्री गोवर्धन शर्मा छांगाणी और पण्डित विश्वनाथ द्विवेदी। कविराज मजूमदारजी के कार्य करने में असमर्थ होने के कारण कविराज ताराचरणजी भट्टाचार्य को उनके स्थान पर नियुक्त किया गया। पुरस्कार समिति ने श्रीयुत जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल की रचना "शिरोरोग विज्ञान" को पुरस्कार के योग्य ठहराया। 'कौमारभृत्य' के लेखक पण्डित रघुनाथप्रसादजी द्विवेदी और 'शरीरक्रिया विज्ञान' के लेखक पण्डित रणजीत राय देसाई को स्वर्णपदक से सम्मानित किया गया। २१ फरवरी को खुले अधिवेशन में ये पुरस्कार अध्यक्ष श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य के हाथों से प्रदान किये गये। पण्डित जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल ने पुरस्कार के लिये आभार प्रगट करते हुए गुरुप्रसाद के रूप में उसको स्वीकार किया और पुनः स्मारक समिति को ही भेंट कर दिया।

२१ फरवरी को ही स्मारक समिति की बैठक वैद्यरत्न कविराज प्रतापसिंहजी के सभापतित्व में हुई। श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की पुरस्कार की योजना को संभव बनाने के लिये धन्यवाद दिया गया और ५००) की पुरस्कार की राशि समिति को ही प्रदान कर देने के लिये श्री जगन्नाथप्रसाद शुक्ल का भी आभार माना गया। उनको समिति का संरक्षक निर्वाचित करने के साथ यह भी निर्णय किया गया कि आगामी वर्ष का पुरस्कार उनके ही नाम से दिया जाय। आगामी वर्ष कार्तिक मास तक पुस्तकें भेजने की अवधि नियत की गई। एक सौ एक रुपया समिति को प्रदान करने के कारण निम्न सज्जनों को समिति का सदस्य नियत किया गया— वैद्यरत्न पं० रामप्रसाद शर्मा-पटियाला, आयुर्वेदाचार्य पं० पाण्डुरंग शिवराम शेड्ये-दमोह, वैद्यभास्कर श्री बांकेलाल गुप्त, पं० रामकिशोर शुक्ल-सिकन्दराबाद और पं० यमुनाप्रसाद पाण्डेय आजमगढ़।

आगामी तीन वर्षों के लिये फिर पं० जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल कार्याध्यक्ष और पं० महादेवप्रसादजी पाठक मन्त्री नियत किये गये। सभापति पं० मणिरामजी शर्मा रहेंगे।

छात्र विवाद प्रतियोगिता

शास्त्र-चर्चा परिषद के तत्वावधान में २० फरवरी को सवेरे ६ बजे से मध्यान्ह १ बजे तक छात्र सम्भाष परिषद के रूप में छात्र विवाद

प्रतियोगिता का आयोजन किया गया था। इसका विषय था कि "स्वतन्त्र भारत में आयुर्वेद ही राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति निर्धारित हो सकती है, अन्य पैथी नहीं।" राजवैद्य श्री नन्दकिशोरजी शास्त्री-जयपुर, प्राणाचार्य श्री सुन्दरलालजी शुक्ल-जबलपुर, आयुर्वेद पंचरत्न डा० आशानन्दजी-बम्बई, कविराज हरिप्रसादजी भट्ट आयुर्वेदाचार्य-बड़ोदा; कविराज श्री दत्तात्रेयजी डिपुटीडायरेक्टर स्वास्थ्य विभाग—उत्तर प्रदेश, और वैद्यरत्न कविराज प्रतापसिंहजी डिपुटी डायरेक्टर स्वास्थ्य विभाग—राजस्थान निर्णायक थे। समय-नियन्त्रण का कार्य कविराज प्रतापसिंहजी कर रहे थे।

प्रतियोगिता शुरू होने से पहिले श्री दत्तात्रेयजी ने सूचना दी कि भाषणों में कोरी भावना या आवेश से काम न लेकर विषय और वैधानिक तर्क को ही प्रधानता देनी चाहिये। वक्ताओं का ध्यान पुरस्कार जीतने पर न हो कर पक्ष-विपक्ष के तर्क का मण्डन तथा खण्डन युक्तियुक्त ढंग से करना चाहिये। यदि जीतना ही लक्ष्य है, तो एक दूसरे के मस्तिष्क पर विजय प्राप्त करनी चाहिये।

प्रतियोगिता में भाग लेने वाले तिब्बिया कालेज के छात्र श्री हरिप्रकाश, श्री बनवारीलाल आयुर्वेद विद्यालय के श्री सत्यपाल आदि सत्रह वक्ताओं ने भाग लिया। तिब्बिया कालेज के वेदप्रकाश को प्रथम और श्री दुर्गादत्तजी शास्त्री को द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया। दोनों वक्ताओं ने शास्त्रीय दृष्टि को प्रधानता देते हुये तुलनात्मक विवेचन बहुत सुन्दर ढंग से किया था। श्री वेदप्रकाश की भाषण शैली उत्कृष्ट थी और श्री दुर्गाप्रसाद की भाषा उत्कृष्ट थी।

राजवैद्य श्री नन्दकिशोरजी ने समारोप करते हुये छात्रों के विषय-ज्ञान की कमी पर खेद प्रकट किया। संस्कृतज्ञान को परिपुष्ट करने पर भी आपने जोर दिया। सारी प्रतियोगिता में केवल ८-१० श्लोकों का बोला जाना और वह भी अशुद्ध रूप में, आपने कहा कि, अत्यन्त खेदजनक है। छात्रों की सज्जनता और विनय के लिए उनको आपने बधाई दी और उनके उज्ज्वल भविष्य के लिये सत्कामना प्रगट की।

आयुर्वेद पत्रकार परिषद्

आयुर्वेद पत्रकार परिषद् की योजना पूर्व आयोजित न होने पर भी अत्यन्त सफल रही। २० फरवरी को महासम्मेलन के पंडाल में पण्डित जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल के सभापतित्व में इसका सर्वप्रथम

अधिवेशन हुआ। सुधानिधि-अलाहाबाद, आयुर्वेद -काशी, आयुर्वेद-नागपुर, आयुर्वेद-कलकत्ता, आयुर्वेद-सन्देश, धन्वन्तरि, प्राणाचार्य, आयुर्वेद वाणी पीलीभीत, विद्यालयपत्रिका, झांसी विद्यालय पत्रिका, मराठी आयुर्वेद पत्रिका, गुजराती वैद्य कल्पतरु, गुजराती आरोग्य सिन्धु, मराठी आयुर्वेद मन्दिर, राजपूताना प्रान्तीय सम्मेलन पत्रिका, स्वास्थ्य सन्देश, बंगला आयुर्वेदजगत, वैद्यवाणी, स्वास्थ्यसुधा, आयुर्वेदवाणी, संजीवन, जीवन, आदि पत्रों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। आरम्भ में सब का परिचय कराया गया। पण्डित नित्यानन्द सारस्वत पं० शिवदत्त शुक्ल, पं० शिवकरण छांगाणी तथा अन्य कई भाइयों के भाषण के पश्चात् सभापति का भाषण हुआ।

शुक्लजी ने अपने भाषण में कहा कि इस समय आयुर्वेद संकट काल में गुजर रहा है। आयुर्वेद और वैद्यों के विरुद्ध संगठित षड्यन्त्र चल रहा है और उस षड्यन्त्र में सरकारी अधिकारियों को भी भ्रम में डालकर फंसाया जा रहा है। इस समय आयुर्वेदिक पत्रकारों का प्रधान और पवित्र कर्तव्य है कि वे अपने लेखों से वैद्य जनता को आयुर्वेद की यथार्थ सेवा के लिये तैयार करें। आयुर्वेद के लिए जनमत तैयार करने के लिये वैद्यों को कर्तव्य-परायण बनाने और उन्हें देहातों में और जनता में अपनी सेवा से अनुकूल वातावरण तैयार करने का प्रयत्न करें। इस समय तो यह परिस्थिति है कि अधिकांश आयुर्वेदिक पत्र अनुभूत प्रयोग और आयुर्वेद सम्बन्धी लेख तथा अपनी फार्मेसी चलाने के ढंग के अनुकूल लेख छाप कर पत्र चला रहे हैं। एक छोटी जगह से भी तीन तीन पत्र प्रकाशित हो रहे हैं। ऐसे लेख हों; किन्तु आयुर्वेदिक जगत को तैयार करने का भी प्रयत्न होना चाहिए। आवश्यकता तो यह है कि सुसम्पादित दैनिक पत्र ऐसा हो, जो आयुर्वेद जगत की समस्याओं की चर्चा किया करे। यदि दैनिक पत्र न हो तो साप्ताहिक पत्र तो नितान्त आवश्यक है। परन्तु वैद्यों की रुचि ऐसे पत्रों को कर्तव्य समझ कर ग्राहक बन सहायता पहुंचाने की व्यवस्था जबतक नहीं हो, इस ढंग में परिवर्तन न हो तब तक पत्र में जो घाटा होगा उसे संभालना सहज नहीं है। अपना एक साप्ताहिक पत्र तो होना ही चाहिए और यह भी प्रयत्न हो कि अन्य जो साप्ताहिक और दैनिक पत्र निकलते हैं, उनमें भी आयुर्वेदिक अनुकूल सम्मति प्रकट होती रहनी चाहिये। बीच-बीच में सम्पादकों के बीच प्रधान वैद्यों को आयुर्वेदिक समस्याओं के रहस्य समझने के लिये पत्रकारों और सम्वाददाताओं को प्रेरणा देनी चाहिये। अन्यथा जिन घटनाओं और योजनाओं से आयुर्वेद का सत्यानाश हो सकता है, उन्हें

भी आयुर्वेद की उद्धारक कह कर कोई पत्र प्रकाशित किया करते हैं। इस सम्बन्ध में अनुकूल परिस्थिति लाने के लिये पत्रकारों से सम्पर्क स्थापित करना बहुत आवश्यक है। आयुर्वेदिक पत्रकारों का स्थायी संगठन होना चाहिए और परस्पर प्रेम और सहानुभूति का सम्बन्ध रखना चाहिए। इससे हम जनता की सेवा, वैद्यों का उत्कर्ष, आयुर्वेद का अभ्युदय करा सकेंगे और आयुर्वेद महासम्मेलन को प्रभावशाली बनाने का उपक्रम पूर्ण कर सकेंगे। हम लोगों को ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि हमने जिस आयुर्वेदिक स्वराज्य की प्रतिज्ञा की है, वह यथा समय शीघ्र पूर्ण हो सके।

आयुर्वेदिक पत्रकारों की एक स्थायी समिति बन गयी। उसके सभापति श्री जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल और मन्त्री पं० नित्यानन्दजी सारस्वत नियुक्त किये गये।

श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की ओर से भी २० फरवरी के सायंकाल ६ बजे और २१ फरवरी के सायंकाल ४ बजे दो सफल आयोजन किये थे। पहिले दिन आयुर्वेद की प्रगति व विकास के सम्बन्ध में कुछ महत्वपूर्ण भाषण हुये और दूसरे दिन निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के गत बड़ोदा अधिवेशन के अध्यक्ष कविराज श्री हरिरंजनजी मजूमदार का अभिनन्दन किया गया था। इन आयोजनों का संक्षिप्त विवरण परिशिष्ट-भाग में दिया गया है।

स्थायी समिति तथा विषय समिति

महासम्मेलन तथा विद्यापीठ का खुला अधिवेशन होने से पहिली रात को १८ फरवरी को नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की कार्यकारिणी तथा ६॥ बजे महासम्मेलन की स्थायी समिति की महत्वपूर्ण बैठकें हुईं। १६ और २० फरवरी की रात्रि को विषय समिति में खुले अधिवेशन में प्रस्तुत किये जाने वाले प्रस्तावों पर चर्चा हुई। विषय समिति की बैठकें भी बहुत सजीव होती थीं, जिनमें उपस्थित महानुभाव पूरे उत्साह से भाग लेते थे।

परिशिष्ट–विभाग

पहिला आयोजन

२८ फरवरी की सायंकाल ६ बजे पहिला आयोजन दिल्ली प्रान्त के चीफ कमिश्नर श्री शंकरप्रसादजी की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा के रूप में किया गया था। दिल्ली के नागरिक और बाहर से पधारे हुए वैद्य भी बहुत अधिक संख्या में उपस्थित थे। पण्डाल ठसाठस भरा हुआ था। दिल्ली की नगरपालिका के अध्यक्ष डा० युद्धवीरसिंह, भारतीय संसद में दिल्ली के प्रतिनिधि लाला देशबन्धु गुप्ता, कांग्रेस महासमिति के तत्कालीन प्रधान मन्त्री श्रीशंकरराव देव, वैद्यरत्न पं० शिवशर्माजी आदि महानुभावों के भाषण हुये। भाषणों का संक्षिप्त विवरण यहां दिया जा रहा है।

श्रीशंकरराव देव—

सेठ गोविन्ददासजी के भाषण के बाद महत्व पूर्ण भाषण कांग्रेस के जनरल सेक्रेटरी श्री शंकरराव देव का रहा। आरम्भ में आपने लाला देशबन्धु गुप्त से प्रश्न किया था कि आप यहाँ कैसे आये? उन्होंने उत्तर दिया कि एक रोगी के नाते। आपने आरम्भ में कहा कि डाक्टर युद्धवीरसिंह तो इस लिये आये कि म्यूनिसिपलिटी के प्रधान हैं और लाला देशबन्धु इसलिये आये कि वे रोगी है? परन्तु मैं क्यों आया? मैं न तो कोई अधिकारी हूँ और न श्री धन्वन्तरि की कृपा से रोगी हूं। परन्तु मैं जानता हूँ कि मैं क्यों आया? और क्यों बुलाया गया? मैं जिस संस्था (कांग्रेस) का सेवक हूँ, उसकी ओर देश की आखें लगी हुई हैं। लोग समझते हैं कि यदि कुछ करना है तो कांग्रेस की सहानुभूति प्राप्त करना चाहिये और उसके कार्यकर्ताओं को बुलाना चाहिये। आपको यह सोचने का अधिकार है कि देश में जो उत्तम चीज हो, उत्तम विद्या हो उसकी उन्नति होनी चाहिये। यदि ऐसा न हो तो स्वराज्य होने का कोई अर्थ ही न हुआ! मैं भी ऐसे मौके में आना पसन्द करता हूँ। अंग्रेजों के साथ हमारी न तो शत्रुता थी और न नफरत थी; परन्तु हमने अपने देश पर प्रेम करने के कारण उनसे लड़ाई की। हमारे सामने जो रुकावट का पहाड़ था उसे हटाना आवश्यक था। उसके रहते हम अपने अच्छे गुणों को बढ़ा नहीं सकते थे। भगवान की कृपा और महात्मा गांधी जी की सहायता से हम आजाद हुए। आयुर्वेद में जो अच्छा है, उसे बढ़ाने के लिये पूरा प्रोत्साहन नहीं मिलता। लोग समझते हैं कि अंग्रेज गये। कल से सब भारतीय संस्कृति का प्रचार होगा। यह भूल है। वे गये; परन्तु डेढ़ दो सौ वर्षों में व्यापार और साम्राज्य के साथ यहाँ जो अपना कलन्दर फैला चुके थे वह अभी मौजूद है। काले चमड़े के अन्दर सफेद

चमड़े का दिल वे भर गये हैं। मुझ पर भी काफी असर है। अंग्रेज गये; किन्तु देश में काफी एम० बी० बी० एस० वालों को छोड़ गये हैं। वे हमारे हैं जरूर; परन्तु उनकी पुरानी आदतें दूर होने में बहुत समय लगेगा। जहां तक सरकार का सवाल है अभी उस पहाड़ के हटाने में समय चाहिये। सवेरा हुआ है, रोशनी हुई है धीरे-धीरे प्रकाश में वृद्धि की भी सफलता होगी, कभी न कभी उद्देश्य सफल होगा। पुनर्जीवन एक दिन में नहीं होता। हम कोशिश करेंगे। भूतकालीन वस्तुओं को यदि वैसी ही रखना है तो मैं सहमत नहीं। जो अच्छा है उसे अब दुनिया के सामने रखना है। जो अच्छा है वह सब देश वालों का है। यदि हम सोचें कि हम जैसे थे वैसे ही रहेंगे तो हम बढ़ेंगे नहीं। जो कहते हैं कि आयुर्वेद में कुछ नहीं, मैं उनके साथ नहीं हूँ।

दुनिया में जो अच्छी चीज है उसे हम ले लेंगे। समन्वय करना पड़ेगा। इस समय के यन्त्रों का हमें उपयोग करना पड़ेगा। हाथ से भी देखिये और कान से भी देखिये, मैं समन्वयवादी नहीं हूँ, हम अपनी बात नहीं छोड़ेंगे (पात्र हमारा होगा, उसमें कुछ बाहरी पानी भी आ जाय तो हर्ज नहीं।) आयुर्वेद स्वदेशी है और उसमें स्वावलम्बन भी है। गरीब किसानों की सेवा आयुर्वेद से ही हो सकती है, एलोपैथी से नहीं। जो हमारे पास है वह देंगे और जो जहां अच्छा होगा उसे ले लेंगे। मैं पूरी तरह आपके साथ हूँ।

श्री देशबन्धु गुप्ता—

दिल्ली के श्री देशबन्धुजी गुप्त ने कहा भारत की राजधानी में उत्सव हो रहा है, देश के प्रसिद्ध आयुर्वेदज्ञ पधारे हुए हैं। हमारा कर्तव्य है कि अपनी आयुर्वेदिक श्रद्धा प्रकट करने को यहां आवें। हमारी आयुर्वेद में श्रद्धा कम होने से ही देश में दासता आयी। देश अब स्वतन्त्र हुआ है। आयुर्वेद के आचार्य लोग अब द्वारपाल का काम करें। तभी हमारी स्वतंत्रता पूरी होगी। चिकित्सा के सम्बन्ध में स्वतन्त्र होना बहुत आवश्यक है। आप लोग देश का लाखों रुपया विदेश जाने से बचा सकते हैं और विश्व को भी लाभ पहुंचा सकते हैं। इसीलिये मैं इस सम्मेलन की सफलता चाहता हूँ। मुझ से शंकरराव जी ने पूछा कि तुम यहाँ क्यों आये हो? मैंने कहा कि रोगी के नाते! कभी-कभी एक रोगी को इतना अधिक अनुभव हो जाता है, जितना एक बड़े डाक्टर को भी नहीं होता। मैं रोगी था किन्तु यदि मैं पश्चिमी डाक्टरों के फेर में पड़ता तो इतना स्वस्थ और अच्छा नहीं रह

पाता। मेरी माता ८८ वर्ष की है; परन्तु आयुर्वेदिक औषधि के सिवाय उन्होंने और कोई दवा कभी नहीं ली। इसीसे उनका स्वास्थ्य इस उम्र में भी अच्छा है। हमारी माता स्वास्थ्य के नियमों का पालन पूजा के समान धर्म का अंग समझकर करती हैं। साधारणतः रोग होने पर पुराने लोग तुरन्त दवा नहीं खाते थे। दोष साम्य करने का प्रयत्न करते थे। अब तो जुखाम होते ही डाक्टर बुलाये जाते हैं और पेनसिलिन शुरू हो जाती है। रोगी को संतोष तो लाभ पहुँचने पर ही होता है। नतीजे पर से ही फल की परख होती है। जब आयुर्वेदिक औषधियां लोगों को लाभ पहुँचा रही हैं तब उनके विरुद्ध आवाज उठाकर कोई क्या करेगा? माताएं दूध और घूंटी के साथ आयुर्वेद का प्रेम सिखाती थीं। अब भी माताओं को चेताना होगा। मैंने आयुर्वेद से लाभ उठाया है, अतएव चाहता हूं कि अन्य लोग भी उससे लाभ उठावें। एलोपैथी के अस्पतालों में आयुर्वेदिक विभाग भी रहना चाहिये।

डा० युद्धवीरसिंह—

"दिल्ली म्युनिसिपलिटी के प्रधान डाक्टर युद्धवीरसिंह ने कहा था कि आयुर्वेद के प्रति भारतवासियों को बड़ी श्रद्धा है। स्वतन्त्र भारत में आयुर्वेद की उन्नति के साधन विस्तृत होने चाहिये। आयुर्वेद का तजुर्बा और उसके द्वारा होने वाला लाभ जनता में उसके प्रति श्रद्धा को बढ़ाता है। आज की बड़ी जरूरत स्वास्थ्य और शरीर-रक्षा की है। इस कार्य में आयुर्वेद की सहायता लेना आवश्यक है।

प० शिवशर्माजी—

अशिक्षितों को समझाना सहज होता है; परन्तु शिक्षितों को समझाना कठिन होता है; क्योंकि उनका विचार बद्धमूल हो जाता है। चार सौ वर्षों तक जो गुलाम बना रहा, वह आयुर्वेद के सम्बन्ध में और कुछ जान ही क्या सकता है? आयुर्वेद में कोई माइसक्रोप न हो, परन्तु उसकी परीक्षा पद्धति सादी और उत्कृष्ट है। औपसर्गिक रोगों के फैलने की रुकावट के नियम हमारे धर्म के अंगीभूत हैं। नहाना-खाना भी हमारा धर्म है। जनपदध्वंस, टैकसीन, विशूचिका, कालरा के कारण जर्म्स नहीं, बल्कि दोषविकृति है। आयुर्वेद वाले गुडूची देते हैं, तो समझते हैं कि यह पित्त को कम कर रसायन गुण उत्पन्न करती है। अवश्य ही जर्म्स भी नष्ट होते हैं। आयुर्वेद यह नहीं कहता कि जर्म्स नष्ट होने पर ज्वर जाता है। शरीर-आत्मा और मन की प्रसन्नता होने पर हम समझते हैं कि ज्वर गया। जर्म्स नष्ट होने पर भी यदि दोष साम्य न हो, शरीर क्रियाशील और मन आत्मा प्रसन्न न हो, तो स्वास्थ्य लाभ

कैसा ? उष्ण देश में मिनकोनिजयम और वात प्रधान दोष बढ़ाना कहां तक उचित है। नर्वससिस्टम की खराबी के कारण बच्चे नर्वस पैदा होते हैं। अच्छी खूराक और अच्छा पान हो, तो जर्म्स रहते हुए भी आत्मा और मन प्रसन्न रह सकता है। ये कीड़े मर कर भी तो शरीर में जहर फैलाते हैं। हमारा काम व्याधि नष्ट करना और दोषसाम्य बनाना है।

डाक्टर प्राणजीवन मेहता—

इस समय अपने कार्यों से आयुर्वेद क्षेत्र में प्राण और जीवन का संचार करते रहते हैं। २५ वर्ष पहले आयुर्वेद में कोई नयी बात लेने के लिये तैयार नहीं थे; किन्तु इस समय लोग इसके लिये तैयार हैं। सीजोन में आयुर्वेदज्ञों को कोई लैसन्स नहीं मिलता। जिसे आज कैक कहते हैं उसे सुश्रुत में "कुहक" कहा गया है। हमारी मेडिसिन तीन हजार वर्ष पहले संसार भर में प्राणभूत मानी जाती थी, एलोपैथी तो आज प्रसिद्धि में आयी है। मन, आत्मा और शरीर को जो आराम कर सके, वही जीवन-रक्षक आयुर्वेद है। केवल शरीर का स्वास्थ्य यथार्थ स्वास्थ्य नहीं। सरकार आयुर्वेद को प्रोत्साहन दे, तो उसे मालूम पड़ेगा कि आयुर्वेद हजार रुपये का काम दस रुपये में पूरा करेगा।

बाबा विश्वेश्वरसिंहजी—

जब चरक और सुश्रुत का प्रचार कम पड़ा, तब उसके बाद भारत में एलोपैथी आयी। अब आवश्यक है कि आर्य वैद्यक फिर फले फूले। अभी बड़े-अस्पताल एलोपैथी के दिख रहे हैं, अब आयुर्वेद के खुलने चाहिये। जब तक जनता के स्वास्थ्य और चिकित्सा का प्रबन्ध जनता की रुचि, इच्छा और आवश्यकता के अनुसार नहीं होता, तब तक किसी गवर्नमेंट का कर्तव्य पूरा नहीं समझना चाहिये। हैल्थ-मिनिस्टर को इधर अवश्य ध्यान देना चाहिये।

श्री शंकरप्रसादजी—

दिल्ली के चीफ कमिश्नर श्रीशंकरप्रसादजी भी सम्मेलन में पधारे थे। आपने कहा। जब मुल्ला बड़ी बहस करता है तब समझा जाता है कि ईमान खतरे में है और जब डाक्टर बहस करे तब समझिये जान खतरे में है। डाक्टर लोग आयुर्वेद के विरुद्ध कुछ भी कहें परन्तु जिस देश में इतने बड़े बड़े वैद्यराज मौजूद हैं वहां का आयुर्वेद नगण्य कैसे हो सकता है ? आज डाक्टरों के पास वे आले और हथियार हैं जो चाहे यहां पहले रहे हों परन्तु

इस समय विदेश से आते हैं। आयुर्वेद की शिकायत है कि उसे वे सुविधाएं नहीं मिली जो एलोपैथी को मिल रही हैं। असल में आयुर्वेद को भी तरक्की करने का मौका मिलना चाहिये। कोई यह न समझे कि एलोपैथी को जमाना सब दिन से ऐसा ही रहा है। सन् १८७० की लड़ाई में इतने आदमी मरे जितने कभी नहीं मरे थे। उस समय लोगों को बचाने में एलोपैथी फेल रही। अतएव लड़ाई के बाद तरक्की सोची गयी। साइंस सत्य चाहता है। आयुर्वेद की अच्छाइयों को दबाया नहीं जा सकता। जब तक सौतिया डाह रहेगा तब तक रोगियों का कल्याण नहीं किया जा सकता है। अच्छी से अच्छी सिस्टम जलील हो सकती है और मामूली को सजाया जा सकता है। एलोपैथी का फायदा धनी ही उठा सकते हैं, परन्तु आयुर्वेद से धनी और गरीब दोनों को लाभ पहुँच सकता है। गरीबों के लिये आयुर्वेद से ही तारक है। जो रोगी बतलाता है बड़े डाक्टर उसी के आधार पर दवा देते हैं परन्तु आयुर्वेद वाले नाड़ी देखकर और हाल पूछ कर रोग निर्णय करते हैं। रिसर्च होना जरूरी है। रिसर्च से अच्छी चीज बनकर निकलनी चाहिये। बाहर की अच्छी चीजें लेकर अपने में मिलाइये। औषधि लेने वाले को यह विश्वास रखना चाहिये कि हमें असली चीज मिल रही है। विश्वास पैदा करना होगा। रिलीजन और मेडीसन जब शुद्ध रहते हैं तभी विश्वास दृढ़ होता है। आयुर्वेद का बोर्ड होना चाहिये और डाइरेक्टर की नियुक्ति होनी चाहिये।

कविराजजी का अभिनंदन

२१ फरवरी को सायंकाल ५॥ बजे श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की ओर से दूसरा आयोजन कविराज श्री हरिरंजनजी मजूमदार एम. ए. के अभिनन्दन के रूप में किया गया था। श्री मजूमदारजी १९४६ में बड़ौदा में हुये महासम्मेलन के अध्यक्ष थे और दिल्ली में आयुर्वेद के विकास तथा प्रगति में आपका विशेष भाग रहा है। वंश परम्परा से आप बंगाली हैं, किन्तु जन्म से आपको काश्मीरी और कार्यक्षेत्र की दृष्टि से आपको देहलवी ही कहना चाहिये। आपकी वंशभूमि पूर्वी पाकिस्तान में चटगांव है, किन्तु जन्म आपका काश्मीर में ६४ वर्ष पूर्व हुआ था। वहां आपके पिताजी कविराज शर्दाचरणजी मजूमदार महाराज रणजीतसिंह और महाराज प्रतापसिंह के समय उनके गृह-चिकित्सक थे। तेरह पीढ़ियों से आपके वंश में चिकित्साकार्य होता आया है। आपके सुपुत्र श्री आशुतोष मजूमदार भी एक कुशल वैद्य हैं और आपके उत्तराधिकार के रूप में आपकी प्रतिष्ठा के अनुरूप आपके कार्य का

कविराज हरिरंजनजी मजूमदार एम० ए०

(महासम्मेलन के अवसर पर श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा ने आपका विशेष रूप से सम्मान किया।)
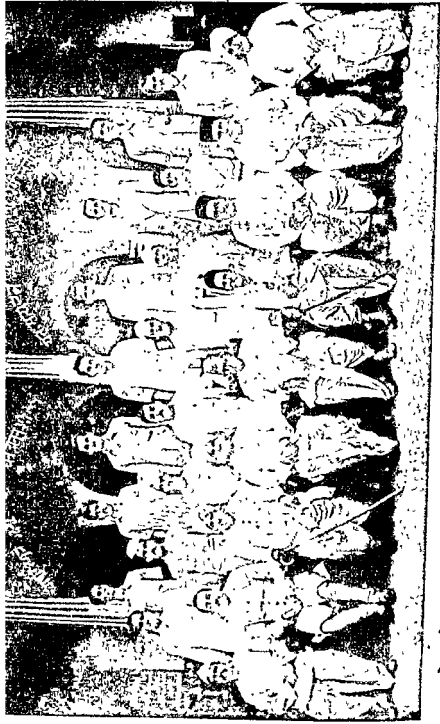
महासम्मेलन के अध्यक्ष आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी और विद्यापीठ सम्मेलन के अध्यक्ष आचार्य श्री मणिरामजी शर्मा महासम्मेलन के कुछ कार्यकर्ताओं के साथ।

सुचारु रूप से संचालन कर रहे हैं। वंग प्रान्त में साधारण शिक्षा प्राप्त करने के बाद आपने १६०८ में कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कालेज से वनस्पति विज्ञान में एम. ए. किया और काशी में कविराज रमाचरण भट्टाचार्य के चरणों में बैठकर आयुर्वेद का अध्ययन किया। कलकत्ता तथा काश्मीर में वैद्यक की। स्वर्गीय हकीम अजमल खां साहब ने जब राजधानी में १६२० में आयुर्वेद तिब्बिया यूनानी कालेज की स्थापना की, तो उनकी दृष्टि आप पर गई और उनके अनुरोध पर आपने आयुर्वेद विभाग के अध्यक्ष-पद का कार्यभार संभाल लिया और दस वर्षों तक उसको सभाल के साथ निभाया। दिल्ली नगरपालिका द्वारा आयुर्वेद के स्वीकृत किये जाने और उस द्वारा आयुर्वेद-औषधालयों की स्थापना के किये जाने का श्रेय भी आपको ही है। आपने ही उसके परीक्षण तथा प्रयत्न को सफल बनाया और उसमें प्रत्याशित सफलता प्राप्त हुई। ग्यारह वर्ष तक आप इसी में लगे रहे। इस समय ऐसे पांच औषधालय सफलता के साथ राजधानी में चल रहे हैं। १६३७ में कालेज और कमेटी दोनों के कार्य से मुक्ति पाकर आपने निजी रूप से कार्य शुरू किया और मजूमदार आयुर्वेदिक फार्मास्यूटिकल वर्क्स कायम किया। महासम्मेलन के आप उपसभापति भी रहे हैं और अनेक आयुर्वेद आयोजनों का आपने सभापतित्व किया है। आजकल अधिकतर आप काशीवास में ही मग्न होकर पूर्णतया अवकाश प्राप्त जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

इस आयोजन का कार्य राष्ट्रीयगान से शुरू हुआ। आपके सम्मान में अनेक कवितायें पढ़ी गईं। अनेक सज्जनों ने आपके प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये आपकी गुणगरिमा, चिकित्सा-कौशल, विद्वत्ता तथा सौजन्य आदि पर प्रकाश डाला। श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा के प्रधान श्री केशवप्रसादजी आत्रेय ने मानपत्र पढ़ा और भेंट किया। अत्यन्त भावपूर्ण तथा स्नेहपूर्ण शब्दों में कविराजजी ने अभिनन्दन के लिये आभार प्रदर्शित किया।

महासम्मेलन उपसमिति का गठन

श्री इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा ने महासम्मेलन के अधिवेशन को राजधानी के अनुरूप समुचित व्यवस्था करने के लिये एक उपसमिति का गठन किया था। इसी उपसमिति ने स्वागत समिति का गठन किया था और बाद में अनेक उपसमितियां भी गठित की गई थीं। उन सबकी बैठकों की कार्यवाही यहां दी जा रही है और अन्त में उपसमितियों के कार्य का संक्षिप्त विवरण भी दिया जा रहा है। इससे महासम्मेलन के आयोजन के लिए की गई तैयारी का पूरा परिचय मिल जाता है।

महासम्मेलन उपसमिति और उसकी बैठकें

(१)

श्री कविराज गणेशदत्तजी सारस्वत की अध्यक्षता में सारस्वत फार्मेसी नई सड़क देहली में बैठक हुई, जिसमें निश्चय हुआ कि निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७वें अधिवेशन को राजधानी के अनुरूप सफल बनाने के लिये निम्नलिखित महानुभावों की एक उपसमिति बनाई जाय और इस उपसमिति को पूरा अधिकार दिया जाय कि सम्मेलन सम्बन्धी समस्त कार्यवाही करे।

सर्वश्री गणेशदत्तजी सारस्वत, शिवनाथजी, गुरुदत्तजी एम० ए० सी०, आशुतोषजी मजूमदार, केशवप्रसादजी आत्रेय, सुधनवाजी, जगदीशप्रसादजी, परमानन्दजी, दामोदरप्रसादजी, लक्ष्मीशंकरजी और ओंकारप्रसाजी।

सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि इस उपसमिति का संयोजक कविराज श्री ओंकारप्रसादजी को बनाया जाय और यह भी निश्चय हुआ कि इस उपसमिति में आवश्यकतानुसार और नाम भी बढ़ा लिये जांय।

(२)

महासम्मेलन उपसमिति का प्रथम अधिवेशन १७-७-४६ को श्री परमानन्दजी वैद्य रत्न के सभापतित्व में श्री मारवाड़ी औषधालय किनारी बाजार देहली में ढाई बजे से आरम्भ हुआ। जिसमें निम्नलिखित महानुभाव उपस्थित थे।

सर्वश्री परमानन्दजी, गणेशदत्तजी सारस्वत, आशुतोषजी मजूमदार, केशवप्रसादजी आत्रेय, दामोदरप्रसादजी, गुरुदत्तजी, लक्ष्मीशंकरजी, ओंकारप्रसादजी शर्मा, शिवनाथजी।
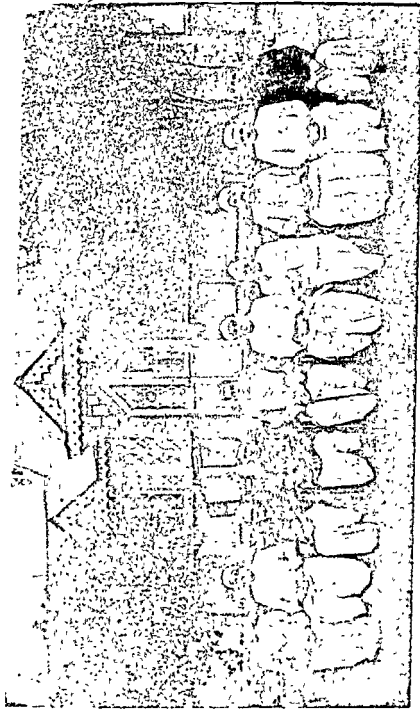
अतिथि-सत्कार-समिति—सेठ नागरमलजी धानुका, सेठ शिवदासजी मूंधड़ा, सेठ कालूरामजी सरावगी, सेठ सुन्दरमलजी सौन्थलिया
पं० ओंकारप्रसादजी शर्मा, सेठ दुर्गाप्रसादजी धानुका, सेठ आनन्दराजजी सुराणा, सेठ गौरीशंकरजी गोयनका, सेठ बिहारीलालजी तुलस्यान और
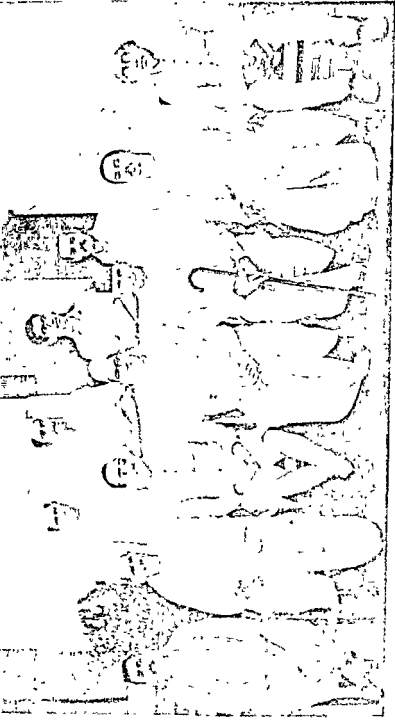
स्वागतसमिति का मन्त्रिमण्डल—बैठे हुये, पण्डित जगदीशप्रसाद शर्मा-मन्त्री शास्त्रचर्चा परिषद्, पं० शंकरदेवजी—मन्त्री विद्यापीठ सम्मेलन, पं० केशवप्रसादजी आत्रेय—संयुक्तमन्त्री स्वागतसमिति, वैद्य ओंकारप्रसादजी शर्मा—प्रधानमन्त्री स्वागतसमिति, पं० शिवसाधनी शर्मा—कोषाध्यक्ष, कविराज वैद्यनाथ सरकार—मन्त्री अर्थसमिति, वैद्य गुरुदत्तजी एम० एस० सी०-प्रचारमन्त्री। (खड़े हुये)—पं० रामचन्द्र शर्मा—मन्त्री पण्डाल समिति, पं० [illegible]

आज की यह कमेटी प्रस्ताव करती है कि निम्नलिखित महानुभावों को इस उपसमिति में और शामिल कर लिया जाय।

सर्वश्री गोपालदासजी वैद्यरत्न, मनोहरलालजी वैद्यराज, नारायणदत्तजी वैद्यराज नयाबाँस, मुन्नीलालजी गोस्वामी, घनानन्दजी पंत, श्रीपतिजी, जगदीशप्रसादजी भिवानीवाले, गयाप्रसादजी भट्ट, लखीरामजी सब्जीमण्डी, नारायणदत्तजी बिरला मिल और वैद्यनाथजी सरकार।

समिति यह निश्चय करती है कि स्वागत समिति के सदस्य वैद्यों से ११) तथा आयुर्वेद प्रेमी जनता से २५) लेकर सदस्य बनाया जाय।

५१) प्रदान करने वाले मान्य सदस्य, १०१) प्रदान करने वाले विशिष्ट सदस्य, २५१) प्रदान करनेवाले आश्रयदाता, ५००) प्रदान करनेवाले संरक्षक और १०००) प्रदान करने वाले मान्यसंरक्षक होंगे।

समिति की बैठक यह निश्चित करती है कि संयोजकजी आवश्यकतानुसार प्राप्ति पत्र (रसीद) छपवालें और कार्यालय का कार्य करने के लिये ५०) मासिक पर एक कार्यकर्त्ता की नियुक्ति करलें।

सभापति तथा आगंतुक महानुभावों को धन्यवाद प्रदान पुरस्सर सभा विसर्जित की गई।

(२)

ता० ८-१०-४६ को महासम्मेलनोपसमिति का अधिवेशन श्री पं० गणेशदत्तजी सारस्वत की अध्यक्षतामें दिनके ३ बजेसे श्री मारवाड़ी औषधालय में हुआ। जिसमें निम्न महानुभाव उपस्थित थे :—

सर्वश्री पं० गणेशदत्तजी सारस्वत, पं० वैद्यनाथजी सरकार, गुरुदत्तजी एम० एस-सी, केशवप्रसादजी आत्रेय, आशुतोषजी मजूमदार, जगदीशप्रसादजी, दामोदरप्रसादजी, रामविलासजी शारदा, ओंकारप्रसादजी, श्रीपतिजी।

समिति की बैठक यह निश्चय करती है कि महासम्मेलन की स्वागत समिति में किसी प्रकार के निर्वाचन अथवा नियुक्ति के लिये वैद्येतरों का सदस्य होना अनिवार्य न होगा।

स्वागतसमिति की बैठकें

(१)

ता० ६-१०-४६ को निखिल भारतीय आयुर्वेदीय महासम्मेलन की स्वागत समिति के सदस्यों की एक सभा पदाधिकारियों के चुनाव के लिये

मारवाड़ी औषधालय में दिन को ३ बजकर ४० मिनट पर हुई, सर्वसम्मति से निम्न प्रकार निश्चय किया गया।

समिति यह निश्चय करती है कि निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन की स्वागत समिति के पदाधिकारी निम्नलिखित रूप से बनाये जांय।

स्वागताध्यक्ष— सर शंकरलालजी के० टी०
विद्यापीठ स्वागताध्यक्ष—श्री सेठ चुन्नीलालजी जैपुरिया
स्वागताध्यक्ष प्रदर्शनी—श्री राजेन्द्रकुमारजी जैन
उपाध्यक्ष—वैद्य श्री परमानन्दजी, श्री घनानन्दजी पंत, श्री आनन्दराज सुराना, श्री शिवचरणलालजी लोहिया, वैद्य श्री गोपालसहायजी, वैद्य श्री नारायणदत्तजी बिड़ला मिल, सेठ रामेश्वरदासजी मुरारका, सेठ बिहारीलालजी झुंझनूवाला, सेठ गौरीशंकरजी गोयनका, मुन्नीलालजी गोस्वामी।
स्वागत मन्त्री—वैद्य श्री ओंकारप्रसादजी
संयुक्तमन्त्री—श्री केशवप्रसादजी आत्रेय
प्रचारमन्त्री—श्री गुरुदत्तजी एम० ए०
कार्यालयमन्त्री—श्री आशुतोषजी मजूमदार
उपाध्यक्ष विद्यापीठ—वैद्य श्री मनोहरलालजी
कविराज श्री उपेन्द्रनाथजी दास
विद्यापीठ स्वागतमन्त्री—वैद्य श्री शंकरदेवजी

महासम्मेलन की स्वागत समिति समय की न्यूनता और कार्य की अधिकता को देखते हुए यह उचित समझती है कि महासम्मेलन सम्बन्धी समस्त कार्य का संविभाजन कर दिया जाय। अतएव कार्यों को ८ विभागों में विभक्त कर उनके प्रबन्ध और संचालन के लिये निम्नलिखित उपसमितियां और उनके पदाधिकारी नियुक्त किये जांय।

(१) प्रदर्शनी समिति

अध्यक्ष—श्री घनानन्दजी पंत
मन्त्री —श्री शान्तिप्रसादजी

(२) अर्थसंग्रह समिति

अध्यक्ष—वैद्य श्री गयाप्रसादजी भट्ट
मन्त्री —कविराज वैद्यनाथजी सरकार

(३) यातायात समिति

अध्यक्ष—श्री वैद्य मांगीलालजी
मन्त्री —वैद्य श्रीदयालजी

(४) निवास समिति

अध्यक्ष—वैद्य श्री गोपालसहायजी
मन्त्री —श्री हरिचन्द्जी

(५) शास्त्र चर्चा परिषद्

अध्यक्ष —कविराज श्री उपेन्द्रनाथजी दास
मन्त्री—कविराज श्री जगदीशप्रसादजी

(६) मंडप समिति

अध्यक्ष—वैद्य श्री परमानन्दजी
मन्त्री —कविराज मामचन्दजी

(७) भोजन समिति

अध्यक्ष—सेठ दुर्गाप्रसादजी धानुका
मन्त्री —सेठ गणेशप्रसादजी होलानी

(८) स्वयंसेवक समिति

अध्यक्ष—वैद्य श्री भुवनचन्द्रजी जोशी
मन्त्री —श्रीपतिजी बी० ए०

स्वागत समिति यह निश्चय करती है कि महासम्मेलनोपसमिति के अध्यक्ष तथा मन्त्री और विद्यापीठ स्वागत समितियों के अध्यक्ष तथा मन्त्री कार्यकारिणी के सदस्य होंगे और उन्हें यह अधिकार भी दिया गया कि आवश्यकतानुसार अन्य सदस्यों को भी सम्मिलित कर लेवें।

(२)

स्वागत समिति की कार्यकारिणी की बैठक १८ अक्तूबर १६४६ को श्री शिवचरणजी लोहिये के सभापतित्व में दिन के साढ़े तीन बजे श्री मारवाड़ी औषधालय में हुई। उपस्थिति निम्न प्रकार थी—

सर्वश्री गुरुदत्तजी, आशुतोषजी मजूमदार केशवप्रसादजी आत्रेय, जयचन्दजीशर्मा, जगदीशप्रसादजी, घनानन्दजी पन्त, गयाप्रसादजी भट्ट, गणेशदत्तजी

सारस्वत, शिवशरणलालजी, भुवनचन्द्रजी जोशी, शिवनाथजी, गोविन्दसहायजी और ओंकारप्रसादजी। बैठक में निम्नलिखित विषयों पर विचार हुआ—

१. बैंक में हिसाब खोलनेपर विचार

२. बजट की स्वीकृति

३. अधिवेशन के लिये स्थान निर्णय

सर्व सम्मिति से निश्चय हुआ कि स्वागत समिति का हिसाब सेण्ट्रल बैंक आफ इण्डिया, चांदनी चौक में रखा जाय, तथा निम्नलिखित तीन व्यक्तियों में से किन्ही दो के हस्ताक्षरों से हिसाब चालू रखा जाय—

ओंकारप्रसादजी, शिवनाथजी और परमानन्दजी।

यह भी निश्चय हुआ कि कार्यारम्भ के लिये ३००) तीन सौ रुपये कार्यालय मन्त्री को दिये जाएं, जिससे यथाशीघ्र कार्यारम्भ हो सके।

निश्चय हुआ कि स्वागत समिति का अस्थाई कार्यालय मजूमदार फार्मेसी, हौज काजी में रखा जाय।

सर्व सम्मति से पास हुआ कि समितियों से प्राप्त आनुमानिक व्यय के आधार पर बजट तैयार कर प्रधान मन्त्री आगामी बैठक में उपस्थित करें।

निश्चित हुआ कि स्थान निर्णय के लिये निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति बनाई जाय, जो अपनी कार्यवाही आगामी बैठक में उपस्थित करे।

श्री शिवशरणजी वैद्य, श्री ओंकारप्रसादजी, कविराज गणेशदत्तजी सारस्वत, वैद्य श्री शांतिप्रसादजी जैन और कविराज केशवप्रसादजी आत्रेय,

सर्वसम्मति से निम्नलिखित छः और महानुभाव स्वागत समिति के उपप्रधान चुने गये:—

सर्वश्री मुन्नीलालजी गोस्वामी, नारायणदत्तजी नयाबांस, हनुमानप्रसादजी तोपखाने वाले, आदीश्वरलालजी जैन चांदनी चौक, मीनामलजी सोमानी भवन गली राजा अग्रसेन और सूर्यभानजी भालानी।

निम्नलिखित महानुभाव भी सर्व सम्मति से चुने गये—

प्रदर्शनी—वैद्य श्री सन्तकुमारजी जोशी (सदस्य)

पंडाल—महाशय श्री हरिश्चन्द्रजी (सदस्य)

(३)

स्वागत समिति की कार्यकारिणी का विशेष अधिवेशन (उपसमितियों के प्रधान और मन्त्रियों का) १७ नवम्बर १६४६, गुरुवार को दो बजे

मजूमदार चिकित्सालय, हौजकाजी में हुआ। इसमें निम्नलिखित महानुभाव उपस्थित थे। अधिवेशन के अध्यक्ष वैद्य श्री मांगीलालजी थे।

सर्वश्री गोपालसहायजी, काशीनाथजी, गुरुदत्ताजी, जगदीशप्रसादजी, धर्मेन्द्रनाथजी, ओंकारप्रसादजी, भुवनचन्द्रजी जोशी, शिवनाथजी, मांगीलाल-जी, शांतिप्रसादजी जैन और जयचन्दजी।

१. समितियों के रिक्त स्थानों की पूर्ति के लिये सर्व सम्मति से निम्न सज्जनों को निश्चित किया गया:—

आतिथ्य सत्कार समिति-अध्यक्ष श्री दुर्गाप्रसादजी धानुका मंत्री गणेशदासजी होलानी।

पताकारोहण समिति—अध्यक्ष-मालिक लोकनाथ कम्पनी
उपस्वागताध्यक्ष—श्री हेमचन्द्रजी जैन नौघड़ा, दिल्ली

२. प्रधान मन्त्रीजी ने प्रदर्शनी के अध्यक्ष पद के लिये श्री बा० राजेन्द्रकुमारजी जैन का नाम उपस्थित किया जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

३. सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ कि पत्रों में प्रचार के लिये २५०) स्वीकृत किया जाय।

४. सर्व सम्मति से स्वयंसेवक समिति के खर्च के लिये १०००) की स्वीकृति की गयी।

५. श्री जगदीशप्रसादजी ने शास्त्र चर्चा परिषद, निबन्ध परिषद और छात्र प्रतियोगिता निर्णायक समिति के सदस्यों की नामावलि उपस्थित की, जिसे सर्व सम्मति से स्वीकृत किया गया।

शास्त्र चर्चा परिषद—अध्यक्ष श्री वी० भी० डिग्वेकर
निबन्ध परिषद—श्री आचार्य यादवजी त्रिकमजी

श्री विश्वनाथजी द्विवेदी, स्वामी मंगलदासजी, श्री पुरुषोत्तमदासजी हिलेंकर श्री रामरक्षजी पाठक।

छात्र प्रतियोगिता निर्णायक समिति—राजवैद्य नन्दकिशोरजी, श्री सुन्दरलालजी शुक्ल, श्री हरिप्रसादजी भट्ट डा० आशानन्दजी पंचरत्न, राजवैद्य रामप्रसादजी, श्री हरिवत्तजी जोशी, वैद्य जी० ए० कुलकर्णी।

६. श्री शान्तिप्रसाद जैन ने सभा मण्डप और प्रदर्शनी का नकशा उपस्थित किया, जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

७. धन्वन्तरि महायज्ञ समिति के सदस्यों की सूची प्रधान मन्त्री ने उपस्थित की, जो सर्व सम्मति से स्वीकृत हुई।

सेठ कालूरामजी सरावगी (प्रधान), किशनलालजी (मन्त्री), भागीरथमलजी, रामगोपालजी, श्रीनिवासजी, शिवरामदासजी, दयालसिंहजी जैन सदस्य।

पश्चात सबको धन्यवाद प्रदान पूर्वक सभा विसर्जित हुई।

(४)

स्वागत समिति की कार्यकारणी का एक अधिवेशन २६ जनवरी को दिन के दो बजे श्री मजूमदार चिकित्सालय में हुआ। उपस्थिति निम्न प्रकार थी—

वैद्य श्री ओंकारप्रसादजी शर्मा, कविराज आशुतोष मजूमदार, वैद्य श्री घनानन्दजी पन्त, वैद्य श्री धर्मेन्द्रनाथजी।

उपस्थिति थोड़ी और आशा जनक न होने के कारण कोई विचार विनिमय नहीं किया जा सका और अधिवेशन स्थगित कर दिया गया।

(५)

स्वागत समिति के मन्त्रियों की एक सभा म्युनिसिपल औषधालय, बाजार सीताराम में ३० दिसंबर को रात्रि के ७॥ बजे श्री भट्ट जी के सभापतित्व में हुई। जिसमें निम्नलिखित महानुभाव उपस्थित थे :—

सर्वश्री गुरुदत्त जी, ओंकारप्रसादजी, धर्मेन्द्रनाथजी, केशवप्रसादजी आत्रेय, शान्तिप्रसाद जैन, गयाप्रसाद जी भट्ट, वासुदेवजी शर्मा, रामचन्द्रजी शर्मा, शिवनाथजी और जगदीशप्रसादजी।

१—निश्चय हुआ कि सम्मेलन तथा प्रदर्शनी टाउन हाल के सामने हो, विषय निर्धारिणी तथा स्थाई समिति की बैठक टाउन हाल में हो। म्युनिसिपैल्टी से आज्ञा लेने का भार श्री केशवप्रसादजी आत्रेय को दिया गया।

२—भोजन का प्रबन्ध निःशुल्क न हो तथा किसी ठेकेदार को नियुक्त कर उसे भोजन के प्रबन्ध का भार सौंपा जाय। ठेकेदार की नियुक्ति का भार श्री शान्तिप्रसादजी को दिया गया।

३—निश्चय हुआ कि सम्मेलन १६, २० तथा २१ फरवरी, १६५० को किया जाय।

४—सम्मेलन के खर्च के बजट को बनाने का भार कार्यालय मन्त्री को दिया गया, जो बजट तैयार कर आगामी अधिवेशन में रखेंगे।

५—निश्चय हुआ कि भिन्न भिन्न समितियों के मन्त्रियों की बैठक

६—प्रधान मन्त्री को भार सौंपा गया कि प्रतिनिधियों के ठहरने की व्यवस्था के सम्बन्ध में पूर्ण सूचना स्वागत समिति के आगामी अधिवेशन में पेश करें।

आगत सज्जनों को धन्यवाद देकर सभा समाप्त हुई।

(६)

स्वागतकारिणी के मन्त्रियों की एक सभा ५ जनवरी १६५० को रात्रि के आठ बजे श्री शान्तिप्रसाद जैन के स्थान पर श्री गुरुदत्त जी की अध्यक्षता में हुई। जिसमें निम्न सज्जन उपस्थित थे :—

सर्वश्री गुरुदत्तजी, केशवप्रसादजी आत्रेय, ओंकारप्रसादजी, शिवनाथजी, वासुदेवजी और शान्तिप्रसादजी।

१—कार्यालय मन्त्री ने निम्न बजट उपस्थित किया, जिसको सर्व सम्मति से स्वीकृत किया गया :—

प्रचार समिति—

पत्रकारों के लिये	२००)
सर्कुलर	४०)
महासम्मेलन सदस्यों के लिये सर्कुलर	६०)
डाक व्यय	७०)
विविध	१००)
कुल	५००)

प्रकाशन समिति—

छः भाषण सोलह पृष्ठ की छपाई	७५०)
टिकिट	२५०)
कुल	१०००)

यातायात समिति—

अध्यक्षों के लिये यात्रा व्यय	३००)
तांगा इत्यादि	४००)
बस (दिल्ली के दर्शनीय स्थानों के लिये)	३००)
कुल	१०००)

निवास समिति—

दरी मेज, बिजली के बिल बल्ब इत्यादि	५००)
कुल	५००)

भोजन समिति—

कार्यकर्ताओं के लिये विशेष अवस्था में	१००)
कुल	१००)

शास्त्रचर्चा परिषद तथा छात्र प्रतियोगता मेडल आदिके लिये	४००)
कुल	४००)
स्वयंसेवक समिति	१०००)
यज्ञ समिति	१०००)
कार्यालय समिति	१५००)

मण्डप समिति—

कुर्सी, मण्डप, दरी, मेज, आदि	२०००)

विविध—

टेलीफोन इत्यादि	३०००)
सर्व समितियों के व्यय का योग	१२०००)

२—भोजन के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि प्रतिनिधियों के भोजन का प्रबन्ध निःशुल्क किया जाय। इसका भार श्री ओंकारप्रसादजी ने सहर्ष स्वीकार किया। प्रतिनिधियों के मित्रों से, जो उनके साथ बाहर से आयें, भोजन का शुल्क लिया जाय।

३—आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी के पत्र पर विचार हुआ और निश्चय हुआ कि जब तक इस सम्बन्ध में कोई निश्चय न हो तब तक पूर्ण वेग से कार्य न किया जाय। केवल चन्दा ही इकट्ठा किया जाय।

४—निश्चय हुआ कि भविष्य में सारी सभायें कार्यालय मन्त्री के स्थान—हौज काजी पर हुआ करें।

सर्व उपस्थित सज्जनों को धन्यवाद देकर सभा समाप्त हुई।

(७)

स्वागतकारिणी के मन्त्रियों की एक सभा श्री मजूमदार चिकित्सालय हौजकाजी में १२ जनवरी १६५० को रात्रि के ८ बजे से श्री घनानंदजी पंत के सभापतित्व में हुई। जिसमें निम्न महानुभाव उपस्थित थे:—

सर्वश्री श्रीपतिजी रामचंदजीशर्मा केशवप्रसाद गुरुदत्ताजी वासुदेवजी घनानन्दजी पंत, शिवनाथजी, ओमप्रकाशजी शान्तिप्रसादजी और श्रीदयालजी।

(१) समिति यह निश्चय करती है कि कार्यालय का कार्य पूर्ण वेग से आरम्भ कर दिया जावे।

(२) समिति ने यह निश्चय किया कि प्रचार मन्त्री अपना कार्य शीघ्र आरम्भ करदें।

(३) पंडाल के स्थान के संबन्ध में विचार किया गया और निश्चय हुआ कि श्री केशवप्रसादजी आत्रेय ता० १८ जनवरी बुधवार तक इस संबन्ध में अन्तिम उत्तर देने की कृपा करें।

(४) समिति यह निश्चय करती है कि सर शंकरलालजी से निम्न महानुभाव सम्मेलन संबन्धी विचार विनिमय के लिये समय निश्चित कर मिलें, जिसकी सूचना कार्यालय मन्त्री एक दिन पूर्व दे दें।

श्री ओंकारप्रसादजी, घनानन्दजी पंत, गुरुदत्ताजी, केशवप्रसादजी, और आशुतोष मजूमदार।

(५) समिति ने निश्चय किया कि हमदर्द दवाखानेके हकीम साहब से चंदा इकट्ठा करने के लिये निम्न सदस्य शनिवार के ४ बजे श्री केशवप्रसादजी के यहां एकत्रित हों।

श्री केशवप्रसादजी श्री शांतिप्रसादजी, श्री ओंकारप्रसादजी, श्री रामचंदजी, श्री गुरुदत्तजी, आशुतोषजी मजूमदार।

(६) स्वागत समिति के मन्त्री मंडल की बैठक यह निश्चय करती है कि प्रथम निमंत्रण पत्र २० तारीख तक अवश्य भेज दिये जावें।

(७) बिल्लों के संबंध में विचार कर यह निश्चय हुआ कि निम्न महानुभावों की एक समिति बनाई जाय जो बिल्ले किस प्रकार के हों इसका अन्तिम निर्णय करे।

श्री शांतिप्रसादजी, श्री गुरुदत्ताजी, श्री केशवप्रसादजी, श्री आशुतोषजी मजूमदार।

(८) चंदा एकत्रित करने के सम्बन्ध में विचार किया गया और निश्चय किया गया कि निम्न महानुभावों से निवेदन किया जाय जो इस

कार्य के लिये निम्न दिनों में २ से ५ तक अपना समय इस कार्य के लिए अवश्य दें।

१. श्री शिवनाथजी	सोमवार, बुधवार
२. श्री केशवप्रसादजी	बुधवार, शनिवार
३. श्री रामचंद्रजी	किसी भी दिन ५ बजे बाद
४. श्रीपतिजी	किसी समय १६ तारीख के बाद
५. श्री गयाप्रसादजी भट्ट	आवश्यकतानुसार
६. श्री दयालजी	आवश्यकतानुसार
७. श्री घनानन्दजी पंत	आवश्यकतानुसार

(६) आयुर्वेद महासम्मेलन में आने वाले महानुभावों, प्रतिनिधियों, डेलीगेटों आदि के ठहरने के सम्बन्ध में विचार करने पर श्री प्रधान मन्त्रीजी ने यह आश्वासन दिया कि निम्न धर्मशालाओं में प्रतिनिधियों के निवास का प्रबन्ध पूर्ण रूपेण कर दिया गया है।

लक्ष्मीनारायण धर्मशाला नं०२, ३. माधोप्रसादजी धर्मशाला, मारवाड़ी धर्मशाला ६ कमरे, सुन्दरलाल दिगम्बर जैन धर्मशाला।

(१०) समिति में यह निश्चय हुआ कि विद्यापीठ स्वागताध्यक्ष के लिए निम्न महानुभावों से निवेदन किया जावे कि वे उसकी रिपोर्ट आगामी सभा में निर्णयार्थ उपस्थित करें।

श्री विष्णुप्रसादजी डालमियाँ, श्री सत्यनारायणजी गोयनका श्री बाबा विचित्रसिंह।

(८)

स्वागत समिति की कार्यकारणी की एक बैठक १७ जनवरी १६५० को रात्रि के ८ बजे श्री मजूमदार चिकित्सालय हौज काजी में श्री ओंकारप्रसादजी की प्रधानता में हुई। जिसमें निम्न महानुभाव उपस्थित थे:—

श्री ओंकारप्रसादजी, गुरुदत्तजी, शिवनाथजी, आशुतोषजी मजूमदार, केशवप्रसादजी आत्रेय और जगदीशप्रसादजी।

१. स्वागत समिति की बैठक यह निश्चय करती है कि दर्शकों के लिये शुल्क ३) रखा जावे तथा इनके लिये भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जावे।

२. समिति यह निश्चय करती है कि हॉल तथा पंडाल के लिये श्री केशवप्रसादजी से निवेदन किया जावे कि वे २३ तारीख सोमवार तक अवश्य अन्तिम निर्णय की सूचना कार्यालय को देने की कृपा करें।

३. बिल्लों के सम्बन्ध में समिति ने निश्चय किया कि स्वागत समिति के पदाधिकारियों और सदस्यों के अतिरिक्त महासम्मेलन के प्रधान मन्त्री व विद्यापीठ के प्रधान मन्त्री के लिये भी पृथक बिल्ले बनाये जावें।

४. समिति ने सेठ चुन्नीलालजी जयपुरिया को विद्यापीठ का स्वागताध्यक्ष निर्वाचित किया।

५. समिति यह निश्चय करती है कि शास्त्र चर्चा के अतिरिक्त अन्वेषण परिषद् की जाय और उसके सभापतित्व के लिये केप्टेन श्री नियाममूर्ति से निवेदन किया जाय। यदि किसी कारण से उनकी अनुमति प्राप्त न हो तो डा० प्राणजीवन मेहता को सभापति निर्वाचित किया जावे।

६. समिति ने निश्चय किया कि इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा की ओर से प्रांतीय संगठन के लिये तथा श्री हरिरंजनजी मजूमदार को अभिनन्दन पत्र समर्पित करने के लिए जो आयोजन किया जा रहा है उसे सम्मेलन के कार्यक्रम में सम्मिलित किया जावे।

७—यह निश्चित हुआ कि डा० प्राणजीवन मेहता तथा इसी प्रकार के महानुभावों को आमन्त्रित करने के लिए उनकी सरकारों को पत्र कार्यालय मन्त्री शीघ्रातिशीघ्र भेजें।

८—समिति यह प्रस्ताव करती है कि सम्मेलन में १९४९ में उत्तीर्ण विद्यापीठ के स्नातकों को उपाधियां दी जावें और इसके लिये विद्यापीठ मन्त्री जी को सूचना भेज दी जावे।

९—समिति में निश्चय हुआ कि स्वागताध्यक्ष से मिलकर शीघ्रातिशीघ्र उद्घाटनकर्ताओं को निर्वाचित कर लिया जावे।

१०—समिति ने सर्व सम्मति से निम्न कार्यक्रम स्वीकृत किया—

ता० १८ फरवरी—कार्यकारिणी समिति का अधिवेशन सायं ८ बजे

ता० १९ फरवरी—अन्वेषण सम्भाषण परिषद् प्रातः ९ से ११

प्रदर्शनी का उद्घाटन प्रातः ११ से १२

महामण्डल मध्यान्ह ३ से ४॥

विद्यापीठ ४॥ से ६

विषय निर्धारिणी की बैठक रात्रि के ६॥ बजे से

ता० २० फरवरी—शास्त्रचर्चा परिषद् प्रातः ८॥ से १०॥ तक

महासम्मेलन अधिवेशन मध्यान्ह में १ से ४

प्रांतीय मंत्रियों, सभापतियों की सभा सायं ५ से ७
विषय निधारिणी रात्रि के .८।। बजे

ता० २१ फरवरी—छात्र प्रतियोगिता प्रातः ८।। से १०।। बजे
भूतपूर्व सभापति अभिनन्दन प्रातः १०।। से ११।।
अधिवेशन विद्यापीठ मध्यान्ह १,, से २
महासम्मेलन मध्यान्ह ३ से ५

अन्त में सर्व उपस्थित सज्जनों को धन्यवाद पूर्वक सभा विसर्जित की गई।

(६)

स्वागत समिति की कार्यकारिणी की बैठक २८ जनवरी १६५० को रात्रि के ८ बजे से श्री मजूमदार चिकित्सालय में वैद्य श्री पं० घनानन्दजी पंत की अध्यक्षता में हुई। जिसमें निम्न महानुभाव उपस्थित थे :—

सर्वश्री घनानन्दजी पंत, ओंकारप्रसादजी, जगदीशप्रसादजी, गुरुदत्तजी आशुतोषजी मजूमदार और शांतिप्रसादजी जैन।

१—समिति यह निश्चय करती है कि स्वागत समिति का हिसाब सेंट्रलबैंक आफ इण्डिया में खोला जावे और यह प्रधानमन्त्री तथा कोषाध्यक्ष स्वागत-समिति के सम्मिलित हस्ताक्षरों से चालू रहे।

२—यह निश्चय किया गया कि पंडाल के लिए ए० एम० रामजीदास से शीघ्र पक्की बात की जावे और यदि वह ठेका लेने को तैयार न हों तो किसी और को नियुक्त किया जावे। ठेकेदारों से बातचीत का भार श्री शांति-प्रसादजी जैन को सौंपा जाय।

३—समिति में यह निश्चय हुआ कि श्री केशवप्रसादजी को स्मरण-पत्र भेजा जावे कि स्थान के सम्बन्ध में उन्होंने क्या निश्चय किया।

४—यह निश्चय किया गया कि श्री जगदीशप्रसादजी को शास्त्रचर्चा परिषद व निबन्धपरिषद् के सम्बन्ध में यह जानने के लिये पत्र लिखा जाय कि आगे क्या किया जावे।

५—समिति यह निश्चय करती है कि इन्द्रप्रस्थीय वैद्य सभा से प्रांतीय संगठन सम्बन्धी तथा कविराज श्री हरिरंजन मजूमदारजी को अभिनन्दन देने सम्बन्धी प्रस्ताव शीघ्र मंगा लिये जावें।

सर्व उपस्थित सज्जनों को धन्यवाद प्रदान करने के अनन्तर सभा विसर्जित की गई।

श्री शिवशरणजी लोहिया
(उपाध्यक्ष-स्वागत समिति)

ला० गुट्टनलालजी वैदवाड़ा

(आपने तन-मन-धन से महासम्मेलन को सहयोग दिया।)

(१०)

स्वागतकारिणी समिति की एक बैठक २ फरवरी १६५० को रात्रि के ८ बजे से श्री मजूमदार चिकित्सालय में श्री कविराज हरिरंजनजी मजूमदार के सभापतित्व में हुई। उपस्थिति निम्नप्रकार थीः—

सर्वश्री कविराज हरिरंजनजी मजूमदार, ओंकारप्रसादजी शर्मा, गुरुदत्तजी, जगदीशप्रसादजी, शिवनाथजी, केशवप्रसादजी आत्रेय, धर्मेन्द्रनाथजी शास्त्री, शान्तिप्रसादजी जैन, गयाप्रसादजी भट्ट और आशुतोषजी मजूमदार।

१—समिति यह निश्चय करती है कि भाषणों को प्रकाशित किया जावे।

२—समिति ने यह निश्चय किया कि प्रोग्राम की २०००प्रतियां छपाई जावें।

३—पंडाल और प्रदर्शनी के बारे में विचार किया गया और यह निश्चय किया गया कि श्री शांतिप्रसादजी जैन को इसका भार सौंपा जाय।

४—सदस्यों को ठहराने के सम्बन्ध में यह निश्चय किया गया कि लक्ष्मीनारायण धर्मशाला नं० २ में मध्यप्रांत, महाराष्ट्र, मद्रास, मध्यप्रदेश, महाविदर्भ, दक्षिणभारत, लक्ष्मीनारायण धर्मशाला नं० ३ में गुजरात, बम्बई, माधोराम धर्मशाला में संयुक्तप्रांत, मारवाड़ी धर्मशाला में काश्मीर, पंजाब, हिमाचलप्रदेश और सुन्दरलाल दि० जैन धर्मशाला में राजस्थान आसाम, विन्ध्य और बिहार के सदस्यों को ठहराने का प्रबन्ध किया जावे।

५—आयुर्वेद अनुसन्धान परिषद् के उद्घाटन के लिये डा० श्री जी० सी० पंडित को निर्वाचित किया गया।

अन्त में धन्यवाद प्रदान पूर्वक सभा विसर्जित हुई।

(११)

स्वागत समिति की कार्यकारिणी की बैठक ६ फरवरी १६५० को रात्रि के ८ बजे से श्री ओंकारप्रसादजी की प्रधानता में मजूमदार चिकित्सालय में हुई, जिसमें निम्न लिखित महानुभाव उपस्थित थे।

सर्वश्री ओंकारप्रसादजी, गुरुदत्तजी, शिवप्रसादजी, शिवनाथजी, आशुतोषकुमार मजूमदार और वासुदेवजी।

१—समिति ने निश्चय किया कि महामण्डल का सारा कार्यक्रम गांधीग्राउंड पण्डाल में हो और भोजन का प्रबन्ध भी पण्डाल में ही रहे।

२—समितिद्वारा भोजन के टिकिट, अन्तिम निमन्त्रण पत्र तथा बिल्ले आदि का प्रकाशन और वितरण का भार श्री गुरुदत्तजी को सौंपा गया।

४—समिति की बैठक में उद्घाटन के सम्बन्ध में विचार किया गया

और निश्चय हुआ कि यदि राष्ट्रपतिजी तथा स्वास्थ्य मन्त्रिणीजी की स्वीकृति आजाये तो महामण्डल और विद्यापीठ का उद्घाटन क्रमशः उनसे कराया जावे, अन्यथा एक ही व्यक्ति द्वारा सारे सम्मेलन का उद्घाटन कराया जावे। यदि उक्त दोनों महानुभावों की स्वीकृति प्राप्त न हो सके तो श्री मावलंकरजी को और उनकी भी अस्वीकृति में श्री श्यामाप्रसाद मुखर्जी को निर्वाचित किया जावे।

४—समिति ने शुल्क के सम्बन्ध में निश्चय किया कि प्रतिनिधि शुल्क ३). दर्शक से ५), छात्रों से २) तथा प्रत्येक आगन्तुक महानुभाव से २) प्रति दिन भोजन का लिया जावे।

५—खर्चे के सम्बन्ध में स्वागत समिति की कार्यकारिणी यह निश्चय करती है कि कार्यालय मन्त्री प्रधानमन्त्री से २५) से अधिक व्यय वाले बिलों को पास कराकर कार्यालय से बिलों को चुकता किया करें तथा प्रचारमन्त्री को उचंत १५०) पेशगी दे दिये जावें।

अन्त में सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित की गई।

(१२)

स्वागतकारिणी समिति की बैठक ६ फरवरी १६५० को रात्रि के ८ बजे मे श्री ओंकारप्रसादजी श्री की अध्यक्षता में श्री मजूमदार चिकित्सालय में हुई। जिसमें निम्न लिखित महानुभाव उपस्थित थे।

सर्वश्री ओंकारप्रसादजी, गुरुदत्तजी, शिवनाथजी, केशवप्रसादजी आत्रेय, रामचन्द्रजी, धर्मेन्द्रनाथजी, शांतिप्रसादजी और आशुतोष मजूमदार।

१—जामनगर के पत्र पर विचार कर यह निश्चय किया गया कि प्रदर्शनी में प्रदर्शनार्थ वस्तुओं को मंगाने के लिए ४००) भेज दिये जावें। इसमें से २००) प्रदर्शनी विभाग की ओर से प्राप्त किये जावें और २००) का प्रबन्ध स्वागत समिति करे।

२—बनारस यूनिवर्सिटी से प्रदर्शनार्थ वस्तुओं को मंगाने के लिये यह निश्चय किया गया कि श्री गुरुदत्तजी को इसका भार सौंपा जावे।

(१३)

स्वागतसमिति के सदस्यों की सभा १६ फरवरी १६५० दोपहर को २ बजे श्री वैद्य मुन्नीलालजी के सभापतित्व में हुई। गत सम्मति से गताधिवेशन की कार्यवाही तथा खर्च व्यौरा स्वीकृत हुआ। उपस्थिति निम्न प्रकार रही :—

सर्वश्री मुन्नीलालजी, ओंकारप्रसादजी, मांगीलालजी, जयचन्दजी, श्रीपतिजी, गोपालसहायजी, धर्मेन्द्रजी, वासुदेवजी, उपेन्द्रनाथजी, काशी नाथजी, भुवनचन्द्रजी, वैद्यनाथजी सरकार, दुर्गाप्रसादजी धानुका, जगेशदास होलानी, मनोहरलालजी, हरिश्चन्द्रजी और शांतिप्रसादजी जैन।

(१४)

स्वागत समिति की कार्यकारिणी की बैठक १६ फरवरी को रात्रि के ७॥ बजे से मजूमदार चिकित्सालय में श्री वैद्य गुरुदत्तजी की अध्यक्षता में हुई। उपस्थिति निम्न प्रकार थी :—

सर्वश्री गुरुदत्तजी, शिवनाथजी, शांतिप्रसादजी जैन, ओंकारप्रसादजी शर्मा और आशुतोषजी मजूमदार।

१—सर्व सम्मति से यह निश्चय हुआ कि स्वागत समिति का एक एकाउन्ट यूनाइटेड कमर्शल बैंक (united commercial Bank ltd) में खुलवा लिया जावे तथा श्री ओंकारप्रसादजी शर्मा और श्री शिवनाथजी शर्मा इस एकाउण्ट को एक साथ चालू (operate) करें।

२—समिति यह निश्चय करती है कि निम्न लिखित समितियों के पृथक्-पृथक् फोटो खिंचवाए जावें और उन चित्रों का महासम्मेलन के इतिवृत्त में समावेश कर लिया जाय।

समितियों के नाम ;—

आतिथ्यसत्कार समिति
भोजन समिति
स्वयंसेवक समिति
प्रदर्शन समिति
निवास समिति
कार्यालय एवं मन्त्रिमण्डल

३—समिति यह निश्चय करती है कि तिब्बिया कालेज के छात्रमण्डल (Students unian) को ५१ रुपये भेंट किए जावें।

(१५)

स्वागत समिति का यह अधिवेशन मारवाड़ी औषधालय किनारी बाजार देहली में ता: ६-७-४० रविवार को दोपहर में ३ बजे से हुआ। उपस्थिति निम्न प्रकार रही :—

सर्वश्री रामगोपालजी, वासुदेवजी शर्मा, गोविन्दसहायदत्त, ओंकारप्रसादजी, श्रीयदुगोपाल गोस्वामी, चन्द्रकान्तजी दीक्षित, गणपतिप्रसादजी,

शिवनाथजी शर्मा, केशवप्रसादजी आत्रेय, काशीनाथजी शर्मा, और बनवारीलालजी।

श्री कविराज वैद्यनाथजी सरकार की अध्यक्षता में कार्यवाही प्रारम्भ हुई। गताधिवेशन का कार्य विवरण पढ़ा गया और सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

१—स्वागत समिति का ३० अप्रैल १६५० तक का आय व्यय विवरण पढ़ा गया और सर्व सम्मति से स्वीकृत किया गया।

२—यह निश्चय हुआ कि ४३६) का जो अन्तर हिसाब में आ रहा है उसे भूल व्यय किया समझा जावे और मिश्रित व्यय में सम्मिलित कर दिया जावे।

(क) समिति यह निश्चय करती है कि व्यय का विवरण सम्पूर्ण रूप में जुदा बना दिया जावे ताकि प्रत्येक खाते का पूरा विवरण एक स्थान पर मिल सके।

३—स्वागत समिति का ३० अप्रैल १६५० को संतुलन पत्र पढ़ा गया और सर्व सम्मति से स्वीकृत किया गया।

४(क)—निश्चय हुआ कि रिपोर्ट छपवाने इत्यादि सब व्ययों के अनंतर जो रुपया बचे उनको निम्न लिखित चार कार्यों में से किसी एक कार्य में व्यय करने के लिये निम्न लिखित सदस्यों की एक बचत निधि समिति बनाई जावे।

उपसमिति के सदस्य—

श्री ओंकारप्रसादजी प्रधान मन्त्री, श्री वैद्यनाथजी सरकार, श्री गयाप्रसादजी भट्ट, श्री शान्तिप्रसादजी जैन, श्री शिवनाथजी, श्री जगदीशप्रसादजी, श्री गुरुदत्तजी, श्री केशवप्रसादजी आत्रेय और श्री रामगोपालजी शास्त्री।

कार्यों का उल्लेख—

१—आयुर्वेद विद्वद् परिषद् में।

२—विश्व विद्यालय में कमरे बनवाने में।

३—उच्चकोटि के आयुर्वेदीय ग्रन्थ निर्माणकर्ताओं को पारितोषिक आदि में।

४—देहली में धन्वन्तरि भवन बनवाने में।

स्वर्गीय वैद्य मांगीलालजी

अध्यक्ष—यातायात समिति

कविराज श्री गयाप्रसादजी भट्ट
(अध्यक्ष-स्वागतसमिति)

ऊपरि लिखित समिति को रुपया व्यय करने का पूर्ण तथा अन्तिम अधिकार होगा। स्वागत समिति के अवशिष्ट कार्य की पूर्ति भी यह समिति करेगी।

(ख) बैंक से स्वागत समिति के खाते का रुपया निकालने तथा जमा करने का अधिकार इस समिति की ओर से भी यथापूर्व श्री ओंकार-प्रसादजी शर्मा तथा शिवनाथजी शर्मा को रहेगा।

(ग) स्वागत समिति अपने पूर्व अधिकार इसी समिति को सौंपती है।

(घ) श्री प्रधान मन्त्री जी रिपोर्ट तैयार करने के पश्चात् उपरि लिखित समिति की स्वीकृति लेकर प्रकाशित करदें।

(ङ) उपरि लिखित समिति की बैठक का कोरम ३ सदस्यों का होगा।

(च) इस समिति के संयोजक प्रधान मन्त्री श्री ओंकारप्रसादजी रहेंगे तथा इसकी बैठक बुलाने के लिये ७ दिन का नोटिस दिया जावेगा।

धन्यवाद प्रदान पुरस्सर सभा विसर्जित की गई।

उपसमितियों का कार्यविवरण

धनोपार्जन समिति—

अर्थ ही सर्व प्रधान कार्यों का साधक है। अतएव सबसे महत्व-पूर्ण साथ ही सब से कठिन कार्य अर्थ संग्रह का था। आज की संकट कालीन परिस्थितियों में किसी सार्वजनिक कार्य के लिये भी अर्थ संपादन का कार्य अत्यन्त ही दुःसाध्य कार्यों में से है। इसलिये स्वागत समिति ने धनोपार्जन समिति में निम्न महानुभावों का नाम रखकर इस कठिन कार्य को इतना सुगम बना दिया, जिससे चन्द ही दिनों के अन्दर आशातीत सफलता प्राप्त कर स्वागत समिति को चिन्ता मुक्त कर दिया।

प्रधान—श्री गयाप्रसादजी भट्ट, उपप्रधान—वैद्यरत्न श्री परमानन्दजी और वैद्य श्री शिवनाथजी, मन्त्री—कविराज वैद्यनाथजी सरकार, सदस्य—सर्व श्री मनोहरलालजी, घनानन्दजी पन्त, केशवप्रसादजी आत्रेय, काशीनाथजी, गोपालसहायजी, शंकरदेवजी, मामनसिंहजी, लखीरामजी, नारायणदत्तजी नयावांस, रामचन्द्रजी प्रफुल्ल, मुन्नीलालजी गोस्वामी, वासुदेवजी, मांगीलालजी, ओंकारप्रसादजी।

इस समिति को ला० शिवचरणलालजी लोहिया तथा गुट्टनलालजी, जैन ने अपना पूर्ण सहयोग देकर आयुर्वेद के प्रति सच्चा प्रेम प्रदर्शित किया। यह उल्लेख करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता होती है कि देहली निवासी धनी मानी महानुभावों ने इस कार्य के लिये मुक्त हस्त से सहायता देकर अपना कर्तव्य पूरा किया। समयाभाव के कारण जिन भाइयों के पास न पहुंच सके उन्होंने भी प्रधान मन्त्री के पास आकर उपालंभ दिया और यथाशक्ति हार्दिक करबद्ध अर्थ भेंट किया।

प्रदर्शिनी समिति—

प्रदर्शन की उपयोगिता और महत्व को देखते हुए इसको सर्वाङ्ग सुन्दर और उच्च आदर्श प्रदर्शिनी बनाई जाय, जिसमें हस्त लिखित उच्च कोटि के ग्रन्थ और प्राचीन यन्त्र शास्त्र तथा संदिग्ध वनस्पतियों और सिद्ध औषधियों का प्रदर्शन हो। यह कार्य देखने में जितना सरल है करने में उतना ही कठिन है। परन्तु, इस कार्य को सफल बनाने के लिये प्रदर्शिनी के प्रधान श्री घना-

आयुर्वेद प्रदर्शनी के उद्घाटन के अवसर पर श्री रंगराव रघुनाथ दिवाकर के साथ प्रदर्शिनी के कार्यकर्ता। पीछे भगवान धन्वन्तरि की प्रतिमा है।

नन्दजी पंत आयुर्वेद वृहस्पति और प्रदर्शिनी विभाग के मन्त्री श्री शान्ति-प्रसादजी जैन तथा धर्मेन्द्रनाथजी शास्त्री के अहर्निश के परिश्रम से यह कार्य भारत की राजधानी के अनुरूप ही हुआ। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि बाहर से पधारे हुए प्रतिनिधिगण तथा स्थानीयजनता एवं उच्च कोटि के नेतागण आदि सभी महानुभावों ने प्रदर्शिनी को देखकर इसकी प्रशंसा और सराहना की है।

भोजन समिति—

भारत की राजधानी में राशनिंग की व्यवस्था होने के कारण स्वागत समिति के अधिकारियों को अहर्निश चिन्ता बनी रहती थी कि हमारे आगन्तुक अतिथियों का उनके अनुरूप सत्कार की व्यवस्था करने में शायद ही हम सफल हों। परन्तु, जिन महानुभावों ने सम्मेलन में पधारकर हमारे आतिथ्य को स्वीकार करने का कष्ट उठाया है वे ही महानुभाव इस विषय में बता सकते हैं कि हमारा आयोजन कितना सफल रहा, इसका अनुभव आप उस दैनिक 'सन्मार्ग' से जो कि कलकत्ते से प्रकाशित होता है, में कलकत्ता के सुप्रसिद्ध विद्वान् वैद्य महोदय ने प्रकाशित किया है कि "देहली आयुर्वेद महासम्मेलन में यह अनुभव करना कठिन था कि हम वैद्य समिति की पाकशाला में भोजन कर रहे हैं या किसी करोड़पति सेठ की बरात में।"

इस आयोजन को सफल बनाने में वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन के अध्यक्ष श्री पं० रामनारायणजी वैद्य शास्त्री और देहलीस्थ मारवाड़ी समाज तथा सेठ श्री चुन्नीलालजी जयपुरिया एवं बाबू राजेन्द्रकुमारजी जैन का विशेष सहयोग रहा है। इन महानुभावों ने आगन्तुक सभी प्रतिनिधियों के लिये एक-एक समय का व्यय उठाकर हमारा बड़ा सहयोग दिया है। इस समिति को जो आशातीत सफलता प्राप्त हुई उसका सारा श्रेय समिति के अध्यक्ष श्री सेठ दुर्गाप्रसादजी धानुका, श्री सेठ शिवदासजी मूंदड़ा, श्री सेठ गौरीशंकरजी गोयनका, श्री सेठ सुन्दरलालजी सौंथलिया, श्री सेठ कालूरामजी सरावगी, श्री सेठ बिहारीलालजी झुंझनूवाला, श्रीसेठ आनन्दराजजी सुराणा और इस समिति के मन्त्री श्री गणेशदासजी होलानी को है; जिन्होंने अहर्निश परिश्रम करके तथा तन, मन और धन से सहायता देकर देहली के सफलताका चार चांद लगाया है। इनका मैं विशेष आभारी हूं साथ ही बाबूरामनारायणजी जो कि सेठ दुर्गाप्रसादजी धानुका के मुनीम हैं, उनका मैं विशेष धन्यवाद करता हूं कि उनके अथक परिश्रम से पाकशाला का सुप्रबन्ध रहा है।

निवास समिति—

देहली शहर में शरणार्थियों के असाधारण उपस्थिति के कारण देहली नगर में कोई भी धर्मशाला तथा सार्वजनिक स्थान रिक्त न होने से स्वागत समिति के सदस्यों को निवास सम्बन्धी एक बड़ी—जटिल समस्या उपस्थित हो गई थी, परन्तु श्री वैद्य मुन्नीलालजी गोस्वामी तथा वैद्य ओंकारप्रसादजी प्रधान मन्त्री स्वागत समिति के अथक परिश्रम से सात धर्मशालायें प्राप्त हो गईं। मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं होता कि बाहर से आये हुए प्रतिनिधियों के लिये प्रत्येक प्रकार की सुविधा तथा आवश्यक उपकरण तेल, साबुन, दन्तधावन, गर्म जल आदि की सुव्यवस्था वैद्यराज श्री गोपालसहायजी तथा गोस्वामी मुन्नीलालजी एवं महाशय हरिश्चन्द्रजी के अनवरत परिश्रम से सम्पन्न हुई। अतः इन महानुभावों का मैं विशेष आभारी हूं।

मण्डप समिति—

स्वागत समिति ने निश्चय किया कि सभा मण्डप, प्रदर्शनी, पाकशाला ये एक ही स्थान पर हों; परन्तु दिल्ली जैसे विशाल नगर में लाखों की संख्या में शरणार्थियों ने आकर कोई स्थान और उद्यान रिक्त नहीं छोड़ा, जिससे यह कार्य सुचारु रूप से सम्पन्न हो सके। यह कहते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होती है कि वैद्यरत्न श्री परमानन्दजी, श्री केशवप्रसादजी आत्रेय और वैद्य रामचन्द्रजी के सहयोग से गांधी ग्राउंड म्युनिसिपैलिटी से प्राप्त करने में हम सफल हो सके।

यह तो स्वागत समिति को पहिले से ही अनुभव था कि देहली भारत की राजधानी तथा केन्द्रीय स्थान होने के कारण बाहर से आने वाले वैद्य बन्धुओं की संख्या अन्य सम्मेलनों की अपेक्षा बहुत होगी, इसलिये सभा मण्डप का निर्माण भी विशाल करना पड़ा; जिसमें कम से कम पांच हजार व्यक्ति सुगमता से बैठ सकें।

मण्डप समिति ने अहर्निश परिश्रम करके एक विशाल मण्डप का निर्माण किया, जिसमें लगभग एक सौ मखमली सोफासेट और २००० कुर्सियां थी बीच में मखमली कालीनों से सुसज्जित सभा मञ्च बनाया गया था। सभा मञ्च के पृष्ठ भाग में श्री भगवान धन्वन्तरि तथा महर्षि चरक और शल्याचार्य सुश्रुत के विशाल चित्रों से विभूषित किया गया था। समागत प्रान्तों के प्रतिनिधियों के बैठने के लिये अथक् अथक् स्थान निश्चित थे, जिन पर प्रत्येक प्रान्त की तख्ती लगी हुई थी। सभामञ्च के चारों ओर आधुनिक रंग बिरंगे बिजली के बल्बों से सभा मञ्च जगमगा रहा था। इसका श्रेय

सभामण्डप समिति को तो है ही, किन्तु, विशेषकर बाबू शान्तिप्रसादजी जैन धन्यवाद के पात्र हैं, जिनके अथक् परिश्रम से इस विशाल मण्डप का निर्माण हो सका।

स्वयंसेवक समिति—

महासम्मेलन के कार्य में यदि सबसे कठिन कार्य है तो वह स्वयंसेवकों का ही है। सम्मेलन की सफलता का बहुत बड़ा भाग स्वयं सेवकों पर ही निर्भर है। अच्छे कर्तव्य परायण स्वयं सेवकों के बिना कोई भी सार्वजनिक कार्य सफल नहीं हो सकता। किन्तु हमारे सौभाग्य से हमारे स्वयंसेवकों ने यथास्थान तथा यथा कार्य पर नियुक्त किए हुए अपने कर्तव्यों को बहुत ही सुन्दर रूप से पालन किया है। स्वयंसेवकों ने अपना दो स्थानों पर प्रबन्ध कार्यालय स्थापित किया; एक रेलवे स्टेशन और दूसरा सभामंडप के बाहर। रेलवे स्टेशन पर लगभग सौ स्वयंसेवक कविराज श्री भुवनचंदजी जोशी की संरक्षकता में स्वयंसेवकी का कार्य कर रहे थे, उनका मुख्य कार्य था कि बाहर से पधारे हुए प्रतिनिधियों को गाड़ी से उतार कर कार्यालय में लाना और कार्यालय के आदेशानुसार यथा स्थान पहुंचाना। अतः बाहर से आये हुए किसी भी वैद्य महानुभाव को किसी प्रकार का कष्ट अज्ञात होने पर भी न उठाना पड़ा।

दूसरा कार्यालय सभा मंडप के बाहर था, जो कि श्री कविराज श्रीपतिजी बी० ए० और पं० जयचंदजी शर्मा की अध्यक्षता में कार्य कर रहा था, जिसमें दो सौ स्वयंसेवक थे। उनका प्रधान कार्य सभा मंडप में शांति-पूर्वक व्यवस्था रखना, प्रदर्शनी और पाठशाला के कार्यों को सम्यक् प्रकारेण देखभाल करना था। हमारे स्वयंसेवक दल ने अपना कर्तव्य पालन करने में अपने सुखों को छोड़कर आगन्तुक प्रतिनिधियों को अपनी सेवा से इतना प्रभावित किया कि हठात् प्रतिनिधिगणों का उनकी भूरि भूरि प्रशंसा करनी पड़ी। कई महानुभावों ने तो यहां तक कह दिया कि ऐसा सुन्दर सुप्रबन्ध किसी अन्य सम्मेलन में देखने में नहीं आया। क्यों न हो आखिर तो दिल्ली स्वतंत्र भारत की राजधानी है।

इस सफलता का विशेष श्रेय तिब्बिया कालेज के उन ७० छात्रों को है, जिन्होंने अपनी स्वेच्छा से स्वयंसेवक दल में नाम लिखाकर अपनी अभूतपूर्व सेवा द्वारा महासम्मेलन को सफल करने में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं रखी। अतः तिब्बिया कालेज के छात्र मंडल विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

प्रचार प्रकाशन विभाग—

दिल्ली तथा नई दिल्ली और अन्य स्थानों की भी जनता में जहां अधिवेशन में उपस्थित होकर उसको सफल बनाने के लिये प्रचार किया गया, वहां समाचार पत्रों में आयुर्वेद महासम्मेलन के वार्षिक अधिवेशन की विशेषता पर और विशेष रूप में आयुर्वेद के विषय में सरकार की नीतिपर प्रकाश डालने का यत्न किया गया। इस विषय में समाचार पत्रों में लेख तथा पत्रक आदि भेजे गये। नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन की ओर से इस विषय में एक पत्रक छपवाकर वितरण किया गया

नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन की स्वागत कारिणी समिति की ओर से दो प्रेस सम्मेलनों का भी आयोजन किया गया था। एक प्रेस सम्मेलन अधिवेशन के एक मास पूर्व डेविको रैस्टोरां में किया गया। इसमें आयुर्वेद का पक्ष समर्थन करने के लिये वैद्य समाज के स्थानीय नेता श्री ओंकारप्रसादजी, श्री गुरुदत्तजी, पं० रामगोपालजी, श्री केशवप्रसादजी तथा अन्य सज्जन उपस्थित थे। स्थानीय समाचार पत्रों के प्रतिनिधि तथा सेवा-समितियों के प्रतिनिधि भी सम्मिलित थे।

इस कान्फ्रेंस में ही गुरुदत्तजी एम० एस० सी० प्रचार मन्त्री स्वागत समिति ने आयुर्वेद के पक्ष की स्थापना की। उन्होंने बताया कि चोपड़ा कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित हुए डेढ़ वर्ष से अधिक हो चुका है और उस पर सरकार ने न केवल कोई कार्य ही नहीं किया; प्रत्युत उस के विरोध में कार्यारम्भ कर दिया है। श्री गुरुदत्तजी ने यह बात समाचार पत्रों के प्रतिनिधियों के समक्ष रखी कि चोपड़ा कमेटी में डाक्टरों का बहुमत होते हुए भी, सरकार की ओर से सहायता तथा प्रोत्साहन दिलाने की सिफारिश की गई है। इस पर भी सरकार का स्वास्थ्य विभाग इसका विरोध कर रहा है। गुरुदत्तजी ने अपना मत बताया कि स्वतन्त्र देश की सरकार अपने से नियुक्त विशेषज्ञों की कमेटी की सम्मति की अवहेलना नहीं कर सकती। ऐसा करने से तो कमेटी नियुक्त करने के आयोजन का ही मटियामेट हो जावेगा। यदि स्वास्थ्य विभाग का मत ही चलना था, तो विशेषज्ञों की कमेटी बिठाने की आवश्यकता नहीं थी। यह कान्फ्रेंस सफल रही। इसके पश्चात नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन की चर्चा और आयुर्वेद के प्रति सरकार की नीति की आलोचना आरम्भ होगई।

प्रचार के सम्बन्ध में नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के दो दिन पूर्व महासम्मेलन का एक शिष्टमंडल केन्द्रीय सरकार की स्वास्थ्य मन्त्रिणी श्री राजकुमारी
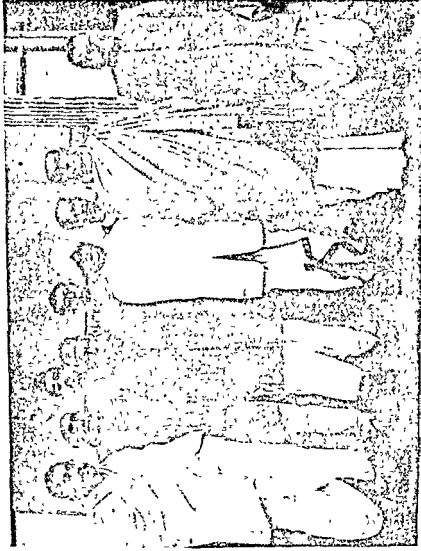
स्वागत समिति द्वारा आयोजित पत्रकार-सम्मेलन—श्री सारस्वतजी, प्रधानमन्त्री श्री गुरुदत्तजी, श्री केशवप्रसादजी आत्रेय, अध्यक्ष आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी, कविराज हरिरंजन मजूमदार।

अमृतकौर से मिलने के लिए भेजा गया। उसमें महासम्मेलन के प्रधान श्री आचार्य यादवजी त्रिकमजी; डाक्टर श्री निवासमूर्ति, सुब्रामनियम्, गुरुदत्तजी तथा गणेशदत्तजी सारस्वत प्रभृति महानुभाव थे। उसने चोपड़ा कमेटी के विरुद्ध केन्द्रीय सरकार के स्वास्थ्य विभाग की नीति का घोर विरोध किया। स्वास्थ्य मंत्रिणीजी ने शिष्टमंडल से उसके दृष्टिकोण पर विचार करने का वचन दिया।

इसी शिष्टमंडल से मिलने के लिए दूसरा प्रेस सम्मेलन का डेविको रेस्टोरां में महासम्मेलन से एक दिन पहिले १८ फरवरी के सायंकाल का आयोजन किया गया। इस में डा० श्री निवासमूर्ति ने डायरेक्टर जनरल आफ हैल्थ फार इण्डिया के उस पत्रक का घोर विरोध किया, जो उसने राज्यों की सरकारों के स्वास्थ्य विभागों को चोपड़ा कमेटी की रिपोर्ट को लागू करने के विरोध में भेजा था।

श्री श्री निवासमूर्ति के वक्तव्य का समाचार पत्रों के प्रतिनिधियों पर अच्छा प्रभाव पड़ा और सरकार की इस नीति का घोर विरोध किया गया। इस वक्तव्य को सब राज्यों के स्वास्थ्य विभागों को भेजा गया और इसका प्रभाव यह हुआ कि आयुर्वेद की प्रगति को रोकने का डायरेक्टर जनरल आफ हैल्थ का प्रयत्न बहुत अंशों में विफल गया।

इस पर भी केन्द्रीय सरकार की आयुर्वेद विरोधी नीति पर कुछ अधिक प्रभाव नहीं हुआ और इस विषय में आयुर्वेद महासम्मेलन के अधिवेशन में एक प्रस्ताव पास करने का निश्चय किया गया।

नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७ वें अधिवेशन के अवसर पर किए गए प्रचार कार्य का प्रभाव वैद्य समाज, जनता और राज्यों की सरकार पर हुए बिना नहीं रहा।

नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन

१९५०-५१ के पदाधिकारी और स्थायी समिति

अध्यक्ष—आचार्य श्री यादवजी त्रिकमजी

उपाध्यक्ष—वैद्य श्री शिवशर्माजी बम्बई

वैद्य श्री ओंकारप्रसादजी शर्मा

प्रधान मन्त्री—	वैद्य गुरुदत्तजी, नई देहली।
संयुक्त मन्त्री—	वैद्य वामनराव दीनानाथ, बम्बई।
सहकारी मन्त्री—	वैद्य आशुतोष मजूमदार, नई देहली।
	वैद्य बाबूराम मिश्र, हापुड़।
	वैद्य कान्तिनारायण, पटियाला।
	वैद्य दयानिधि शर्मा, मेरठ।
कोषाध्यक्ष—	वैद्य शिवनाथ शर्मा, देहली।
प्रधान सम्पादक—	वैद्य पुरुषोत्तमदेव मुलतानी, देहली।

स्थायी-समिति के सदस्य

सर्वश्री वैद्य एम० वेंकट शास्त्री बेजवाड़ा, सी० वी० लक्ष्मीकान्त राजमहेन्द्री, गुलाबचन्द्र शर्मा गोहाटी, पूर्णचन्द्र रथपुरी, एम० रामचन्द्रन मैसूर, जानकीनाथ धार, बोगड़ा (श्रीनगर), महाशंकर नरोत्तम भट्ट भुज, शम्भूप्रसाद केशवलाल अहमदाबाद, अनन्तप्रसाद लक्ष्मीशंकर भावनगर, भुवनचन्द्र जोशी देहली, कैलाशचन्द्र अग्रवाल देहली, घनानन्द पंत देहली, श्रीपतिजी देहली, मनोहरलालजी देहली, धर्मेन्द्रनाथजी देहली, जयप्रकाश, काशीनाथ देहली, श्री दानरत्न पद्माचार्य काठमण्डु, प्राणनाथ पुष्करणा अमृतसर, कृष्णदत्त फिरोजपुर छावनी, मायाधारी शास्त्री अमृतसर, धनजीभाई के० ठाकुर बम्बई, भीकाजी विनायक डेग्वेकर जबलपुर, शिवशंकर पाण्डे सागर, नरहर विनायक तारे इन्दौर, सुरेन्द्रबहादुर शर्मा ग्वालियर, रामप्रताप शर्मा सरहिन्द, केदारनाथजी नागपुर, कालीदास चट्टोपाध्याय बागरहाट, गणपति मिश्र कलकत्ता, नित्यानन्द सारस्वत पिलानी, विश्वप्रिय शास्त्री भरतपुर, कृष्णगोपाल शर्मा कोटा, ईश्वरदास स्वामी जयपुर, रामनिवास वैद्य मलसीसर, भूमरमलजी सुजानगढ़, चिरंजीलाल शर्मा इस्लामपुर, गोपालचन्द्र शास्त्री राजगढ़, कल्याणदत्त केकड़ी (अजमेर), गयाप्रसाद शास्त्री हैदराबाद, चन्द्रविशाल त्रिपाठी

कानपुर, अम्बिकाचरणजी आगरा, सत्यव्रतजी प्रेमी परीक्षतगढ़ (मेरठ), रामप्यारे अवस्थी कानपुर, श्री रामगोपालजी मथुरा, शिवदत्तजी पीरक्षतगढ़ (मेरठ), जगदीशप्रसादजी सहारनपुर, काशीनाथ शास्त्री बनारस, विश्वनाथ पीलीभीत, सरोजनीदेवी वैद्या मेरठ, राधावल्लभजी रीवां, सुखरामप्रसाद पटना।

कार्यकारिणी के सदस्य

सर्वश्री वैद्य डा० लक्ष्मीपति मद्रास, केप्टन जी० श्री निवासमूर्ति मद्रास, डा० वी सुब्रह्मण्यम श्रीरंगम, जगदीश्वर शर्मा गोहाटी, पूर्णचन्द्र रथ पुरी, डी० के० भारद्वाज बेंगलौर, विश्वनाथ बी० ए० जम्मू, जीवराम कालीदास गोंडल, चुन्नीलाल रेवाशंकर बड़ौदा, बापालाल गड़बड़दास सूरत, शशिकान्त भूलाभाई अहमदाबाद, श्रीपति देहली, कैलाशचन्द्र अग्रवाल देहली, मनोहरलाल देहली, घनानन्द पंत देहली, धर्मेन्द्रनाथ देहली, जयप्रकाश शर्मा देहली, भुवनचन्द्र शर्मा देहली, काशीनाथ देहली, कंवर रामेश्वरसिंह जालंधर, विप्रबन्धु एम० ए० अमृतसर, प्रकाशनाथ तिवारी जालंधर, रामप्रसाद पटियाला, मंगलदास स्वामी जयपुर, मणिरामजी रतनगढ़, उदयचन्द्र भट्टारक जोधपुर, स्वामी जयरामदास जयपुर, नन्दकिशोरजी जयपुर, शिवशर्मा द्विवेदी अजमेर, गयाप्रसाद शास्त्री हैदराबाद, जगन्नाथ शुक्ल इलाहाबाद, सरोजनीदेवी मेरठ, बद्रीविशाल कानपुर, गणेशदत्त सारस्वत हरिद्वार, गणेशदत्त मेरठ, रामरक्षपाठक बेगूसराय, रामनारायण पटना, प्रतापकुमारजी बम्बई, भीकाजी विनायक डेम्बेकर जबलपुर, गोवर्धन शर्मा छांगाणी नागपुर, सुन्दरलाल शुक्ल जबलपुर, ख्यालीराम द्विवेदी इन्दौर, नन्दकिशोरजी इन्दौर, पुरुषोत्तम शास्त्री हिर्लेकर अमरावती, कालीदास चट्टोपाध्याय बागरहाट, विजयकाली भट्टाचार्य कलकत्ता, हरिवत्त जोशी कलकत्ता, चन्द्रमणिप्रसाद रीवा।

नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ

पदाधिकारी और कार्यकारणी के सदस्य

अध्यक्ष—	आचार्य श्री मणिरामजी शर्मा।
उपाध्यक्ष—	वैद्य उपेन्द्रनाथ दास दिल्ली।
	वैद्य मुंशीरामजी भटिण्डा।
मन्त्री—	वैद्य रामगोपालजी दिल्ली।
उपमन्त्री—	वैद्य वैद्यनाथ शर्मा बगड़।
	वैद्य रामचन्द्र शर्मा दिल्ली।
कोषाध्यक्ष—	वैद्य शिवनाथ शर्मा दिल्ली।

कार्यकारिणी के सदस्य

सर्वश्री वैद्य मनोहरलाल जी, शंकरदेव जी, धर्मेन्द्रनाथ जी, परमानन्द जी, जगदीशप्रसादजी, केशवप्रसादजी आत्रेय, नानकचन्दजी, घनानन्दजी पन्त (देहली), माधव मैनन (मालाबार) दुर्गादत्त शास्त्री (बनारस), गयादत्त शास्त्री (हैदराबाद), गंगाधर नीलकण्ठ ओखडे (ग्वालियर), गणेशदत्त सारस्वत (हरिद्वार) गणेशदत्त जी (मेरठ), चक्रपाणी शास्त्री (मथुरा), जगन्नाथप्रसाद शुक्ल (प्रयाग), स्वामी जयरामदास (जयपुर), डी० के० भारद्वाज (बेंगलौर) त्र्यम्बक शास्त्री आप्टे (पूना), दयानिधि शर्मा (मेरठ), दामोदर अनन्त हुलमीकर (हुबली), नन्दकिशोर शास्त्री (जयपुर), नोरीराम शास्त्री (बेजवाड़ा), पी० एच० देशपाण्डे (पूना), पुरुषोत्तम शास्त्री हिर्लेकर (अमरावती), बद्रीविशाल त्रिपाठी (कानपुर), बलवन्त शर्मा दीक्षित (जामनगर). ब्रह्मदत्त शर्मा (भुसावल), मुरलीलाल (बुलन्दशहर), रामगोपालजी (मथुरा), रामरक्ष पाठक (बेगूसराय), रामधन शर्मा (आगरा), लक्ष्मीनारायण मिश्र (मेरठ), विजयकाली भट्टाचार्य (कलकत्ता), विश्वनाथ द्विवेदी (पीलीभीत), वामनराव दीनानाथ (बम्बई), बाबूराम मिश्र (हापुड़), वाई पार्थनारायण (शिमोगा), वी० वी० नटराज शास्त्री (मद्रास), शचीन्द्रनाथ चटर्जी (कलकत्ता), सरोजनीदेवी (मेरठ), मायाधारी शास्त्री (अमृतसर), नागरदास मोहनलाल पाटन (अहमदाबाद), सुरेन्द्रकुमारदास (कलकत्ता); सत्यव्रत प्रेमी (परीक्षतगढ़), हरिदत्त शास्त्री (आगरा), हरिप्रसाद सी. भट्ट (बड़ौदा), हरिदत्त शास्त्री (जालन्धर), हनुमतप्रसाद शास्त्री (बीकानेर), पं० वाचस्पति शर्मा (खुर्जा)।

मान्यसंरक्षक १०००) प्रदान करने वाले

सर्वश्री सेठ चुन्नीलाल जयपुरिया ११००), शंकरलालजी, कविराज हरिरंजन मजूमदार, मैसर्स विष्णु एक्सचेंज लिमिटेड, राजेन्द्रकुमार जैन, मेसर्ज वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड पटना।

संरक्षक ५००) देने वाले

सर्वश्री पं० शिवनाथजी, मांगीलालजी, मेसर्ज दीनानाथ नानकचंदजी, मेसर्ज हमदर्द दवाखाना देहली, ।

आश्रयदाता २५१) प्रदान करने वाले

सर्वश्री नारायणदत्तजी शर्मा, लाला आनन्दराजजी सुराना, मैसर्ज दुर्गा-टिम्बर वर्क्स, लाला सिद्धोमल एण्डसंस, लाला हंसराजजी गुप्ता, मैसर्ज नथमल गिरधारीलालजी, लाला परसादीलालजी भगवानदासजी पाटनी, सेठ धूज-

लालजी कनडीवाल, मैसर्ज दुर्गाप्रसादजी चिरंजीलालजी, रामेश्वरदास छोटेलालजी खारीबावली, रायसाहब लाला आदीश्वरलालजी जैन, श्रीराम मुरलीधरजी २०१), बृजमोहनलालजी रईस, रायसाहब मीनामलजी, २०१) मैसर्ज प्रेमसुखलालजी भाबला।

विशिष्ट सदस्य १०१) प्रदान करने वाले

सर्वश्री लाला हरिश्चंदजी १५०), मैसर्स नाथूराम रामनारायण, लाला श्यामलालजी वैद्य गोपालसहायजी, मैसर्ज सुरतराम छोटेलालजी, सिंघानिया धर्मार्थ ट्रस्ट, श्री गोपाल वासुदेवजी, शिवलाल सूरजबक्सजी, मैसर्ज भानामल गुलजारीलालजी, मैसर्ज मनोरंजन फिल्म कम्पनी, पं० मनोहरलालजी वैद्यराज, डा० आर० एस० शर्मा, वैद्य परमानंदजी, ओमप्रकाशजी, मैसर्ज रामसेवक हरिरामजी, सेठ शिवदास मुन्दड़ा ट्रस्ट, नाभिरायजी जोशी, मैसर्स बनवारीलालजी भाबला, छोटेलाल सांवलदासजी लोहिया, वैद्य घनानन्दजी पंत, गुरुदत्तजी, लाला रघुवरदयालजी, छोटेलाल सांवलदासजी, रामकृष्णजी, कविराज सत्यव्रतीजी, अमरनाथजी, लाला भीखूरामजी, मनोहरलालजी जौहरी, रा० ब० चौ० रघुनाथसिंहजी, ओमप्रकाशजी जैन, रा० ब० लाला गनपतजी, बाबू रघुनाथप्रसादजी।

मान्य सदस्य ५१) प्रदान करने वाले

मैसर्ज मदन एण्ड को०, मैसर्स शंभूनाथ नारायणदासजी, श्रीदयाल आनन्दकुमारजी, मैसर्ज अशर्फीनाथ केदारनाथजी, पं० रामगोपालजी वेनीप्रसादजी, लाला हुकमचंद जगाधरमलजी, लाला नंदूमल पुरुषोत्तमदासजी, छोटेलाल रामकिशोरजी, देहली आयुर्वेदिक फार्मेसी, शंकरनारायण देवगिरे, श्रीदयालजी वैद्य, मैसर्ज अनराज नारायणदासजी ७१) सेठ विहारीलालजी झुंझनूवाला, चांदमल गौरीशंकरजी, सेठगणेशीलालजी श्यामविहारीलालजी, सेठ वैजनाथ जी विहारीलालजी, मैसर्स करोड़ीमलजी देवीसहायजी, सेठरामगोपालजी ओंकारमलजी, सेठ कालूराम महावीरप्रसादजी, सेठ भागीरथमल रामस्वरूपजी, सेठ जयनारायण लक्ष्मीनारायण जी, सेठ लक्ष्मीनारायण गाड़ोदिया, मैसर्स खुशालचंदजी कन्हैयालालजी, न्यादरमलजी लोहिया, मैसर्स मोतीराम नरसिंहदासजी, श्री रतनलालजी, लाला मदनलालजी, महेन्द्रदेव शास्त्री हकीम किशोरीलालजी।

सदस्य २५) प्रदान करने वाले

मैसर्स लक्ष्मनदास रामचंद लोहिया ३१), महाशय हरिश्चंद्रजी, पं० सुल्तानसिंहजी, लक्ष्मणदासजी जयदयालजी, रायप्रसादजी सर्राफ, लाला
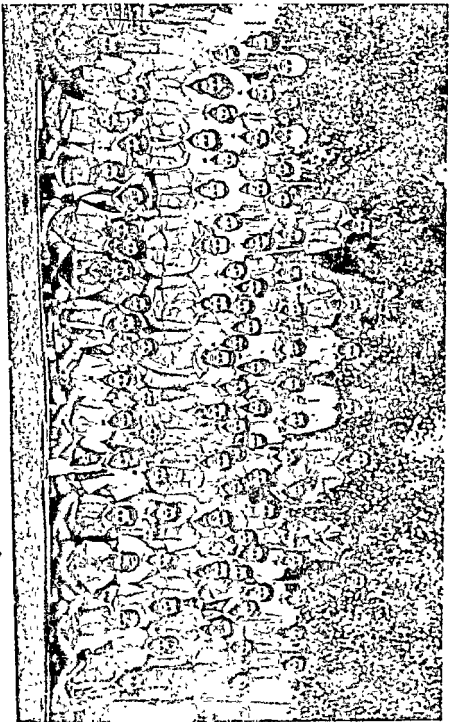
स्वयंसेवक-दल के साथ स्वागतमन्त्री श्री ओंकारप्रसादजी शर्मा
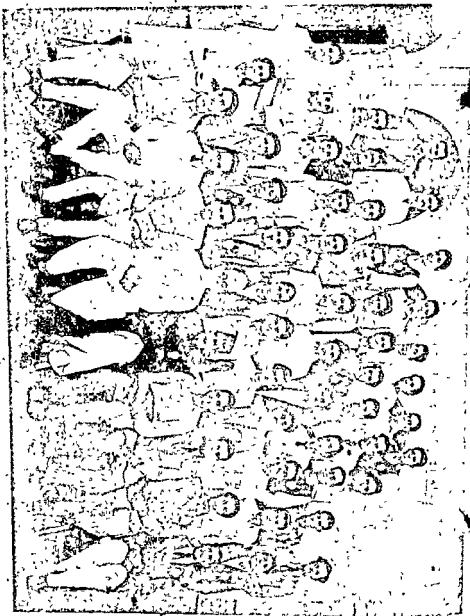
रोशनलालजी केडिया, चौथमल घनश्यामदासजी, लाला वासुदेवजी सर्राफ, मेसर्स साँवलदास गणेशदासजी, लाला रूपचंदजी जैन, लाला रतनलालजी, लाला बालमुकुन्दजी, लाला बैजनाथ बालकृष्णदासजी, लाला मनोहरलाल अजितप्रसादजी, मैसर्स गिरधरलाल बैजनाथ, मैसर्स रामचंद कृष्णचंद, हनुमानप्रसाद माहेश्वरी, बछराजजी सर्राफ, जानकीदास बनारसीदास, मोहनलाल रोशनलाल सेठ मुरलीधर श्यामसुन्दरजी, सीताराम बनारसीदास, मैसर्स विश्व फेबरीज लिमिटेड, मैसर्स जमनादास रामेश्वरदास, गोवर्द्धनदासजी पोद्दार, मेसर्स गिरधारीलालजी सत्यनारायणजी, सेठ मूलचंदजी बगड़िया, सेठ रामप्रसादजी पोद्दार, सेठ बैजनाथजी, बाबू चंपालालजी, बाबू घनश्यामदासजी केडिया, सेठ राधाकृष्णजी डालमिया, रामनिवासजी अग्रवाल, बाबू छुट्टनलालजी, बाबू हरिरामजी टीबड़ेवाले, बाबू आनंदस्वरूपजी, वियोगीहरिजी, लक्ष्मणप्रसादजी, डा० धर्मप्रकाशजी गुप्त, शिवचरणजी, चतुरसिंहजी, प्रह्लादरायजी रूंगटा, त्रिवेदीजी, ताराचंदजी बंशल, चौ० दलीपसिंहजी, रामजीलालजी रामस्वरूपजी, राधाकृष्णजी लोहिया, मैसर्स मातूराम दुलीचंद, मैसर्स मोहता अग्रवाल, हेमराज शिवरामदास मैसर्स प्रेमसुखदास नरसिंहदास, रामेश्वरदास रामनारायणलोहिया, रतनलालजी जैन, गौरीशंकर श्यामसुन्दरजी, रामबाबू गुप्त, रामकृष्णजी सोगानी, भगवानदासजी, अमरनाथजी, लाला हरिरामजी, लाला नंदकिशोरजी, हेमचंदजी जैन, एम० एस० भटनागर, त्रिलोकीनाथजी, वी० पी० जैन, नंदकिशोरजी, सुमनजी, विशेचंदजी, प्यारेलालजी, लाला परमानंदजी, चौधरी घासीरामजी।

वैद्यसदस्य ११) प्रदान करने वाले

सर्वश्री मोहनलालजी, गणेशदत्तजी, आशुतोषजी मजूमदार, गुरुदत्तजी, जगदीशप्रसादजी, परमानन्दजी, शंकरदेवजी, गोपालसहायजी, मोहनलालजी, प्रभुदयालजी, रघुनाथरायजी, बैद्यनाथ सरकार. राजवैद्य श्री शीतलप्रसाद एण्ड संस, सत्यनारायणजी बरुआ, हकीम किशोरीलालजी, रूपादत्तजी शास्त्री, चन्द्रकान्तजी दीक्षित, रामेश्वरदासजी, सुरेन्द्रनारायणजी, रामचन्द्रजी शर्मा, सत्यव्रत भारद्वाज, मन्तकुमारजी मिश्र जोशी, गयाप्रसादजी भट्ट, मांगीलालजी भगवतीप्रसादजी, इन्द्रामणिजी, ओंकारप्रसादजी शर्मा, मामनसिंहजी प्रेमी, बालकृष्णजी शर्मा, भुवनचंदजी जोशी, श्रीदयालजी, चंद्रशेखर शास्त्री, उपेन्द्रनाथदास, राधाकृष्णजी उपाध्याय, शुकदेवजी, श्रीगोपालजी, बलरामजी शर्मा, सुधन्वाजी, शिवनाथजी, सुधांशुशेखरजी, नित्यानन्दजी पांडेय, पूर्णचंदजी,

बालकृष्णजी, नंदकिशोरजी, दामोदरप्रसादजी, विश्वनाथजी शास्त्री, गोविंद सहाय दत्त, धर्मेन्द्रनाथजी कैलाशचंदजी, जगदीशप्रसादजी, वासुदेवजी, मुन्नीलालजी गोस्वामी, नारायणदत्तजी, रामचन्द्रजी, प्रफुल्ल, कन्हैयालालजी, गणपतिप्रसादजी सेठ फकीरचन्दजी, वैद्य आर्येन्दजी, वैद्य बृजलालजी ठाकुरदास गुलाबदास, लच्छूमलजी गोटेवाले, वैद्य नेमचन्दजी जैन, चिरंजीलाल देवीसहाय, मैसर्ज सीताराम हासानन्द, दरबारीमलजी जैन, श्यामलाल सुन्दरलालजी, प्यारेलाल बल्देवप्रसाद, शिब्बनलाल हरनामदास, रामस्वरूप श्यामसुन्दर, बीरबलदास ओमप्रकाश, मैसर्स कपूरब्रादर्स नई सड़क, मैसर्स जोहरीमल श्यामलाल नई सड़क, रामनाथ त्रिलोकीनाथ, रामरतनमल पंजाबी, शंकरलाल बनवारीलाल, शीलचंदजी छिपीयां गली, मैसर्स सेवाराम छोटेलाल, कविराज गौरीलालजी, श्रीकृष्णदासजी लोहिया, विशम्भरदास बद्रीदासजी; नंदलालजी हकीम, प्रकाशचंद शीलचंद सर्राफ, महाशय केशवशरणजी, काशीराम टोपीवाला, जंगलीमल अनूपसिंहजी, लाला हरतचंदजी, लाला जीवाराम गौरीशंकरजी, ला० रूपसैनजी जैन, ला० जगन्नाथ लच्छूमलजी, गंगाराम शंकरलाल, सूर्यभान गजानन, महादेवप्रसाद बाबूलाल, वंशीधर रतनलाल, वैजनाथ चंद्रभान, तुलसीराम विजयकुमारजी, शिवजीरामजी शर्मा, वैद्य मनोहरललाजी, वैद्य लक्ष्मीशंकरजी, कविराज ज्योतिषचक्र भट्टाचार्य, वैद्य मक्खनलालजी, घनानन्दजी पंत, केशवप्रसादजी आत्रेय, दीनदयालजी, जटाशंकरजी, कुंजबिहारीलालजी, नारायणदत्तजी, रामेश्वरदत्तजी, हरिदत्तजी, ठाकुरदत्तजी, मुलतानी, रामनाथजी, प्रेमचंदजी, यदुगोपाल गोस्वामी, दीपचंद, गंगादत्तजी, दिनकर शर्मा, रामसहायजी, मैसर्स सोमधारा फार्मेसी, गणपतलाल, मैसर्स रामऔषधालय देहली, प्रेम धाम फार्मेसी, डा० बालकृष्णजी नारंग, मैसर्स मुरारी ब्रदर्स देहली, ओमप्रकाशजी जीवक, बनवारीलालजी, बुद्धिप्रसादजी ।

स्टाल शुल्क

५०) श्री डी० के० साधु ब्रादर्स
१००) मैसर्स वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन
५०) श्री कृष्णा फार्मेसी अमृतसर
५०) श्री जी० ए० मिश्र फार्मेसी झाँसी
६०) श्री महावीर औषधालय अकोला
५०) श्री आयुर्वेदीय कैमीकल रिसर्च
१००) श्री राजवैद्य शीतलप्रसाद एण्ड संज

५०) श्री भारत सेवक औषधालय
५०) श्री वैद्य गंगासहाय डीडवाना
५०) श्री झंभा फार्मेसी झंभा
५०) श्री काश्मीर आयुर्वेदिक वर्क्स अमृतसर
५०) श्रीधूत पायेश्वर पनवेल
५०) श्री हिन्द रिसर्च लेबोरट्री
१०) श्री अमोतो फार्मेसी
५०) श्री दून फार्मेसी देहरादून
५०) श्री सनातन आयुर्वेदिक फार्मेसी हरद्वार
५०) श्री मैसर्स संतसिंह हरनामसिंह अमृतसर
५०) श्री वैदिक औषधालय आगरा
५०) श्री आयुर्वेदिक इंजैक्शन एजेन्सी
२५) श्री मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटी
२५) श्री हमदर्द दवाखाना देहली
४०) श्री अमोलो फार्मेसी
५०) श्री आ० औषध निर्माण संघ
४०) श्री आ० अमृत रसायनशाला
२५) श्री आ० आश्रम फार्मेसी

स्वागत समिति

३७ वां निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, देहली

आय व्यय विवरण

आय

	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०
विशिष्ट संरक्षकता शुल्क	६,१००—०—०	
मान्य संरक्षकता शुल्क	२,०००—०—०	
संरक्षकता शुल्क	३,६६३—०—०	
		११,७६३—०—०
विशिष्ट सदस्यता शुल्क	३,३७०—०—०	
मान्य सदस्यता शुल्क	१,४९९—०—०	
साधारण सदस्यता शुल्क	३,४३३—०—०	
		८,३०२=०—०
दर्शक शुल्क		९२२—०—०
प्रतिनिधि सदस्यता शुल्क (३२१ प्रतिनिधियों का १॥/प्रति सदस्य)		४८१—८—०
प्रदर्शिनी स्टाल शुल्क		१,२३५—०—०
कुल योग		२२,७०३-८—०

व्यय

	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०
आयुर्वेद प्रदर्शिनी	३,२८७—८—६	
भोजन तथा आतिथ्य सत्कार	४,५६४—१५-३	
मुद्रण तथा लेखनसामग्री	१,७५०—१०—९	
पण्डाल तथा सजावट आदि	१,७५२—०—०	
बिजली	७५५ १२—०	
वेतन	१,१२५—४—६	
डाक तथा तार	३०५—१३-६	
यातायात तथा यात्रा	४६१—१३--९	
प्रचार	४४८—१०-३	
टेलीफोन	४४—९—०	

निवास तथा स्वयं-सेवक	१,१८६—६—६
बैंक चार्जिज	४—१२—०
विविध	३५७—१५—६
आय की व्यय से अधिकता	६,६५४—१—६
	२२,७०३—८—०
कुल योग	२२,७०३—८—०

सर शंकरलाल के० टी०	ओंकारप्रसाद शर्मा	शिवनाथ शर्मा	तिलकराम शर्मा
स्वागत अध्यक्ष	प्रधानमन्त्री	कोषाध्यक्ष	अकाऊन्टेन्ट

जांचा और ठीक पाया

जे० सी० माथुर एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाऊन्टेन्टस्

३० अप्रेल १६५० को सन्तुलन पत्र

सम्पत्ति

		रु० आ० पा०
विभिन्न ऋण		४३६—०—३
निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के पास जमा		८५८—८—०
नकद रोकड़ तथा बैंक के पास :—		
यूनाईटिड कमर्शल बैंक		
(सेविंग खाता)	४,६४६-८-६	
नकद रोकड़	४१३-०-६	
		५,३५६—६—३
कुल योग		६,६५४—१—६

देय

	रु० आ० पा०
आय की व्यय से अधिकता :—	
उपरोक्त आय-व्यय के विवरणानुसार	६,६५४—१—६
कुल योग	६,६५४—१—६

सर शंकरलाल के० टी०	ओंकारप्रसाद शर्मा	शिवनाथ शर्मा	तिलकराम शर्मा
अध्यक्ष	प्रधानमन्त्री	कोषाध्यक्ष	अकाऊन्टेन्ट

हमने निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७वें वार्षिक अधिवेशन, जो कि १८ फरवरी से २१ फरवरी १६५० तक मनाया गया, की स्वागत समिति के ता० ३० अप्रैल १६५० तक के उपरिलिखित सन्तुलन-पत्र तथा उक्त तारीख तक के संलग्न आय-व्यय पत्र को हिसाब की किताबों, रसीदों तथा व्यय-पत्रों सहित जांचा और समस्त जानकारी तथा सूचनाएं प्राप्त कीं। हमारे विचार में उपर्युक्त सन्तुलनपत्र तथा संलग्न आय-व्यय पत्र ठीक बनाए गए हैं तथा सन्तुलनपत्र, हमें दी गई सूचना एवं प्राप्त की गई जानकारी के आधार पर, ३७ वें निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की स्वागत समिति की वास्तविक स्थिति का सच्चा और सही परिचायक है।

जे० सी० माथुर एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाऊन्टेन्ट्स

३७ वें निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन पर पधारने वाले प्रतिनिधियों की सूची

कविराज प्राणनाथ पुष्करणा अमृतसर, कविराज अवतारकृष्ण शर्मा गुरदासपुर, जगदीशप्रसाद वैद्य सहारनपुर, रमणीकलाल जेठालाल अहमदाबाद, सुन्दरलाल जबलपुर, रामसेवक शुक्ल जबलपुर, वैद्य प्रभुलाल अहमदाबाद, अमृतलाल गोपालजी आचार्य अहमदाबाद, कान्हदास स्वामी चुरु, पन्नालालजी बीकानेर, शिवचरण छांगाणी नागपुर, गोवर्धन शर्मा छांगाणी नागपुर, केदारनाथजी नागपुर, पं० स्वात्मारामजी अमृतसर, माधवप्रसादजी, महाराजा रामेशचन्द्रजी नागपुर, ब्रह्मदत्तजी शर्मा भुसावल, धर्मस्वरूपजी रतूड़ी देहरादून, ए० विजयसारथी मसूलीपटम (आंध्र), पी० श्रीनिवास राव मसूलीपटम (आंध्र) वैद्य वासुदेव शास्त्री उज्जैन, हरिप्रसाद सी० भट्ट बड़ौदा, ईश्वरदास स्वामी जयपुर, वैद्य निरंजनलाल शर्मा जयपुर, रामकिशोर शर्मा जयपुर, रामप्रकाश स्वामी जयपुर, स्वामी मंगलदासजी जयपुर, स्वामी जयरामदासजी जयपुर, राजवैद्य नन्दकिशोर जयपुर, दुर्गाप्रसाद पाठक जयपुर, रामदयालु त्रिपाठी हरदा, पं० छोटेलालजी सूरजगढ़, वैद्य मदनलाल पुष्करणा सूरजगढ़, श्री रामप्रताप अग्रवाल देहली, वैद्य रामसिंहजी जबलपुर, वैद्य विजयकाली भट्टाचार्य कलकत्ता, वैद्यरामप्रसन्न मिश्र कलकत्ता, पं० हरदेव शर्मा देहली, रामप्यारे अवस्थी कानपुर, बद्रीविशाल त्रिपाठी कानपुर, वैद्य कैलाशचन्द्र अग्रवाल देहली, वैद्य

रामरत्न पाठक वेगूपराय, गणेदत्त वैद्य मेरठ, ठाकुरदत्तजी वैद्य देहरादून, महेन्द्रनाथ शास्त्री बम्बई, वैद्य रामनारायणजी पटना, वैद्यप्रभुदयालजी आगरा, गणेशदत्त सारस्वत देहली, वैद्य रामसरूपजी देहली, वाई सूर्यनारायण राव वेजवाड़ा, स्वामी चेतनानन्दजी देहली, वैद्य श्रीगिरधरानन्द डालमियादादी, वैद्य पुरुषोत्तमदेव देहली, वैद्य श्रीदत्ताजी भिवानी (हिसार), सीताराम रींगस, वैद्य श्री डग्वेकर जबलपुर, वैद्य शंकरदत्त गौड़ जबलपुर, वैद्य बनाफरसिंह खन्डवाड़ा, शोभाराम शुक्ल पसखन (सी० पी०) यमुनाप्रसाद शर्मा जबलपुर, पुरुषोत्तमदास जबलपुर, श्री रामकृष्ण शर्मा भरथना, एन० बी० तारे इन्दौर, वैद्य रामेश्वर शास्त्री ग्वालियर, वैद्य कृष्णानन्द मिश्र देवास, वैद्य स्वामी रामदास जयपुर, वैद्य रामशिरोमणि द्विवेदी बम्बई, वैद्य मदनगोपाल हिसार, रविदत्तशास्त्री जलेसर (एटा), वैद्य बांकेलाल गुप्त विजयगढ़, मोनारामजी शास्त्री बम्बई, रामप्रसादजी रतलाम, वैद्य लक्ष्मीनारायण मेरठ, हीरालालजी धरमपुरी (सी० पी०), प्रेमशंकरजी उदयपुर, जगन्नाथप्रसाद इलाहाबाद, पुरुषोत्तमदत्तजी नवांशहर, आनन्दीलालजी सीकर, नलिनिरंजन सेन कलकत्ता, रघुवीर शर्मा भिवानी, देवराजजी शास्त्री अमृतसर, सत्यनारायणजी नेचवा, प्रेमप्रकाशजी आगरा, नथमल जोशी कानपुर, वैद्य मानचन्द्रजी जोधपुर, वैद्य भगवद्दासजी नापासर, क० सखारामप्रसाद पेरना, क० प्रतापसिंह उदयपुर, स्वामी केवलरामजी बीकानेर, वैद्य ज्वालाप्रसाद बोडवाड, वैद्य कृष्णपद भट्टाचार्य झांसी वैद्य शिवशर्माजी बम्बई, वैद्य रामप्रसादजी पटियाला, रामजीदासजी पटियाला, नित्यानन्द सारस्वत पिलानी, वैद्य विरञ्चि शर्मा इस्लामपुर, जयरामदास स्वामी बड़ागांव, ओंकारदत्तजी नवलगढ़, मुन्शीरामजी भटिण्डा, राजारामजी मौडमडी (पटियाला), कन्हैयालालजी भेड़ा बम्बई, लालाशंकर अग्निहोत्री सिकन्द्राबाद, दयानिधि स्वामी हृषीकेश; कल्याणदत्तजी केकड़ी, वैद्य अमरदत्तजी केकड़ी, रामप्रसाद दीक्षित बीकानेर, के० जी० श्री निवासमूर्ति मद्रास, डा० बी० सुब्रह्मण्यम नई देहली, गुलजारीलाल विष्णुगढ़, घनश्याम शर्मा रतनगढ़, मूलचन्द बहड़ लक्ष्मणगढ़, मणिरामजी रतनगढ़, गुलाबदत्तजी रामगढ़, मोहनलाल खाण्डल नवलगढ़, वैद्य विश्वनाथ द्विवेदी पीलीभीत, इन्दुशेखर भट्ट भरतपुर, वैद्य स्वामीदत्ताजी जावरा, वैद्य त्र्यम्बकलाल देवजी भाई जोशी भड़ौच, अलीभाई एम० जीवाभाई बम्बई, वैद्य मानसेन पुष्पसेन बम्बई, वैद्य चञ्चल बहन देसाई बम्बई, स्वामी ब्रह्मानन्दजी डेरा बाबा-जयमलसिंह, वैद्य भित्तालाल स्वामी नापासर, वैद्य श्री एच० सी० सत्यवादी खतौली, शिवशर्मा द्विवेदी अजमेर, हनुमत्प्रसादजी बीकानेर, वैद्यनाथ शर्मा जयपुर, मदनमोहन शर्मा भरतपुर, निरंजनानन्द अबोहर, कपिलदेव त्रिपाठी

सर शंकरलाल के० टी० ओंकारप्रसाद शर्मा शिवनाथ शर्मा तिलकराम शर्मा
अध्यक्ष प्रधानमन्त्री कोषाध्यक्ष अकाउन्टेन्ट

हमने निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के ३७वें वार्षिक अधिवेशन, जो कि १८ फरवरी से २१ फरवरी १९५० तक मनाया गया, की स्वागत समिति के ता० ३० अप्रैल १९५० तक के उपरिलिखित सन्तुलन-पत्र तथा उक्त तारीख तक के संलग्न आय-व्यय पत्र को हिसाब की किताबों, रसीदों तथा व्यय-पत्रों सहित जांचा और समस्त जानकारी तथा सूचनाएं प्राप्त कीं। हमारे विचार में उपर्युक्त सन्तुलनपत्र तथा संलग्न आय-व्यय पत्र ठीक बनाए गए हैं तथा सन्तुलनपत्र, हमें दी गई सूचना एवं प्राप्त की गई जानकारी के आधार पर, ३७ वें निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन की स्वागत समिति की वास्तविक स्थिति का सच्चा और सही परिचायक है।

जे० सी० माथुर एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

३७ वें निखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन पर पधारने वाले प्रतिनिधियों की सूची

कविराज प्राणनाथ पुष्करणा अमृतसर, कविराज अवतारकृष्ण शर्मा गुरदासपुर, जगदीशप्रसाद वैद्य सहारनपुर, रमणीकलाल जेठालाल अहमदाबाद, सुन्दरलाल जबलपुर, रामसेवक शुक्ल जबलपुर, वैद्य प्रभुलाल अहमदाबाद, अमृतलाल गोपालजी आचार्य अहमदाबाद, कान्हदास स्वामी चुरु, पन्नालालजी बीकानेर, शिवचरण छांगाणी नागपुर, गोवर्धन शर्मा छांगाणी नागपुर, केदारनाथजी नागपुर, पं० स्वात्मारामजी अमृतसर, माधवप्रसादजी, महाराजा रामेशचन्द्रजी नागपुर, ब्रह्मदत्तजी शर्मा भुसावल, धर्मस्वरूपजी रतूड़ी देहरादून, ए० विजयसारथी मसूलीपटम (आंध्र), पी० श्रीनिवास राव मसूलीपटम (आंध्र) वैद्य वासुदेव शास्त्री उज्जैन, हरिप्रसाद सी० भट्ट बड़ौदा, ईश्वरदास स्वामी जयपुर, वैद्य निरंजनलाल शर्मा जयपुर, रामकिशोर शर्मा जयपुर, रामप्रकाश स्वामी जयपुर, स्वामी मंगलदासजी जयपुर, स्वामी जयरामदासजी जयपुर, राजवैद्य नन्दकिशोर जयपुर, दुर्गाप्रसाद पाठक जयपुर, रामदयालु त्रिपाठी हरदा, पं० छोटेलालजी सूरजगढ़, वैद्य मदनलाल पुष्करणा सूरजगढ़, श्री रामप्रताप अग्रवाल देहली, वैद्य रामलिंगजी जबलपुर, वैद्य विजयकाली भट्टाचार्य-कलकत्ता, वैद्यराजप्रसन्न मिश्र कलकत्ता, पं० हरदेव शर्मा देहली, रामप्यारे अवस्थी कानपुर, बद्रीविशाल त्रिपाठी कानपुर, वैद्य कैलाशचन्द्र अग्रवाल देहली, वैद्य

रामरत्न पाठक वेगूपराय, गणेदत्त वैद्य मेरठ, ठाकुरदत्तजी वैद्य देहरादून, महेन्द्रनाथ शास्त्री बम्बई, वैद्य रामनारायणजी पटना, वैद्यप्रभुदयालजी आगरा, गणेशदत्त सारस्वत देहली, वैद्य रामसरूपजी देहली, वाई सूर्यनारायण राव बेजवाड़ा, स्वामी चेतनानन्दजी देहली, वैद्य श्रीगिरधरानन्द डालमियादादी, वैद्य पुरुषोत्तमदेव देहली, वैद्य श्रीदत्ताजी भिवानी (हिसार), सीताराम रींगस, वैद्य श्री डवेकर जबलपुर, वैद्य शंकरदत्त गौड़ जबलपुर, वैद्य बनारसिंह खन्डवाड़ा, शोभाराम शुक्ल पसखन (सी० पी०) यमुनाप्रसाद शर्मा जबलपुर, पुरुषोत्तमदास जबलपुर, श्री रामकृष्ण शर्मा मरथना, एन० वी० तारे इन्दौर, वैद्य रामेश्वर शास्त्री ग्वालियर, वैद्य कृष्णानन्द मिश्र देवास, वैद्य स्वामी रामदास जयपुर, वैद्य रामशिरोमणि द्विवेदी बम्बई, वैद्य मदनगोपाल हिसार, रविदत्तशास्त्री जलेसर (एटा), वैद्य बांकेलाल गुप्त विजयगढ़, मोतीरामजी शास्त्री बम्बई, रामप्रसादजी रतलाम, वैद्य लक्ष्मीनारायण मेरठ, हीरालालजी धरमपुरी (सी. पी.), प्रेमशंकरजी उदयपुर, जगन्नाथप्रसाद इलाहाबाद, पुरुषोत्तमदत्तजी नवांशहर, आनन्दीलालजी सीकर, नलिनिरंजन सेन कलकत्ता, रघुवीर शर्मा भिवानी, देवराजजी शास्त्री अमृतसर, सत्यनारायणजी नेचवा, प्रेमप्रकाशजी आगरा, नथमल जोशी कानपुर, वैद्य मानचन्दजी जोधपुर, वैद्य भगवद्दासजी नापासर, क० सखारामप्रसाद पेरना, क० प्रतापसिंह उदयपुर, स्वामी केवलरामजी बीकानेर, वैद्य ज्वालाप्रसाद चोडवाड, वैद्य कृष्णपद भट्टाचार्य झांसी वैद्य शिवशर्माजी बम्बई, वैद्य रामप्रसादजी पटियाला, रामजीदासजी पटियाला, नित्यानन्द सारस्वत पिलानी, वैद्य विरञ्चि शर्मा इस्लामपुर, जयरामदास स्वामी बड़ागांव, ओंकारदत्तजी नवलगढ़, मुन्शीरामजी भटिण्डा, राजारामजी मौडमंडी (पटियाला), कन्हैयालालजी भेड़ा बम्बई, लालाशंकर अग्निहोत्री सिकन्द्राबाद, दयानिधि स्वामी हृषीकेश, कल्याणदत्तजी केकड़ी, वैद्य अमरदत्ताजी केकड़ी, रामप्रसाद दीक्षित बीकानेर, के० जी० श्री निवासमूर्ति मद्रास, डा० वी० सुब्रह्मण्यम नई देहली, गुलजारीलाल विष्णुगढ़, घनश्याम शर्मा रतनगढ़, मूलचन्द बहड़ लक्ष्मणगढ़, मणिरामजी रतनगढ़, गुलाबदत्तजी रामगढ़, मोहनलाल खाण्डल नवलगढ़, वैद्य विश्वनाथ द्विवेदी पीलीभीत, इन्दुशेखर भट्ट भरतपुर, वैद्य स्वामीदत्ताजी आवरा, वैद्य त्र्यम्बकलाल देवजी भाई जोशी भड़ौच, अलीभाई एस० जीवाभाई बम्बई, वैद्य मानसेन पुष्पसेन बम्बई, वैद्य चञ्चल बहन देसाई बम्बई, स्वामी ब्रह्मानन्दजी डेरा बाबा-जयमलसिंह, वैद्य भिक्षालाल स्वामी नापासर, वैद्य श्री एच० सी० सत्यवादी खतौली, शिवशर्मा द्विवेदी अजमेर, हनुमत्प्रसादजी बीकानेर, वैद्यनाथ शर्मा जयपुर, मदनमोहन शर्मा भरतपुर, निरंजनानन्द अबोहर, कपिलदेव त्रिपाठी

पटना, आत्मारामजी मोघा, रामगोपालजी मथुरा, चक्रपाणि, शास्त्री मथुरा, ताराचन्द शास्त्री मथुरा, डा० कुन्दनलाल फरीदकोट, विश्वनाथ जोशी नवलगढ़, सीताराम मिश्र नवलगढ़, रामनिवास जोशी मलसीसर, भारद्वाज शास्त्री शाजापुर (म० भा०), वैद्य रामस्वरूपजी जीरा, वैद्य रामेश्वरराव हैदराबाद, डा० लक्ष्मीपति मद्रास, वैद्य कृष्णदत्त शास्त्री कुल्लू, मेघराज शर्मा जोधपुर, व्रजभूषणदत्त शामली, ओमप्रकाशजी अजमेर, आत्माराम शर्मा अजमेर, जगदीशप्रसाद जावरा, सुखानन्द शास्त्री जयपुर, वैद्य चिरन्जीव शर्मा खन्ना, श्री वामनराव दीनानाथ बम्बई, वैद्य प्रयागदत्तजी आगरा, वैद्य सोमेश्वर माया शंकर भट्ट बम्बई, वैद्य बालकृष्ण एम० दवे बम्बई, वैद्य रतिलाल हरिकृष्णदास बम्बई, वैद्य बाबूराम हापुड़, प्रभाकर मिश्र हापुड़, वैद्य यादवजी त्रिकमजी आचार्य बम्बई, लक्ष्मणस्वरूप भटनागर ग्वालियर, रुक्मणीदेवी मेहता ग्वालियर, सोनूबाई साठे इन्दौर, भालचन्द्र जोशी ग्वालियर, महादेव प्रसाद जबलपुर, शरदकुमार सहारनपुर, वैद्यराज देशराज देहली, रामगोपाल शास्त्री देहली, रघुवंश झा रांची, गणेशदेव वैद्य पटना, के० परमेश्वरम पिल्ले त्रिवेन्द्रम, डा० आशानन्द बम्बई, शिवदत्तजी अमृतसर, चन्द्रिका प्रसाद दीक्षित कानपुर, आर० एस० वेद पाठक बम्बई, घनश्याम शर्मा अलवर, नानकचन्दजी देहली, दुर्गाप्रसादजी जयपुर, श्रीधर मायाधारीजी शास्त्री अमृतसर, वैद्य गंगाप्रसाद शास्त्री बुलन्दशहर, कविराज दुर्गादत्त शर्मा जालंधर, वैद्य रामगोपाल बुलन्दशहर, क० रामेश्वरसिंह जालन्धर, वैद्य हरिदत्त शास्त्री जालन्धर, प्रेमलाल भटनागर देहली, किशोरीलाल पुष्करणा जालन्धर, ज्ञानचन्द जी जोशी अमृतसर, धर्मदत्त चौधरी खन्ना, प्रकाशनाथ तिवारी जालन्धर, दयाराम बम्बई, वैजनाथ कौशिक हिसार, मातृदत्त वैद्यराज हिसार, महावीरप्रसाद सिद्धमुख, रामजीलाल फीरोजाबाद, ईश्वरदत्तजी अमृतसर, रमेशचन्द्र व्यास अजमेर, नवीनचन्द्र जगराओं, विश्वम्भरदासजी सहारनपुर, वाचस्पति शर्मा मेरठ, उमादत्तजी पटियाला, उत्तमचन्दजी पटियाला, देवीदत्त वैद्य बहादुरगढ़, शिवशंकर पाण्डेय सागर, कविराज ओमप्रकाश देहली, स्वामी मनसाराम जी बूंदी, स्वामि भक्तिराम जी बीकानेर, चन्द्रमणि शर्मा सहारनपुर, शिवकुमार शर्मा वैद्य हिसार, महादेवप्रसाद पाठक इलाहाबाद, सत्यनारायण मिश्र कानपुर, कविराज दीनानाथ पठानकोट, सोमदेव शर्मा लखनऊ, पूर्णानन्द शास्त्री माधोपुर, वैद्य श्यामशरण शुक्ल संभल, रविदत्त शर्मा बुलन्दशहर, बलदेवसहायजी वैद्य अम्बाला, हरिवंशलाल चोपड़ा जालन्धर, श्री मलनारायण मिश्र कानपुर, दुर्गादत्त जी शास्त्री बनारस, शिवदत्त शुक्ल बनारस, मनमोहनलाल अलीगढ़, विश्वप्रिय शास्त्री भरतपुर,

मुन्नालाल वैद्य कटनी, पं० श्यामलाल पाठक दमोह, वैद्य व्रजनाथ शर्मा कलकत्ता, कमलाप्रसाद बिहार, पृथ्वीराज शास्त्री फूलेवाल, नारायणलाल तिवारी मथुरा, कृष्णदत्त वैद्य सहारनपुर, सुरेन्द्रबहादुर शास्त्री लश्कर, भगवानदास शास्त्री लश्कर, श्यामलाल नायक लश्कर, रामगोपाल शास्त्री झांसी, पं० मेलाराम रईस देहली, बनवारीलाल शर्मा झांसी, उमामहेश शर्मा मेरठ, सत्यव्रत प्रेमी मेरठ, लीलाधर शर्मा गाजियाबाद, लक्ष्मीनारायण जी गाजियाबाद, देवेन्द्र शर्मा गाजियाबाद, वैद्य भानुदत्त शर्मा जयपुर, वैद्य जसराज जोशी जोधपुर, मुन्शीलाल सिद्ध वैद्य मुरादाबाद, छोटेलाल जी वैद्य मेरठ, गंगाराम वैद्य मेरठ, स्वामी गंगानन्द वैद्य मेरठ, लक्ष्मीचन्द वैद्य मेरठ, रामगोपाल वैद्य मथुरा, विचित्रयोगी के० एन० कौशल्या, नाथूराम गंधी वैद्य झांसी, वैद्य छविदत्त जी अमृतसर, वैद्य मदनमोहन पाठक अमृतसर, नेत्रपाल शर्मा नई देहली, वैद्य किशोरीलाल फतेहगढ़, वैद्य रामप्रताप शर्मा सरहिन्द, प्यारेलाल शर्मा दुराहामण्डी, अम्बिकाचरण दीक्षित आगरा, वैद्य गुरुदत्त जी देहली, वैद्य पन्नालाल अलीगढ़, प्रभादेवी वैद्या मेरठ, वैद्य किशनचन्द धीमान जालंधर, गायत्रीदेवी वैद्या मेरठ, हरिदास वैद्य मारवाड़, वैद्य वासुदेव देहली, वैद्य धर्मदत्त जी दादरी, चन्द्रमणि शास्त्री दन्कौर, प्यारेलाल शर्मा बम्बई, श्री विप्रबन्धु एम० ए० अमृतसर, श्याम वैद्य भिवानी, वैद्य सिद्धिसागर ललितपुर, केशवप्रसाद देहली, कृष्ण गोपाल शास्त्री कोटा, अमरनाथ वैद्य देहली, अमरनाथ नागर नई देहली, नथमल शर्मा कलकत्ता, बालकृष्ण जी वैद्य बुरहानपुर, नाथूराम जी हकीम बुरहानपुर, विद्याभूषण जी एटा, मोहनकृष्ण शर्मा भिवानी, गंगाचरण शर्मा भिवानी, स्थानुदत्त शर्मा रोहतक, कृष्णदत्त शास्त्री अलीगढ़, हरिप्रसाद शर्मा अलीगढ़, राधावल्लभ सोहावल, भागीरथ स्वामी कलकत्ता, फतेहसिंहजी देहली, वैद्य युगलकिशोर शास्त्री कानपुर, क० मोहनलाल कानपुर, हरनाथ त्रिपाठी कानपुर, श्यामधर द्विवेदी कानपुर, श्री रूपनारायण कानपुर, श्री शम्भूनाथ शर्मा कानपुर, लक्ष्मणोपाध्याय चौमा, शिवदत्तजी वैद्य मेरठ, मुक्तिनाथ मिश्र आरा (विहार), रामदेव ओझा मुजफ्फरपुर, संपतलालजी वैद्य हाथरस, रामचन्द जैन मण्डला, वैद्य शिवदत्त शर्मा जयपुर, महादेवप्रसाद शास्त्री कानपुर, वैद्य नरेन्द्रनाथजी शामली, श्री कृपाराम स्वामी भिवानी, पी० एम० एम शर्मा त्रिचनापल्ली, वैद्य दयानिधि शर्मा मेरठ, वैद्या सरोजनी मेरठ, हरदर्शनलाल वैद्य मेरठ, हरनारायण वैद्य हाथरस, विष्णुदत्त वैद्य मेरठ, क० इन्द्रपालसिंह अलीगढ़, मोतीरामजी वैद्य पटियाला यूनीयन, पद्मनाभ शास्त्री बीकानेर, वैद्यराज बाबूराम पटियाला, शिवराम वैद्य शास्त्री सरहिन्द,

रामकुमार वैद्य शास्त्री सरहिन्द, रणछोड़प्रसाद व्यास जावरा, मुकुटबिहारी शर्मा कोटा, कौशल किशोराचार्य रिवाड़ी, क० प्रीतमसिंह देहली, वैद्य महेशदत्त शर्मा सरहिन्द, वैद्य किशनस्वरूप अलवर, चंद्रमणिप्रसाद रीवां, शिवचरण मेरठ, बनारसीदत्त शर्मा हिसार, कविराज दुर्गादत्त शर्मा जालंधर।